श्री चन्द्रर्षि महत्तर प्रणीत

पंचसंग्रह

[बंधहेतु-प्ररूपणा अधिकार]

(मूल, शब्दार्थ, विवेचन युक्त)

हिन्दी व्याख्याकार

श्रमणसूर्य प्रवर्तक मरुधरकेसरी

श्री मिश्रीमल जी महाराज

सम्प्रेरक

श्री सुकनमुनि

सम्पादक

देवकुमार जैन

प्रकाशक

आचार्य श्री रघुनाथ जैन शोध संस्थान, जोधपुर

- श्री चन्द्रर्षि महत्तर प्रणीत
  पचसग्रह (४)
  (बधहेतु-प्ररूपणा अधिकार)

- हिन्दी व्याख्याकार
  स्व० मरुधरकेसरी प्रवर्तक श्री मिश्रीमल जी महाराज

- सयोजक-सप्रेरक
  मरुधराभूषण श्री सुकनमुनि

- सम्पादक
  देवकुमार जैन

- प्राप्तिस्थान
  श्री मरुधरकेसरी साहित्य प्रकाशन समिति
  पीपलिया बाजार, ब्यावर (राजस्थान)

- प्रथमावृत्ति
  वि० स० २०४१, पौष, जनवरी १९८५

लागत से अल्पमूल्य १०/- दस रुपया सिर्फ

- मुद्रण
  श्रीचन्द सुराना 'सरस' के निदेशन मे
  एन० के० प्रिंटर्स, आगरा

प्रकाशकीय

जनदर्शन का मर्म समझना हो तो 'कर्मसिद्धान्त' को समझना अत्यावश्यक है। कर्मसिद्धान्त का सर्वांगीण तथा प्रामाणिक विवेचन 'कर्मग्रन्थ' (छह भाग) मे बहुत ही विशद रूप से हुआ है, जिनका प्रकाशन करने का गौरव हमारी समिति को प्राप्त हुआ। कर्मग्रन्थ के प्रकाशन से कर्मसाहित्य के जिज्ञासुओ को बहुत लाभ हुआ तथा अनेक क्षेत्रो से आज उनकी माग बराबर आ रही है।

कर्मग्रन्थ की भांति ही 'पचसग्रह' ग्रन्थ भी जैन कर्मसाहित्य मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमे भी विस्तार पूर्वक कर्म-सिद्धान्त के समस्त अगो का विवेचन है।

पूज्य गुरुदेव श्री मरुधरकेसरी मिश्रीमल जी महाराज जैनदर्शन के प्रौढ विद्वान और सुन्दर विवेचनकार थे। उनकी प्रतिभा अद्भुत थी, ज्ञान की तीव्र रुचि अनुकरणीय थी। समाज मे ज्ञान के प्रचार-प्रसार मे अत्यधिक रुचि रखते थे। यह गुरुदेवश्री के विद्यानुराग का प्रत्यक्ष उदाहरण है कि इतनी वृद्ध अवस्था मे भी पचसग्रह जैसे जटिल और विशाल ग्रन्थ की व्याख्या, विवेचन एव प्रकाशन का अद्भुत साहसिक निर्णय उन्होने किया और इस कार्य को सम्पन्न करने की समस्त व्यवस्था भी करवाई।

जैनदर्शन एव कर्मसिद्धान्त के विशिष्ट अभ्यासी श्री देवकुमार जी जैन ने गुरुदेवश्री के मार्गदर्शन मे इस ग्रन्थ का सम्पादन कर प्रस्तुत किया है। इसके प्रकाशन हेतु गुरुदेवश्री ने प्रसिद्ध साहित्यकार श्रीयुत श्रीचन्द जी सुराना को जिम्मेदारी सौंपी और वि० सं० २०३९ के आश्विन मास मे इसका प्रकाशन-मुद्रण प्रारम्भ कर दिया

गया। गुरुदेवश्री ने श्री सुराना जी को दायित्व सौंपते हुए फरमाया—'मेरे शरीर का कोई भरोसा नही है, इस कार्य को शीघ्र सम्पन्न कर लो।' उस समय यह बात सामान्य लग रही थी, किसे ज्ञात था कि गुरुदेवश्री हमे इतनी जल्दी छोडकर चले जायेगे। किंतु क्रूर काल की विडम्बना देखिये कि ग्रन्थ का प्रकाशन चालू ही हुआ था कि १७ जनवरी १९८४ को पूज्य गुरुदेव के आकस्मिक स्वर्गवास से सर्वत्र एक स्तब्धता व रिक्तता-सी छा गई। गुरुदेव का व्यापक प्रभाव समूचे सघ पर था और उनकी दिवगति से समूचा श्रमणसघ ही अपूरणीय क्षति अनुभव करने लगा।

पूज्य गुरुदेवश्री ने जिस महा काय ग्रन्थ पर इतना श्रम किया और जिसके प्रकाशन की भावना लिये ही चले गये, वह ग्रन्थ अब पूज्य गुरुदेवश्री के प्रधान शिष्य मरुधराभूषण श्री सुकनमुनि जी महाराज के मार्गदर्शन मे सम्पन्न हो रहा है, यह प्रसन्नता का विषय है। श्रीयुत सुराना जी एव श्री देवकुमार जी जैन इस ग्रन्थ के प्रकाशन-मुद्रण सम्बन्धी सभी दायित्व निभा रहे है और इसे शीघ्र ही पूर्ण कर पाठको के समक्ष रखेगे, यह दृढ विश्वास है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन मे श्रीमान् पुखराज जी ज्ञानचद जी मुणोत मु० रणसीगाँव, हाल मुकाम ताम्बवरम् ने इस प्रकाशन मे पूर्ण अर्थ-सहयोग प्रदान किया है, आपके अनुकरणीय सहयोग के प्रति हम सदा आभारी रहेगे।

आचार्य श्री रघुनाथ जैन शोध सस्थान अपने कार्यक्रम मे इस ग्रन्थ को प्राथमिकता देकर सम्पन्न करवाने मे प्रयत्नशील है।

आशा है जिज्ञासु पाठक लाभान्वित होंगे।

मन्त्री
आचार्य श्री रघुनाथ जैन शोध सस्थान
जोधपुर

आमुख

जनदर्शन के सम्पूर्ण चिन्तन, मनन और विवेचन का आधार आत्मा है। आत्मा स्वतन्त्र शक्ति है। अपने सुख-दु ख का निर्माता भी वही है और उसका फल-भोग करने वाला भी वही है। आत्मा स्वय मे अमूर्त है, परम विशुद्ध है, किन्तु वह शरीर के साथ मूर्तिमान वनकर अशुद्धदशा मे ससार मे परिभ्रमण कर रहा है। स्वय परम आनन्दस्वरूप होने पर भी सुख-दु ख के चक्र मे पिस रहा है। अजर-अमर होकर भी जन्म-मृत्यु के प्रवाह मे वह रहा है। आश्चर्य है कि जो आत्मा परम शक्तिसम्पन्न है, वही दीन-हीन, दु खी, दरिद्र के रूप मे ससार मे यातना और कष्ट भी भोग रहा है। इसका कारण क्या है ?

जैनदर्शन इस कारण की विवेचना करते हुए कहता है—आत्मा को ससार मे भटकाने वाला कर्म है। कर्म ही जन्म-मरण का मूल है—कम्म च जाई मरणस्स मूल। भगवान श्री महावीर का यह कथन अक्षरश सत्य है, तथ्य है। कर्म के कारण ही यह विश्व विविध विचित्र घटनाचक्रो मे प्रतिपल परिवर्तित हो रहा है। ईश्वरवादी दर्शनो ने इस विश्ववैचित्र्य एव सुख-दु ख का कारण जहाँ ईश्वर को माना है, वहाँ जैनदर्शन ने समस्त सुख-दु ख एव विश्ववैचित्र्य का कारण मूलत जीव एव उसका मुख्य सहायक कर्म माना है। कर्म स्वतन्त्र रूप से कोई शक्ति नही है, वह स्वय मे पुद्गल है, जड है। किन्तु राग-द्वेष-वशवर्ती आत्मा के द्वारा कर्म किये जाने पर वे इतने वलवान और शक्तिसम्पन्न वन जाते हैं कि कर्ता को भी अपने वन्वन मे वाध लेते हैं। मालिक को भी नौकर की तरह नचाते हैं। यह कर्म की वडी विचित्र शक्ति है। हमारे जीवन और जगत के समस्त परिवर्तनो का

यह मुख्य बीज कर्म क्या है ? इसका स्वरूप क्या है ? इसके विविध परिणाम कैसे होते है ? यह बडा ही गम्भीर विषय है। जैनदर्शन मे कर्म का बहुत ही विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। कर्म का सूक्ष्मातिसूक्ष्म और अत्यन्त गहन विवेचन जैन आगमो मे और उत्तरवर्ती ग्रन्थो मे प्राप्त होता है। वह प्राकृत एव सस्कृत भाषा मे होने के कारण विद्वद्भोग्य तो है, पर साधारण जिज्ञासु के लिए दुर्बोध है। थोकडो मे कर्मसिद्धान्त के विविध स्वरूप का वर्णन प्राचीन आचार्यों ने गूँथा है, कण्ठस्थ करने पर साधारण तत्त्व-जिज्ञासु के लिए वह अच्छा ज्ञानदायक सिद्ध होता है।

कर्मसिद्धान्त के प्राचीन ग्रन्थो मे कर्मग्रन्थ और पचसंग्रह इन दोनो ग्रन्थो का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनमे जैनदर्शन-सम्मत समस्त कर्मवाद, गुणस्थान, मार्गणा, जीव, अजीव के भेद-प्रभेद आदि समस्त जैनदर्शन का विवेचन प्रस्तुत कर दिया गया है। ग्रन्थ जटिल प्राकृत भाषा मे हैं और इनकी सस्कृत मे अनेक टीकाएँ भी प्रसिद्ध हैं। गुजराती मे भी इनका विवेचन काफी प्रसिद्ध है। हिन्दी भाषा मे कर्मग्रन्थ के छह भागो का विवेचन कुछ वर्ष पूर्व ही परम श्रद्धेय गुरुदेवश्री के मार्गदर्शन मे प्रकाशित हो चुका है, सर्वत्र उनका स्वागत हुआ। पूज्य गुरुदेव श्री के मार्गदर्शन मे पचसग्रह (दस भाग) का विवेचन भी हिन्दी भाषा मे तैयार हो गया और प्रकाशन भी प्रारम्भ हो गया, किन्तु उनके समक्ष एक भी नही आ सका, यह कमी मेरे मन को खटकती रही, किन्तु निरुपाय ! अब गुरुदेवश्री की भावना के अनुसार ग्रन्थ पाठको के समक्ष प्रस्तुत है, आशा है इससे सभी लाभान्वित होगे।

—सुकनमुनि

श्रीमद्देवेन्द्रसूरि विरचित कर्मग्रन्थो का सम्पादन करने के सन्दर्भ मे जैन कर्मसाहित्य के विभिन्न ग्रन्थो के अवलोकन करने का प्रसग आया। इन ग्रन्थो मे श्रीमदाचार्य चन्द्रर्षि महत्तरकृत 'पचसग्रह' प्रमुख है।

कर्मग्रन्थो के सम्पादन के समय यह विचार आया कि पचसग्रह को भी सर्वजन सुलभ, पठनीय बनाया जाये। अन्य कार्यों मे लगे रहने से तत्काल तो कार्य प्रारम्भ नही किया जा सका। परन्तु विचार तो था ही और पाली (मारवाड) मे विराजित पूज्य गुरुदेव मरुधरकेसरी, श्रमणसूर्य श्री मिश्रीमल जी म सा की सेवा मे उपस्थित हुआ एव निवेदन किया—

भन्ते ! कर्मग्रन्थो का प्रकाशन तो हो चुका है, अब इसी क्रम मे पचसग्रह को भी प्रकाशित कराया जाये।

गुरुदेव ने फरमाया विचार प्रशस्त है और चाहता भी हूँ कि ऐसे ग्रन्थ प्रकाशित हो, मानसिक उत्साह होते हुए भी शारीरिक स्थिति साथ नही दे पाती है। तब मैने कहा—आप आदेश दीजिये। कार्य करना ही है तो आपके आशीर्वाद से सम्पन्न होगा ही, आपश्री की प्रेरणा एव मार्गदर्शन से कार्य शीघ्र ही सम्पन्न होगा।

'तथास्तु' के मागलिक के साथ ग्रन्थ की गुरुता और गम्भीरता को सुगम बनाने हेतु अपेक्षित मानसिक श्रम को नियोजित करके कार्य प्रारम्भ कर दिया। 'शनै कथा' की गति से करते-करते आधे से अधिक ग्रन्थ गुरुदेव के बगडी सज्जनपुर चातुर्मास तक तैयार करके सेवा मे उपस्थित हुआ। गुरुदेवश्री ने प्रमोदभाव व्यक्त कर फरमाया—चरैवैति-चरैवैति।

इसी बीच शिवशर्मसूरि विरचित 'कम्मपयडी' (कर्मप्रकृति) ग्रन्थ के सम्पादन का अवसर मिला। इसका लाभ यह हुआ कि बहुत से जटिल माने जाने वाले स्थलो का समाधान सुगमता से होता गया

अर्थबोध की सुगमता के लिए ग्रन्थ के सम्पादन मे पहले मूलगाथा और यथाक्रम शब्दार्थ, गाथार्थ के पश्चात् विशेषार्थ के रूप मे गाथा के हार्द को स्पष्ट किया है। यथास्थान ग्रन्थान्तरो, मतान्तरो के मन्तव्यो का टिप्पण के रूप मे उल्लेख किया है।

इस समस्त कार्य की सम्पन्नता पूज्य गुरुदेव के वरद आशीर्वादो का सुफल है। एतदर्थ कृतज्ञ हूँ। साथ ही मरुधरारत्न श्री रजतमुनि जी एव मरुधराभूषण श्री सुकनमुनिजी का हार्दिक आभार मानता हूँ कि कार्य की पूर्णता के लिए प्रतिसमय प्रोत्साहन एव प्रेरणा का पाथेय प्रदान किया।

ग्रन्थ की मूल प्रति की प्राप्ति के लिए श्री लालभाई दलपतभाई सस्कृति विद्यामन्दिर अहमदाबाद के निदेशक एव साहित्यानुरागी श्री दलसुखभाई मालवणिया का सस्नेह आभारी हूँ। साथ ही वे सभी धन्यवादार्ह है, जिन्होने किसी न किसी रूप मे अपना-अपना सहयोग दिया है।

ग्रन्थ के विवेचन मे पूरी सावधानी रखी है और ध्यान रखा है कि सैद्धान्तिक भूल, अस्पष्टता आदि न रहे एव अन्यथा प्ररूपणा भी न हो जाये। फिर भी यदि कही चूक रह गई हो तो विद्वान पाठको से निवेदन है कि प्रमादजन्य स्खलना मानकर त्रुटि का सशोधन, परिमार्जन करते हुए सूचित करे। उनका प्रयास मुझे ज्ञानवृद्धि मे सहायक होगा। इसी अनुग्रह के लिए सानुरोध आग्रह है।

भावना तो यही थी कि पूज्य गुरुदेव अपनी कृति का अवलोकन करते, लेकिन सम्भव नही हो सका। अत 'कालाय तस्मै नम' के साथ-साथ विनम्र श्रद्धाजलि के रूप मे—

त्वदीय वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्प्यते ।

के अनुसार उन्ही को सादर समर्पित है।

खजाची मोहल्ला
वीकानेर, ३३४००१

विनीत
देवकुमार जैन

श्रमणसूर्य प्रवर्तक गुरुदेव श्री मिश्रीमल जी महाराज — विद्याभिलाषी श्री सुकन मुनि

श्रमणसघ के भीष्म-पितामह

श्रमणसूर्य स्व. गुरुदेव श्री मिश्रीमल जी महाराज

स्थानकवासी जैन परम्परा के ५०० वर्षो के इतिहास मे कुछ ही ऐसे गिने-चुने महापुरुष हुए है जिनका विराट् व्यक्तित्व अनन्त असीम नभोमण्डल की भाति व्यापक और सीमातीत रहा हो। जिनके उपकारो से न सिर्फ स्थानकवासी जैन, न सिर्फ श्वेताम्बर जैन, न सिर्फ जैन किन्तु जैन-अजैन, बालक-वृद्ध, नारी-पुरुष, श्रमण-श्रमणी सभी उपकृत हुए हैं और सब उस महान् विराट व्यक्तित्व की शीतल छाया से लाभान्वित भी हुए है। ऐसे ही एक आकाशीय व्यक्तित्व का नाम है— श्रमण-सूर्य प्रवर्तक मरुधरकेसरी श्री मिश्रीमल जी महाराज।

पता नही वे पूर्वजन्म की क्या अखूट पुण्याई लेकर आये थे कि बाल-सूर्य की भाति निरन्तर तेज-प्रताप-प्रभाव-यश और सफलता की तेजस्विता, प्रभास्वरता से बढते ही गये, किन्तु उनके जीवन की कुछ विलक्षणता यही है कि सूर्य मध्याह्न बाद क्षीण होने लगता है, किन्तु यह श्रमणसूर्य जीवन के मध्याह्नोत्तर काल मे अधिक अधिक दीप्त होता रहा, ज्यो-ज्यो यौवन की नदी बुढापे के सागर की ओर बढती गई त्यो-त्यो उसका प्रवाह तेज होता रहा, उसकी धारा विशाल और विशालतम होती गई, सीमाए व्यापक बनती गई, प्रभाव-प्रवाह सौ सौ धाराए बनकर गाव-नगर-बन-उपवन सभी को तृप्त-परितृप्त करता गया। यह सूर्य डूबने की अतिम घडी, अतिम क्षण तक तेज से दीप्त रहा, प्रभाव से प्रचण्ड रहा और उसकी किरणो का विस्तार अनन्त असीम गगन के दिक्कोणो को छूता रहा।

जैसे लड्डू का प्रत्येक दाना मीठा होता है, अंगूर का प्रत्येक अश मधुर होता है, इसी प्रकार गुरुदेव श्री मिश्रीमल जी महाराज का

जीवन, उनक जीवन का प्रत्येक क्षण, उनकी जीवनधारा का प्रत्येक जलबिन्दु मधुर मधुरतम जीवनदायी रहा । उनके जीवन-सागर की गहराई मे उतरकर गोता लगाने से गुणो की विविध बहुमूल्य मणिया हाथ लगती है तो अनुभव होता है, मानव जीवन का ऐसा कौन सा गुण है जो इस महापुरुप मे नही था। उदारता, सहिष्णुता, दयालुता, प्रभावशीलता, समता, क्षमता, गुणज्ञता, विद्वत्ता, कवित्वशक्ति, प्रवचनशक्ति, अदम्य साहस, अद्भुत नेतृत्वक्षमता, सघ-समाज की सरक्षणशीलता, युगचेतना को धर्म का नया बोध देने की कुशलता, न जाने कितने उदात्त गुण व्यक्तित्व सागर मे छिपे थे। उनकी गणना करना असभव नही तो दुसभव अवश्य ही है । महान तार्किक आचार्य सिद्धसेन के शब्दो मे—

> कल्पान्तवान्तपयस प्रकटोऽपि यस्मान्
> मीयेत केन जलधेर्नंनु रत्नराशे

कल्पान्तकाल की पवन से उत्प्रेरित, उचाले खाकर बाहर भूमि पर गिरी समुद्र की असीम अगणित मणिया सामने दीखती जरूर है, किन्तु कोई उनकी गणना नही कर सकता, इसी प्रकार महापुरुषो के गुण भी दीखते हुए भी गिनती से बाहर होते है।

जीवन रेखाए

श्रद्धेय गुरुदेव का जन्म वि० स० १९४८ श्रावण शुक्ला चतुर्दशी को पाली शहर मे हुआ।

पाच वर्प की आयु मे ही माता का वियोग हो गया। १३ वर्ष की अवस्था मे भयकर वीमारी का आक्रमण हुआ। उस समय श्रद्धेय गुरुदेव श्री मानमलजी म एव स्व गुरुदेव श्री बुधमलजी म ने मगलपाठ सुनाया और चमत्कारिक प्रभाव हुआ, आप शीघ्र ही स्वस्थ हो गये। काल का ग्रास वनते-वनते वच गये।

गुरुदेव के इस अद्भुत प्रभाव को देखकर उनके प्रति हृदय की असीम श्रद्धा उमड आई। उनका शिष्य वनने की तीव्र उत्कठा जग

पडी। इस बीच गुरुदेवश्री मानमलजी म का वि सं १९७५, माघ वदी ७ को जोधपुर मे स्वर्गवास हो गया। वि स १९७५ अक्षय तृतीया को पूज्य स्वामी श्री बुधमलजी महाराज के कर-कमलो से आपने दीक्षा-रत्न प्राप्त किया।

आपकी बुद्धि बडी विचक्षण थी। प्रतिभा और स्मरणशक्ति अद्भुत थी। छोटी उम्र मे ही आगम, थोकडे, सस्कृत, प्राकृत, गणित, ज्योतिष, काव्य, छन्द, अलकार, व्याकरण आदि विविध विषयो का आधिकारिक ज्ञान प्राप्त कर लिया। प्रवचनशैली की ओजस्विता और प्रभावकता देखकर लोग आपश्री के प्रति आकृष्ट होते और यो सहज ही आपका वर्चस्व, तेजस्व बढता गया।

वि स १९८५ पौष वदि प्रतिपदा को गुरुदेव श्री बुधमलजी म का स्वर्गवास हो गया। अब तो पूज्य रघुनाथजी महाराज की सप्रदाय का समस्त दायित्व आपश्री के कधो पर आ गिरा। किन्तु आपश्री तो सर्वथा सुयोग्य थे। गुरु से प्राप्त सप्रदाय-परम्परा को सदा विकासोन्मुख और प्रभावनापूर्ण ही बनाते रहे। इस दृष्टि से स्थानागसूत्र-वर्णित चार शिष्यो (पुत्रो) मे आपको अभिजात (श्रेष्ठतम) शिष्य ही कहा जायेगा, जो प्राप्त ऋद्धि-वैभव को दिन दूना रात चौगुना बढाता रहता है।

वि स १९९३, लोकाशाह जयन्ती के अवसर पर आपश्री को मरुधरकेसरी पद से विभूषित किया गया। वास्तव मे ही आपकी निर्भीकता और क्रान्तिकारी सिह गर्जनाएँ इस पद की शोभा के अनुरूप ही थी।

स्थानकवासी जैन समाज की एकता और सगठन के लिए आपश्री के भगीरथ प्रयास श्रमणसघ के इतिहास मे सदा अमर रहेगे। समय-समय पर टूटती कडिया जोडना, सघ पर आये सकटो का दूरदर्शिता के साथ निवारण करना, सत-सतियो की आन्तरिक व्यवस्था को सुधारना, भीतर मे उठती मतभेद की कटुता को दूर करना—यह आपश्री की ही क्षमता का नमूना है कि बृहत् श्रमणसघ का निर्माण हुआ, बिखरे घटक एक हो गये।

किन्तु यह बात स्पष्ट है कि आपने सगठन और एकता के साथ कभी सौदेबाजी नही की। स्वय सब कुछ होते हुए भी सदा ही पद-मोह से दूर रहे। श्रमणसघ का पदवी-रहित नेतृत्व आपश्री ने किया और जब सभी का पद-ग्रहण के लिए आग्रह हुआ तो आपश्री ने उस नेतृत्व चादर को अपने हाथो से आचार्यसम्राट (उस समय उपाचार्य) श्री आनन्दऋषिजी महाराज को ओढा दी। यह है आपश्री की त्याग व निस्पृहता की वृत्ति।

कठोर सत्य सदा कटु होता है। आपश्री प्रारम्भ से ही निर्भीक वक्ता, स्पष्ट चिन्तक और स्पष्टवादी रहे है। सत्य और नियम के साथ आपने कभी समझौता नहीं किया, भले ही वर्षो से साथ रहे अपने कहलाने वाले साथी भी साथ छोड कर चले गये, पर आपने सदा ही सगठन और सत्य का पक्ष लिया। एकता के लिए आपश्री के अगणित बलिदान श्रमणसघ के गौरव को युग-युग तक बढाते रहेगे।

सगठन के बाद आपश्री की अभिरुचि काव्य, साहित्य, शिक्षा और सेवा के क्षेत्र मे बढती रही है। आपश्री की बहुमुखी प्रतिभा से प्रसूत सैकडो काव्य, हजारो पद-छन्द आज सरस्वती के शृगार बने हुए हैं। जैन राम यशोरसायन, जैन पाडव यशोरसायन जैसे महाकाव्यो की रचना, हजारो कवित्त, स्तवन की सर्जना आपकी काव्यप्रतिभा के बेजोड उदाहरण है। आपश्री की आशुकवि-रत्न की पदवी स्वय मे सार्थक है।

कर्मग्रन्थ (छह भाग) जैसे विशाल गुरु गम्भीर ग्रन्थ पर आपश्री के निदेशन मे व्याख्या, विवेचन और प्रकाशन हुआ जो स्वय मे ही एक अनूठा कार्य है। आज जैनदर्शन और कर्मसिद्धान्त के सैकडो अध्येता उनसे लाभ उठा रहे है। आपश्री के सान्निध्य मे ही पचसग्रह (दस भाग) जैसे विशालकाय कर्मसिद्धान्त के अतीव गहन ग्रन्थ का सम्पादन विवेचन और प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है, जो वर्तमान मे आपश्री की अनुपस्थिति मे आपश्री के सुयोग्य शिष्य श्री सुकनमुनि जी के निदेशन मे सम्पन्न हो रहा है।

प्रवचन, जैन उपन्यास आदि की आपश्री की पुस्तके भी अत्यधिक लोकप्रिय हुई है। लगभग ६-७ हजार पृष्ठ से अधिक परिमाण मे आप श्री का साहित्य आका जाता है।

शिक्षा क्षेत्र मे आपश्री की दूरर्दाशता जैन समाज के लिए वरदान-स्वरूप सिद्ध हुई है। जिस प्रकार महामना मालवीय जी ने भारतीय शिक्षा क्षेत्र मे एक नई क्राति—नया दिशादर्शन देकर कुछ अमर स्थापनाएँ की है, स्थानकवासी जैन समाज के शिक्षा क्षेत्र मे आपको भी स्थानकवासी जगत का 'मालवीय' कह सकते हैं। लोकाशाह गुरुकुल (सादडी), राणावास की शिक्षा सस्थाएँ, जयतारण आदि के छात्रावास तथा अनेक स्थानो पर स्थापित पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकागन सस्थाएँ शिक्षा और साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे आपश्री की अमर कीर्ति गाथा गा रही है।

लोक-सेवा के क्षेत्र मे भी मरुधरकेसरी जी महाराज भामाशाह और खेमा देदराणी की शुभ परम्पराओ को जीवित रखे हुए थे। फर्क यही है कि वे स्वय धनपति थे, अपने धन को दान देकर उन्होने राष्ट्र एव समाज-सेवा की, आप एक अकिंचन श्रमण थे, अत आपश्री ने धनपतियो को प्रेरणा, कर्तव्य-बोध और मार्गदर्शन देकर मरुधरा के गाव-गाव, नगर-नगर मे सेवाभावी सस्थाओ का, सेवात्मक प्रवृत्तियो का व्यापक जाल बिछा दिया।

आपश्री की उदारता की गाथा भी सैकडो व्यक्तियो के मुख से सुनी जा सकती है। किन्ही भी सत, सतियो को किसी वस्तु की, उपकरण आदि की आवश्यकता होती तो आपश्री निस्सकोच, बिना किसी भेदभाव के उनको सहयोग प्रदान करते और अनुकूल साधन-सामग्री की व्यवस्था कराते। साथ ही जहाँ भी पधारते वहाँ कोई रुग्ण, असहाय, अपाहिज, जरूरतमन्द गृहस्थ भी (भले ही वह किसी वर्ण, समाज का हो) आपश्री के चरणो मे पहुच जाता तो आपश्री उसकी दयनीयता से द्रवित हो जाते और तत्काल समाज के समर्थ व्यक्तियो द्वारा उनकी उपयुक्त व्यवस्था करा देते। इसी कारण गाव-गाव मे

किसान, कुम्हार, ब्राह्मण, सुनार, माली आदि सभी कौम के व्यक्ति आपश्री को राजा कर्ण का अवतार मानने लग गये और आपश्री के प्रति श्रद्धावनत रहते। यही है सच्चे संत की पहचान, जो किसी भी भेदभाव के बिना मानव मात्र की सेवा मे रुचि रखे, जीव मात्र के प्रति करुणाशील रहे।

इस प्रकार त्याग, सेवा, सगठन, साहित्य आदि विविध क्षेत्रो मे सतत प्रवाहशील उस अजर-अमर यशोधारा मे अवगाहन करने से हमे मरुधरकेसरी जी म० के व्यापक व्यक्तित्व की स्पष्ट अनुभूतिया होती है कि कितना विराट्, उदार, व्यापक और महान था वह व्यक्तित्व !

श्रमणसघ और मरुधरा के उस महान सत की छत्र-छाया की हमे आज बहुत अधिक आवश्यकता थी किन्तु भाग्य की विडम्बना ही है कि विगत वर्ष १७ जनवरी, १९८४, वि० स० २०४०, पौष सुदि १४, मगलवार को वह दिव्यज्योति अपना प्रकाश विकीर्ण करती हुई इस धराधाम से ऊपर उठकर अनन्त असीम मे लीन हो गयी थी।

पूज्य मरुधरकेसरी जी के स्वर्गवास का उस दिन का दृश्य, शव-यात्रा मे उपस्थित अगणित जनसमुद्र का चित्र आज भी लोगो की स्मृति मे है और शायद शताब्दियो तक इतिहास का कीर्तिमान बनकर रहेगा। जैतारण के इतिहास मे क्या, सम्भवत राजस्थान के इतिहास मे ही किसी सन्त का महाप्रयाण और उस पर इतना अपार जन-समूह (सभी कौमो और सभी वर्ण के) उपस्थित होना यह पहली घटना थी। कहते है, लगभग ७५ हजार की अपार जनमेदिनी से सकुल शव-यात्रा का वह जलूस लगभग ३ किलोमीटर लम्बा था, जिसमे लगभग २० हजार तो आस-पास व गावो के किसान वधु ही थे, जो अपने ट्रेक्टरो, बैलगाडियो आदि पर चढकर आये थे। इस प्रकार उस महा-पुरुप का जीवन जितना व्यापक और विराट रहा, उससे भी अधिक व्यापक और श्रद्धा परिपूर्ण रहा उसका महाप्रयाण !

उस दिव्य पुरुप के श्रीचरणो मे शत शत वन्दन !

—श्रीचन्द सुराना 'सरस,

सामायिक, तथा चउविहार करते है। चतुर्दशी का उपवास तथा मासिक आयम्बिल भी करते है। आपने अनेक अठाइयाँ, पचाले, तेले आदि तपस्या भी की है। ताम्बरम् मे जैन स्थानक एव पाठशाला के निर्माण मे आपने तन-मन-धन से सहयोग प्रदान किया। आप एस० एस० जैन एसोसियेशन ताम्बरम् के कोपाध्यक्ष हैं।

आपके सुपुत्र श्रीमान ज्ञानचन्द जी एक उत्साही कर्तव्यनिष्ठ युवक हैं। माता-पिता के भक्त तथा गुरुजनो के प्रति असीम आस्था रखते हुए, सामाजिक तथा राष्ट्रीय सेवा कार्यो मे सदा सहयोग प्रदान करते है। श्रीमान ज्ञानचन्दजी की धर्मपत्नी सौ० खमाबाई (सुपुत्री श्रीमान पुखराज जी कटारिया राणावास) भी आपके सभी कार्यो मे भरपूर सहयोग करती है।

इस प्रकार यह भाग्यशाली मुणोत परिवार स्व० गुरुदेव श्री मरुधर केशरी जी महाराज के प्रति सदा से असीम आस्थाशील रहा है। विगत मेडता (वि० स० २०३९) चातुर्मास मे श्री सूर्य मुनिजी की दीक्षा प्रसग(आसोज सुदी १०)पर श्रीमान पुखराज जी ने गुरुदेव की उम्र के वर्षो जितनी विपुल धन राशि पच सग्रह प्रकाशन मे प्रदान करने की घोषणा की। इतनी उदारता के साथ सत् साहित्य के प्रचार-प्रसार मे सास्कृतिक रुचि का यह उदाहरण वास्तव मे ही अनुकरणीय व प्रशसनीय है। श्रीमान ज्ञानचन्द जी मुणोत की उदारता, सज्जनता और दानशीलता वस्तुत आज के युवक समाज के समक्ष एक प्रेरणा प्रकाश है।

हम आपके उदार सहयोग के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हुए आपके समस्त परिवार की सुख-समृद्धि की शुभ कामना करते है। आप इसी प्रकार जिनशासन की प्रभावना करते रहे—यही मगल कामना है।

मन्त्री—
पूज्य श्री रघुनाथ जैन शोध सस्थान
जोधपुर

सौ० रुकमाबाई पुखराजजी मुणोत श्रीमान पुखराजजी मुणोत

इन सब प्रश्नो मे भी मुख्य है बध के कारणो का परिज्ञान होना। क्योकि जब तक बध के कारणो की स्पष्ट रूपरेखा ज्ञात नही हो जाती है तब तक सहज रूप मे अन्य प्रश्नो का उत्तर प्राप्त नही किया जा सकता है। अतएव उन्ही की यहाँ कुछ चर्चा करते है।

ऊपर जीव की जिन दो अवस्थाओ का उल्लेख किया है, उनमे बद्ध प्रथम है और मुक्त तदुत्तरवर्ती—द्वितीय। क्योकि जो बद्ध होगा, वही मुक्त होता है। बद्ध का अपर नाम ससारी है। इसी दृष्टि से जैनदर्शन मे जीवो के ससारी और मुक्त ये दो भेद किये है। जो चतुर्गति और ८४ लाख योनियो मे परिभ्रमण करता है, उसे ससारी और ससार से मुक्त हो गया, जन्म-मरण की परम्परा एव उस परम्परा के कारणो से नि शेषरूपेण छूट गया, उसे मुक्त कहते हैं। ये दोनो भेद अवस्थाकृत होते है। पहले जीव ससारी होता है और जब वह प्रयत्नपूर्वक ससार का अन्त कर देता है, तब वही मुक्त हो जाता है। ऐसा कभी सम्भव नही है और न होता है कि जो पूर्व मे मुक्त है वही बद्ध—ससारी हो जाये। मुक्त होने के बाद जीव पुन ससार मे नही आता है। क्योकि उस समय ससार के कारणो का अभाव होने से उसमे ऐसी योग्यता ही नही रहती है, जिससे वह पुन ससार के कारण–कर्मो का बध कर सके।

कर्मबध की योग्यता जीव मे तब तक रहती है जब तक उसमे मिथ्यात्व (अतत्त्व श्रद्धा या तत्त्वरुचि का अभाव), अविरति (त्याग रूप परिणति का अभाव), प्रमाद (आलस्य, अनवधानता), कषाय (क्रोधादि भाव) और योग (मन, वचन और काय का व्यापार—परिस्पन्दन—प्रवृत्ति) है। इसीलिए इनको कर्मबध के हेतु कहा है। जब तक इनका सद्भाव पाया जाता है, तभी तक कर्मबंध होता है। इन हेतुओ के लिए यह जानना चाहिए कि पूर्व का हेतु होने पर उसके उत्तरवर्ती सभी हेतु रहेगे एव तदनुरूप कर्मबध मे सघनता होगी, लेकिन उत्तर के हेतु होने पर पूर्ववर्ती हेतु का अस्तित्व कादचित्क है और इन सबका अभाव हो जाने पर जीव मुक्त हो जाता है। ये मिथ्यात्व आदि जीव

के वे परिणाम हैं जो बद्ध दशा मे होते है। अबद्ध/मुक्त जीव मे इनका सद्भाव नही पाया जाता है। इससे कर्मबध और मिथ्यात्व आदि का कार्य-कारणभाव सिद्ध होता है कि बद्ध जीव के कर्मो का निमित्त पाकर मिथ्यात्व आदि होते है और मिथ्यात्व आदि के निमित्त से कर्मबध होता है। इसी भाव को स्पष्ट करते हुए 'समय प्राभृत' मे कहा है—

जीव परिणाम हेदु कम्मत्त पुग्गला परिणमति।
पुग्गलकम्मणिमित्त तहेव जीवोवि परिणमई॥

अर्थात्—जीव के मिथ्यात्व आदि परिणामो का निमित्त पाकर पुद्गलो का कर्मरूप परिणमन होता है और उन पुद्गल कर्मो के निमित्त से जीव भी मिथ्यात्व आदि रूप परिणमता है।

कर्मवध और मिथ्यात्व आदि की यह परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है। जिसको शास्त्रो मे बीज और वृक्ष के दृष्टान्त से स्पष्ट किया है। इस परम्परा का अन्त किया जा सकता है किन्तु प्रारम्भ नही। इसी से व्यक्ति की अपेक्षा मुक्ति को सादि और ससार को अनादि कहा है।

जैनदर्शन मे द्रव्यकर्म और भावकर्म के रूप मे कर्म के जो दो मुख्य भेद किये है, वे जाति की अपेक्षा से नही है, किन्तु कार्य-कारण-भाव की अपेक्षा से किये है। जैसे मिथ्यात्व आदि भावकर्म ज्ञाना-वरणादिरूप द्रव्यकर्मो को आत्मा के साथ सवद्ध कराने के कारण है और द्रव्यकर्म कार्य। इसी प्रकार द्रव्यकर्म भी जीव मे वैसी योग्यता उत्पन्न करने के कारण बनते है, जिसमे जीव की मिथ्यात्वादि रूप मे परिणति हो। इस प्रकार से द्रव्यकर्म मे कारण और भावकर्म मे कार्य-रूपता स्पष्ट हो जाती है।

द्रव्यकर्म पौद्गलिक है और पुद्गल अपनी स्निग्ध-रूक्षरूप श्लेष्म-योग्यता के द्वारा सजातीय पुद्गलो से संवद्ध होते रहते हैं। उनमे यह जुडने-विछुडने की प्रक्रिया सहज रूप से अनवरत चलती रहती है,

किन्तु पर-विजातीय पदार्थ से जाकर स्वयमेव जुड जायें, ऐसी योग्यता उनमे नही है। यदि उनको पर-विजातीय पदार्थ से जुडना है और जब उनका पर-विजातीय पदार्थ से सम्बन्ध होगा, तब उस पर-पदार्थ मे भी वैसी योग्यता होना आवश्यक है जो अपने से विरुद्ध गुणधर्म वाले पदार्थ को स्वसबद्ध कर सके। जीव के लिए कर्मपुद्गल विजातीय—पर है। उनको अपने साथ जोडने मे स्वयोग्यता कार्यकारी होगी। इसीलिए कर्मबध मे मिथ्यात्व आदि की कारणरूप मे मुख्यता है। विना इन मिथ्यात्व आदि के कार्मण वर्गणा के पुद्गल कर्मरूपता को प्राप्त नही हो सकते है। इसीलिए कर्मबध मे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग इन पाच को कारणरूप मे माना है। लेकिन जब हम सक्षेप और विस्तार दृष्टि से इन कारणो का विचार करते है तो इनमे से बध के प्रति योग और कषाय की प्रधानता है। आगमो मे योग को गरम लोहे की और कषाय को गोद की उपमा दी है। जिस प्रकार गरम लोहे को पानी मे डालने पर वह चारो ओर से पानी को खीचता है, ठीक यही स्वभाव योग का है और जिस प्रकार गोद के कारण एक कागज दूसरे कागज से चिपक जाता है, यही स्वभाव कषाय का है। योग के कारण कर्म-परमाणुओ का आस्रव होता है और कषाय के कारण वे बध जाते है। इसीलिए कर्मबध हेतु पाच होते हुए भी उनमे योग और कषाय की प्रधानता है। प्रकृति आदि चारो प्रकार के बध के लिए इन दो का सद्भाव अनिवार्य है। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जब गुणस्थान क्रमारोहण के द्वारा आत्मा की स्वभावोन्मुखी ऊर्ध्वीकरण की अवस्थाओ का ज्ञान कराया जाता है एव कर्म के अवान्तर भेदो मे से कितनी कर्मप्रकृतियाँ किस वधहेतु से बँधती है, इत्यादि रूप मे कर्मबध के सामान्य बधहेतुओ का वर्गीकरण किया जाता है, तव वे पाच प्राप्त होते है। इस प्रकार आपेक्षिक दृष्टियो से कर्मवध के हेतुओ की सख्या मे भिन्नता रहने पर भी आशय मे कोई अन्तर नही है।

ये कर्मवध के सामान्य हेतु है, यानि इनसे सभी प्रकार के शुभ-

अशुभ विपाकोदय वाले कर्मों का समान रूप से बध होता है। क्योकि इन सबका साकल की कडियो की तरह एक दूसरे से परस्पर सम्बन्ध जुडा हुआ है। अतएव जब एक मे प्रतिक्रिया होती है तब अन्यो मे भी परिस्पन्दन होता है और उनमे जिस प्रकार का परिस्पन्दन होता है, तदनुरूप कार्मण वर्गणाये कर्मरूप से परिणत हो जीव प्रदेशो के साथ नीर-क्षीरवत् जुडती जाती है। इन सामान्य कारणो के साथ-साथ विशेष कारण भी है, जो तत्तत् कर्म के बंध मे मुख्य रूप से एव इतर के बध मे गौणरूप से सहकारी होते है। लेकिन वे विशेष कारण इन सामान्य कारणो से स्वतन्त्र नही हैं। उन्हे सामान्य कारणो का सहयोग अपेक्षित है। बध के सामान्य कारणो के सद्भाव रहने तक विशेष कारण कार्यकारी है, अन्यथा अकिंचित्कर है।

इन सामान्य बधहेतुओ के भिन्न-भिन्न प्रकार से किये जाने वाले विकल्प सकारण हैं। क्योकि जिन सामान्य बधहेतुओ के द्वारा कोई एक जीव किसी कर्म का बध करता है, उसी प्रकार मे उन्ही बध-हेतुओ के रहते दूसरा जीव वैसा बध नही करता है तथा जिस सामग्री को प्राप्त करके एक जीव स्वबद्ध कर्म का वेदन करता है, उसी प्रकार की सामग्री के रहते या उसे प्राप्त करके सभी समान कर्मबधक जीवो को वैसा ही अनुभव करना चाहिये, किन्तु वैसा दिखता नही है। इसके लिए हमे ससारस्थ जीव मात्र मे व्याप्त विचित्रताओ एव विषमताओ पर दृष्टिपात करना होगा।

हम अपने आस-पास देखते है अथवा जहाँ तक हमारी दृष्टि जाती है तो स्पष्ट दिखता है कि सामान्य से सभी जीवो के शरीर, इन्द्रियाँ आदि के होने पर भी उनकी आकृतियाँ समान नही हैं, अपितु इतनी भिन्नता है कि गणना नही की जा सकती है। एक की शरीर-रचना का दूसरे की रचना मे मेल नही खाता है। उदाहरणार्थ, हम अपने मनुष्य-वर्ग को देख ले। सभी मनुष्य शरीरवान है, और उस शरीर मे यथास्थान इन्द्रियो तथा अग-उपागो की रचना भी हुई है। लेकिन एक

की आकृति दूसरे से नही मिलती है। प्रत्येक के आँख, कान, हाथ, पैर आदि अग-प्रत्यगो की बनावट मे एकरूपता नही है। किसी की नाक लम्बी है, किसी की चपटी, किसी के कान आगे की ओर झुके हुए हैं, किसी के यथायोग्य आकार-प्रकार वाले नही है। कोई बौना है, कोई कुबडा है, कोई दुबला-पतला ककाल जैसा है, कोई पूरे डील-डौल का है। किसी के शरीर की बनावट इतनी सुघड है कि देखने वाले उसके सौन्दर्य का बखान करते नही अघाते और किसी की शारीरिक रचना इतनी विकृत है कि देखने वाले घृणा से मुँह फेर लेते है।

यह बात तो हुई बाह्य दृश्यमान विचित्रताओ की कि सभी की भिन्न-भिन्न आकृतियाँ हैं। अब उनमे व्याप्त विषमताओ पर दृष्टिपात कर ले। विषमताओ के दो रूप है—बाह्य और आन्तरिक। बाहरी विषमताये तो प्रत्यक्ष दिखती है कि किसी को दो समय की रोटी भी बडी कठिनाई मे मिलती है। दिन भर परिश्रम करने के बाद भी इतना कुछ प्राप्त होता है कि किसी न किसी प्रकार से जीवित है और कोई ऐसा है जो सम्पन्नता के साथ खिलवाड कर रहा है। किसी के पास यान—वाहन आदि की इतनी प्रचुरता है कि दो डग भी पैदल चलने का अवसर नही आता, जब कि दूसरे को पैदल चलने के सिवाय अन्य कोई उपाय नही। किसी के पास आवास योग्य झोपडी भी नही है तो दूसरा बडे-बडे भवनो मे रहते हुए भी जीवन निर्वाह योग्य सुविधाओ की कमी मानता है। किसी के पास तो तन ढॉकने के लायक वस्त्र नही, फटे-पुराने चिथडे शरीर पर लपेटे हुए है और दूसरा दिन मे अनेक पोशाकें बदलते हुए भी परिधानो की कमी मानता है इत्यादि।

अब आन्तरिक भावात्मक परिणतियोगत विषमताओ पर दृष्टिपात कर ले। वे तो बाह्य से भी असख्यगुणी है। जितने प्राणधारी उतनी ही उनकी भावात्मक विषमतायें, उनकी तो गणना ही नही की सकती है। पृथक्-पृथक् कुलो, परिवारो के व्यक्तियो को छोडकर दो सहोदर भाइयो—एक ही माता-पिता की दो सन्तानो को देखे। उनकी

भावात्मक वृत्तियो की विषमताओ को देखकर आश्चर्यचकित हो जाना पडता है। दोनो ने एक ही माता का दूध पिया है। दोनो को समान लाड-प्यार मिला है। सत्सस्कारो के लिए योग्य शिक्षा भी मिली है। फिर भी उन दोनो की मानसिक स्थिति एक सी नहीं है, विपरीत है। एक दुष्ट दुराचारी है और दूसरा सज्जन शालीन है। एक क्रोध का द्वैपायन है तो दूसरा सम, समता, क्षमा की प्रतिमूर्ति है। इतना ही क्यो ? माता-पिता शिक्षित, प्रकाण्ड विद्वान लेकिन उनकी ही सन्तान निपट गवार, मूर्ख है। माता-पिता अशिक्षित लेकिन उनकी सन्तान ने अपनी प्रतिभा के द्वारा विश्वमानस को प्रभावित किया है इत्यादि। इस प्रकार की स्थिति क्यो है ? तो कारण है इसका वे सस्कार जिनको उस व्यक्ति ने अपने पूर्वजन्म मे अर्जित किये है। पूर्व-जन्म मे अर्जित सस्कारो का ही परिणाम उन-उनकी वार्तमानिक कृति-प्रवृत्ति है। वे सस्कार उन्होने कैसे अर्जित किये थे ? तो उसके निमित्त है, वे हेतु जिनका मिथ्यात्व आदि के नाम से शास्त्रो मे उल्लेख किया है और उनकी तरतमरूप स्थिति। उस समय कर्म करते हुए जितनी-जितनी भावात्मक परिणतियो मे तरतमता रही होगी, तदनुरूप वर्त-मान मे वैसी वृत्ति, प्रवृत्ति हो रही है।

बौद्ध ग्रन्थ मिलिन्दप्रश्न मे भी प्राणिमात्र मे व्याप्त विषमता के कारण के लिए इसी प्रकार का उल्लेख किया है कि अर्जित सस्कार के द्वारा ही व्यक्ति के स्वभाव, आकृति आदि मे विभिन्नताये होती हैं।

उपर्युक्त विवेचन मे यह सिद्ध हुआ कि कर्मबध के हेतुओ के जो विकल्प–भग शास्त्रो मे बताये है वे भग काल्पनिक अथवा बौद्धिक व्यायाम मात्र नही है, किन्तु यथार्थ है और इनकी यथार्थता प्राणिमात्र मे, व्याप्त विचित्रता और विषमता मे स्वत सिद्ध है। विचित्रताये विषमताये कार्य है और कार्य मे भिन्नताये तभी आती है जब कारणो की भिन्न-ताये हो।

कर्मबध के हेतुओ की अधिकता होने पर व्यक्ति के भावो मे

सक्लेश, माया, वचना, धूर्तता की अधिकता दिखती है और न्यूनता होने पर भावो मे विशुद्धता का स्तर उत्तरोत्तर विकसित होता जाता है। इसको एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है—कोई एक लम्पट, धूर्त, कामी व्यक्ति जघन्यतम कृत्यो को करके भी दूसरो पर दोषारोपण करने से नही झिझकता है। उसका स्वार्थ प्रवल होता है कि अपने अल्प लाभ के लिये दूसरो के नुकसान को नही देखता है। विषभरे स्वर्णकलश का रूप होता है, किन्तु अपनी प्रामाणिकता का दुन्दुभिनाद और कीर्तिध्वजाये फहराने मे नही सकुचायेगा। अपनी प्रशसा मे स्वय गीत गाने लगेगा। ऐसा वह क्यो करता है ? तो कारण स्पष्ट है कि वह सक्लेश की कालिमा से कलुषित है। ऐसी प्रवृत्ति करके ही वह अपने आप मे सन्तोष अनुभव करता है। लेकिन इसके विपरीत जिस व्यक्ति का मानस विशुद्ध है, वह वैसे किसी भी कार्य को नही करेगा जो दूसरे को त्रासजनक हो और स्वय मे जिसके द्वारा हीनता का अनुभव हो।

इस प्रकार की विभिन्नताये ही बधहेतुओ के विकल्पो और तरतमता की कारण हैं। इन विकल्पो का वर्णन करना इस अधिकार का विषय है। अत अब सक्षेप मे विषय परिचय प्रस्तुत करते हैं।

विषय परिचय

अधिकार का विषय सक्षेप मे उसकी प्रथम गाथा मे दिया है—

बधस्स मिच्छ अविरइ कसाय जोगा य हेयवो भणिया।

अर्थात् मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग कर्मबध के हेतु है। तत्पश्चात् इन हेतुओ के अवान्तर भेदो का नामोल्लेख करके गुणस्थान और जीवस्थान के भेदो के आधार से पहले गुणस्थानो मे सम्भव मूलबधहेतुओ को बतलाने के अनन्तर उनके अवान्तर भेदो का निर्देश किया है। इस वर्णन मे यह स्पष्ट किया है कि विकास क्रम से जैसे-जैसे आत्मा उत्तरोत्तर गुणस्थानो को प्राप्त करती जाती है, तदनुरूप बध

के कारण न्यूनातिन्यून होते जाते है और पूर्व-पूर्व मे उनकी अधिकता है। यह वर्णन अनेक जीवो को आधार बनाकर किया है।

अनन्तर एक जीव एव समयापेक्षा गुणस्थानो मे प्राप्त जघन्य-उत्कृष्ट बधहेतुओ का वर्णन किया है। यह निर्देश करना आवश्यक भी है। क्योकि प्रत्येक जीव अपनी वैभाविक परिणति की क्षमता के अनुरूप ही बधहेतुओ के माध्यम से कर्म बध कर सकता है। ऐसा नही है कि सभी को एक ही प्रकार के कर्म-पुद्गलो का बंध हो, एक जैसी प्रकृति, स्थिति, अनुभाग शक्ति प्राप्त हो।

यह समस्त वर्णन आदि की छह गाथाओ मे किया गया है। अनन्तर सातवी गाथा से प्रथम मिथ्यात्व आदि गुणस्थानो मे प्राप्त बधहेतुओ के सम्भव विकल्पो का निर्देश करके उनके भगो की सख्या का निरूपण किया है। यह सब वर्णन चौदहवी गाथा मे पूर्ण हुआ है।

इसके बाद पन्द्रहवी मे लेकर अठारहवी गाथा तक जीव-भेदो मे प्राप्त बधहेतुओ का वर्णन किया है। अनन्तर उन्नीसवी गाथा मे अन्वय-व्यतिरेक का अनुसरण करके कर्मप्रकृतियो के बध मे हेतुओ की मुख्यता का निर्देश किया है। अन्त मे तीन गाथाओ मे परीषहो के उत्पन्न होने के कारणो और किसको कितने परीषह हो सकते है, उनके स्वामियो का सकेत करके प्रस्तुत अधिकार की प्ररूपणा समाप्त की है।

यह अधिकार का सक्षिप्त परिचय है। विस्तृत जानकारी के लिए पाठकगण अध्ययन करेंगे, यह आकाक्षा है।

खजाची मोहल्ला
बीकानेर ३३४००१

—देवकुमार जैन
सम्पादक

विषयानुक्रमणिका

गाथा १ — ३–६

कर्मबध के सामान्य बधहेतु — ३

कर्मबध के सामान्य बधहेतुओ की सख्या की सक्षेप विस्तार दृष्टि — ४

मिथ्यात्व आदि हेतुओ के लक्षण — ६

गाथा २ — ६–६

मिथ्यात्व के पाच भेदो के नाम व लक्षण — ७

गाथा ३ — ६–१०

अविरति आदि के भेद — १०

गाथा ४ — ११–१३

गुणस्थानो मे मूल बधहेतु — ११

गुणस्थानो सम्बन्धी मूल बधहेतुओ का प्रारूप — १३

गाथा ५ — १४–१८

गुणस्थानो मे मूल बधहेतुओ के अवान्तर भेद — १४

गाथा ६ — १८–२०

एक जीव के समयापेक्षा गुणस्थानो मे बधहेतु — १६

उक्त बधहेतुओ का दर्शक प्रारूप — २०

गाथा ७ — २०–२४

मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती जघन्यपदभावी बधहेतु — २१

गाथा ८ २४–२६

मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती बधहेतुओ के भग २४

गाथा ६ २६–४०

मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती बधहेतुओ का प्रमाण २७
मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती बधहेतुओ के विकल्पो का प्रारूप ३८

गाथा १० ४१–४२

अनन्तानुबधी के विकल्पोदय का कारण ४१

गाथा ११ ४२–५६

सासादनगुणस्थान के बधहेतु ४२
सासादनगुणस्थान के बधहेतुओ के विकल्पो का प्रारूप ४६
मिश्रगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग ५०
मिश्रगुणस्थान के बधहेतुओ के विकल्पो का प्रारूप ५५

गाथा १२ ५७–७३

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग ५७
अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का प्रारूप ६४
देशविरतगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग ६६
देशविरतगुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का प्रारूप ७२

गाथा १३ ७३–८१

प्रमत्तसयतगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग ७३
प्रमत्तसयतगुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का प्रारूप ७६
अप्रमत्तसयतगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग ७७
अप्रमत्तसयत गुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का प्रारूप ७८
अपूर्वकरणगुणस्थान के बधहेतु ७८
अपूर्वकरण गुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का प्रारूप ८०

अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान के बधहेतु ८०
सूक्ष्मसपराय आदि सयोगिकेवली पर्यन्त गुणस्थानो के बधहेतु ८१

गाथा १४ ८१–८२
पूर्वोक्त गुणस्थानो के बधहेतुओ के समस्त भगो की सख्या ८१

गाथा १५ ८२–८३
जीवस्थानो मे बधहेतु-कथन की उत्थानिका ८२

गाथा १६ ८३–८७
पर्याप्त सज्ञी व्यतिरिक्त शेष जीवस्थानो मे सम्भव बध-हेतु और उनका कारण ८४

गाथा १७ ८६–८८
एकेन्द्रिय आदि जीवो मे सम्भव योग और गुणस्थान ८७

गाथा १८ ८९–१०७
शरीर पर्याप्ति से पर्याप्त छह मिथ्यादृष्टि जीवस्थानो मे योगो की सख्या ८९
शरीर पर्याप्ति से पर्याप्त सज्ञी जीवस्थान मे प्राप्त योग ८९
सज्ञी अपर्याप्त के बधहेतु के भग ९०
अपर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के बधहेतु के भग ९३
पर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के बधहेतु के भग ९५
अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय के बधहेतु के भग ९६
पर्याप्त चतुरिन्द्रिय के बधहेतु के भग ९८
अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के वधहेतु के भग ९९
पर्याप्त त्रीन्द्रिय के वधहेतु के भग १००
अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के वधहेतु के भग १०१
पर्याप्त द्वीन्द्रिय के वधहेतु के भग १०२
अपर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के वधहेतु के भग १०३

पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय के बधहेतु के भग १०५
अपर्याप्त, पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के बधहेतु के भग १०६

गाथा १६ १०७–१०६
कर्मप्रकृतियो के विशेष बधहेतु १०७

गाथा २० १०६–११४
तीर्थंकर नाम और आहारकद्विक के बधहेतु सम्बन्धी स्पष्टीकरण १०६

गाथा २१ ११४–११८
सयोगिकेवलीगुणस्थान मे प्राप्त परीषह एव कारण तथा उन परीषहो के लक्षण ११५

गाथा २२, २३ ११८–१२५
परीषहोत्पत्ति मे कर्मोदयहेतुत्व व स्वामी ११६

परिशिष्ट १२६
बधहेतु-प्ररूपणा अधिकार की मूल गाथाएँ १२६
दिगम्बर कर्म-साहित्य मे गुणस्थानापेक्षा मूल बध-प्रत्यय १२७
दिगम्बर कर्म साहित्य मे गुणस्थानापेक्षा उत्तर बध-प्रत्ययो के भग १३१
गाथा-अकाराद्यनुक्रमणिका १७१

□□

श्रीमदाचार्य चन्द्रर्षिमहत्तर-विरचित

पंचसंग्रह

(मूल, शब्दार्थ तथा विवेचन युक्त)

बधहेतु-प्ररूपणा अधिकार

४ : बंधहेतु-प्ररूपणा अधिकार

बधव्य-प्ररूपणा अधिकार का कथन करके अब क्रम-प्राप्त बध-हेतु-प्ररूपणा अधिकार को प्रारम्भ करते हुए सर्वप्रथम सामान्य बधहेतुओ को बतलाते है। जिनके नाम और उत्तरभेद इस प्रकार हैं—

बंधस्स मिच्छ अविरइ कसाय जोगा य हेयवो भणिया।
ते पच दुवालस पन्नवीस पन्नरस भेइल्ला ॥१॥

शब्दार्थ—बधस्स—बध के, मिच्छ—मिथ्यात्व, अविरइ—अविरति, कसाय—कषाय, जोगा—योग, य—और, हेयवो—हेतु, भणिया—कहे है (बताये हैं), ते—वे, पच—पाच, दुवालस—बारह, पन्नवीस—पच्चीस, पन्नरस—पन्द्रह, भेइल्ला—भेद वाले।

गाथार्थ—कर्मबध के मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग, ये चार हेतु बताये है और वे अनुक्रम से पांच, बारह, पच्चीस और पन्द्रह भेद वाले है।

विशेषार्थ—गाथा के पूर्वार्ध मे कर्मबध के सामान्य बधहेतुओ का निर्देश करके उत्तरार्ध मे उनके यथाक्रम से अवान्तर भेदो की सख्या बतलाई है। जिसका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है—

आत्मा और कर्म-प्रदेशो का पानी और दूध अथवा अग्नि और लोहपिड की तरह एकक्षेत्रावगाह हो जाना बध है। जीव और कर्म का सम्बन्ध कनकोपल (स्वर्ण-पाषाण) मे सोने और पाषाण रूप मल के सयोग की तरह अनादि काल से चला आ रहा है। संसारी जीव का वैभाविक स्वभाव-परिणाम रागादि रूप से परिणत होने का है और बद्ध कर्म का स्वभाव जीव को रागादि रूप से परिणमाने का है। जीव और कर्म का यह स्वभाव अनादि काल से चला आ रहा है। इस प्रकार के वैभाविक परिणामो और कर्मपुद्गलो मे कार्य-कारण भाव सम्बन्ध है।

काषायिक परिणति के योग—सम्बन्ध से ससारी जीव कर्म के योग्य पुद्‌गलो को ग्रहण करता है। वह योग परिस्पन्दन के द्वारा कर्म-पुद्‌गलो को आकर्षित करता है और कषायो के द्वारा स्वप्रदेशो के साथ एकक्षेत्रावगाह रूप से सम्बद्ध कर लेता है। इस सम्बद्ध करने के कारणो को बधहेतु कहते हैं।

विशेष रूप से समझाने के लिये शास्त्रो मे अनेक प्रकार से बंधहेतुओ का उल्लेख है। जैसे कि – राग, द्वेष, ये दो अथवा राग, द्वेष और मोह, ये तीन हेतु हैं। अथवा मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग, ये चार अथवा मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये पाच बधहेतु है। अथवा इन चार और पाच हेतुओ का विस्तार किया जाये तो प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, रात्रिभोजन, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, प्रेय, निदान, अभ्याख्यान, कलह, पैशुन्य (चुगली), रति, अरति, उपधि, निकृति, मान, मेय, मोष, मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और प्रयोग, ये अट्‌ठाईस बधहेतु है।

इस प्रकार सक्षेप और विस्तार से शास्त्रो मे अनेक प्रकार से सामान्य बधहेतुओ का विचार किया गया है। इसके साथ ही ज्ञानावरण आदि प्रत्येक कर्म के अपने-अपने बधहेतु भी बतलाये हैं। लेकिन मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये पाचो समस्त कर्मों के सामान्य कारण के रूप मे प्रसिद्ध है और इनके सद्‌भाव मे ही ज्ञानावरण आदि प्रत्येक कर्म के अपने-अपने विशेषहेतु कार्यकारी हो सकते है। अत इन्ही के बारे मे यहाँ विचार करते है।

कर्मबध के सामान्य हेतुओ की सख्या के बारे मे तीन परम्परायें देखने मे आती है—

१—कषाय और योग,

२—मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग,

३—मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।

दृष्टिभेद से कथन-परम्परा के उक्त तीन प्रकार हैं एव सख्या और उनके नामो मे भेद रहने पर भी तात्त्विक दृष्टि से इन परम्पराओ मे

कोई भेद नही है। क्योकि प्रमाद एक प्रकार का असयम है। अत उसका समावेश अविरति या कषाय मे हो जाता है। इसी दृष्टि से कर्म-विचारणा के प्रसंग मे कार्मग्रन्थिक आचार्यों ने मध्यममार्ग का आधार लेकर मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग, इन चार को बध-हेतु कहा है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे भी इन्ही मिथ्यात्व आदि चार को सामान्य से कर्मबध के हेतु रूप मे बताया है। यदि इनके लिये और भी सूक्ष्मता से विचार करें तो मिथ्यात्व और अविरति, ये दोनो कषाय के स्वरूप से पृथक् नही जान पडते है। अत कषाय और योग, इन दोनो को मुख्य रूप से बधहेतु माना जाता है।

कर्मसाहित्य मे जहाँ भी बद्ध कर्म-पुद्गलो मे प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश, इन चार अशो के निर्माण की प्रक्रिया का उल्लेख है वहाँ योग और कषाय को आधार बताया है कि प्रकृति और प्रदेश बध का कारण योग तथा स्थिति व अनुभाग बध का कारण कषाय है। फिर भी जिज्ञासुजनो को विस्तार से समझाने के लिये मिथ्यात्वादि चारो अथवा पाचो को बधहेतु के रूप मे कहा है। साधारण विवेकवान तो चार अथवा पाच हेतुओ द्वारा और विशेष मर्मज्ञ कषाय और योग, इन दो कारणो की परम्परा द्वारा कर्मबध की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त कर सकते हे।

उक्त चार या पाच बधहेतुओ मे से जहाँ पूर्व-पूर्व के बधहेतु होंगे, वहाँ उसके बाद के सभी हेतु होगे, ऐसा नियम है। जैसे मिथ्यात्व के होने पर अविरति से लेकर योग पर्यन्त सभी हेतु होंगे, किन्तु उत्तर का हेतु होने पर पूर्व का हेतु हो और न भी हो। क्योकि जैसे पहले गुण-स्थान मे अविरति के साथ मिथ्यात्व होता है, किन्तु दूसरे, तीसरे, चौथे गुणस्थान मे अविरति के होने पर भी मिथ्यात्व नही होता है। इसी प्रकार अन्य बधहेतुओ के लिए भी समझना चाहिये।

इस प्रकार से बधहेतुओं के सम्बन्ध मे सामान्य से चर्चा करने के पश्चात् ग्रन्थोल्लिखित चार हेतुओ का विचार करते है—

मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग —ये चार कर्मबध के सामान्य हेतु है अर्थात् ये सभी कर्मों के समान रूप से बध के निमित्त है। यथा-

योग्य रीति से मिथ्यात्व आदि के सद्भाव मे ज्ञानावरणादि आठो कर्मों की कार्मणवर्गणायें जीव-प्रदेशो के साथ सम्बद्ध होगी। लेकिन एक-एक कर्म के विशेष बधहेतुओ का विचार किया जाये तो मिथ्यात्व आदि सामान्य हेतुओ के साथ उन विशेष हेतुओ के द्वारा उस कर्म का तो विशेष रूप से और शेष कर्मों का सामान्य रूप से बध होगा। इसी बात को गाथा मे 'कसाय जोगा' के अनन्तर आगत 'य-च' शब्द से सूचित किया गया है।

मिथ्यात्व—यह सम्यग्दर्शन से विपरीत--विरुद्ध अर्थवाला है। अर्थात् यथार्थ रूप से पदार्थों के श्रद्धान—निश्चय करने की रुचि सम्यग्दर्शन है और अयथार्थ श्रद्धान को मिथ्यादर्शन—मिथ्यात्व कहते है।

अविरति—पापो से—दोषो से विरत न होना।

कषाय—जो आत्मगुणो को कषे—नष्ट करे, अथवा जन्म-मरणरूप ससार की वृद्धि करे।

योग—मन-वचन-काय की प्रवृत्ति—परिस्पन्दन—हलन-चलन को योग कहते है।

इन मिथ्यात्वादि चार हेतुओ के अनुक्रम से पाच, बारह, पच्चीस और पन्द्रह अवान्तर भेद होते है। अर्थात् मिथ्यात्व के पाच, अविरति के बारह, कषाय के पच्चीस और योग के पन्द्रह भेद है। गाथागत 'भेइल्ला' पद मे इल्ल प्रत्यय 'मतु' अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है और मतु प्रत्यय 'वाला' के अर्थ का बोधक है। जिसका अर्थ यह हुआ कि ये मिथ्यात्व आदि अनुक्रम से पाच आदि अवान्तर भेद वाले हैं।

इस प्रकार से कर्मबध के सामान्य बधहेतु मिथ्यात्वादि और उनके अवान्तर भेदो को जानना चाहिये। अब अनुक्रम से मिथ्यात्व आदि के अवान्तर भेदो के नामो को बतलाते है। उनमें से मिथ्यात्व के पाच भेदो के नाम इस प्रकार है—

मिथ्यात्व के पांच भेदो के नाम

आभिग्गहियमणाभिग्गह च अभिनिवेसिय चेव।
ससइयमणाभोग मिच्छत्त पचहा होइ ॥२॥

शब्दार्थ—आभिग्गहिय—आभिग्रहिक, अणाभिग्गह—अनाभिग्रहिक, च—और, अभिनिवेसिय—आभिनिवेशिक, चेव—तथा, संसइयमणाभोग—सांशयिक, अनाभोग, मिच्छत्त—मिथ्यात्व, पचहा—पाच प्रकार का, होइ—है।

गाथार्थ—आभिग्रहिक और अनाभिग्रहिक तथा आभिनिवेशिक, सांशयिक, अनाभोग, इस तरह मिथ्यात्व के पाच भेद है।

विशेषार्थ—गाथा मे मिथ्यात्व के पाच भेदो के नाम बतलाये हैं। अर्थात् तत्त्वभूत जीवादि पदार्थों की अश्रद्धा, आत्मा के स्वरूप के अयथार्थ ज्ञान—श्रद्धानरूप मिथ्यात्व के पाच भेद यह है—

आभिग्रहिक, अनाभिग्रहिक, आभिनिवेशिक, साशयिक और अनाभोग।[1] जिनकी व्याख्या इस प्रकार है—

---

1 आचार्यों ने विभिन्न प्रकार से मिथ्यात्व के भेद और उनके नाम बताये है। जैसे कि सशय, अभिगृहीत और अनभिगृहीत के भेद से मिथ्यात्व के तीन भेद है। अथवा एकान्त, विनय, विपरीत, सशय और अज्ञान के भेद से मिथ्यात्व के पाच भेद है। अथवा नैसर्गिक और परोपदेशपूर्वक के भेद से मिथ्यात्व के दो भेद है और परोपदेशनिमित्तक मिथ्यात्व चार प्रकार का है—क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और वैनयिक तथा इन चारो भेदो के भी प्रभेद तीन सौ तिरेसठ (३६३) हैं। अन्य भी सख्यात विकल्प होते है। परिणामो की दृष्टि से असख्यात और अनुभाग की दृष्टि से अनन्त भी भेद होते है तथा नैसर्गिक मिथ्यात्व एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असज्ञी-पचेन्द्रिय, तिर्यंच, म्लेच्छ, शबर, पुलिंद आदि स्वामियो के भेद से अनेक प्रकार का है।

इस प्रकार मिथ्यात्व के विभिन्न प्रकार से भेदो की सख्या बताने का कारण यह है—

जावदिया वयणपहा, तावदिया चेव होंति णयवादा।
जावदिया णयवादा तावदिया चेव परसमया॥

अर्थात्—जितने वचनमार्ग है, उतने ही नयवाद है और जितने नयवाद हैं, उतने ही परसमय होते है।

अतएव मिथ्यात्व के तीन या पाच आदि भेद होते हैं, ऐसा कोई नियम नही है। किन्तु ये भेद तो उपलक्षणमात्र समझना चाहिये।

आभिग्रहिक मिथ्यात्व—वश-परम्परा से जिस धर्म को मानते आये हैं, वही धर्म सत्य है और दूसरे धर्म सत्य नही है, इस तरह असत्य धर्मों मे से किसी भी एक धर्म को तत्त्वबुद्धि से ग्रहण करने से उत्पन्न हुए मिथ्यात्व को आभिग्रहिक मिथ्यात्व कहते है। इस मिथ्यात्व के वशीभूत होकर मनुष्य वोटिक आदि असत्य धर्मों मे से कोई भी एक धर्म ग्रहण—स्वीकार करता है और उसी को सत्य मानता है। सत्यासत्य की परीक्षा नही कर पाता है।

अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व—आभिग्रहिक मिथ्यात्व से विपरीत जो मिथ्यात्व, वह अनाभिग्रहिक है। अर्थात् यथोक्त स्वरूप वाला अभिग्रह—किसी भी एक धर्म का ग्रहण जिसके अन्दर न हो, ऐसा मिथ्यात्व अनाभिग्रहिक कहलाता है। इस मिथ्यात्व के कारण मनुष्य यह सोचता है कि सभी धर्म श्रेष्ठ है, कोई भी बुरा नही है। इस प्रकार से सत्यासत्य की परीक्षा किये बिना काच और मणि मे भेद नही समझने वाले के सदृश कुछ माध्यस्थवृत्ति[1] को धारण करता है।

आभिग्रहिक और अनाभिग्रहिक, इन दोनो प्रकार के मिथ्यात्व मे यह अन्तर है कि अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व नैसर्गिक, परोपदेशनिरपेक्ष—स्वाभाविक होता है। वैचारिक मूढता के कारण स्वभावत तत्त्व का अयथार्थ श्रद्धान होता है। जबकि आभिग्रहिक मिथ्यात्व मे किसी भी कारणवश एकान्तिक कदाग्रह होता है। विचार-शक्ति का विकास होने पर भी दुराग्रह के कारण किसी एक ही दृष्टि को पकड लिया जाता है।

---

१ अभिप्राय यह है कि यह यथार्थरूप मे माध्यस्थवृत्ति नही है। क्योंकि सच और झूठ की परीक्षा कर सच को स्वीकार करना एव अन्य धर्माभासों पर द्वेष न रखना वास्तव मे माध्यस्थवृत्ति है। परन्तु यहाँ तो सभी धर्म समान माने है, यानि ऊपर से मध्यस्थता का प्रदर्शन किया है।

आभिनिवेशिक मिथ्यात्व—सर्वज्ञ वीतरागप्ररूपित तत्त्वविचारणा का खण्डन करने के लिये अभिनिवेश—दुराग्रह, आवेश से होने वाला मिथ्यात्व आभिनिवेशिक मिथ्यात्व कहलाता है। इस मिथ्यात्व के वश होकर गोष्ठामाहिल आदि ने तीर्थंकर महावीर की प्ररूपणा का खंडन करके स्व-अभिप्राय की स्थापना की थी।

सांशयिक मिथ्यात्व—संशय के द्वारा होने वाला मिथ्यात्व सांशयिक मिथ्यात्व कहलाता है। विरुद्ध अनेक कोटि-संस्पर्शी ज्ञान को संशय कहते है। इस प्रकार के मिथ्यात्व से भगवान् अरिहन्तभाषित तत्त्वो मे संशय होता है। जैसे कि भगवान् अरिहन्त ने धर्मास्तिकाय आदि का जो स्वरूप बतलाया है, वह सत्य है या असत्य है। इस प्रकार की श्रद्धा को सांशयिक मिथ्यात्व कहते है।

अनाभोग मिथ्यात्व—जिसमे विशिष्ट विचारशक्ति का अभाव होने पर सत्यासत्य विचार ही न हो, उसे अनाभोग मिथ्यात्व कहते है। यह एकेन्द्रिय आदि जीवो मे होता है।[1]

इस प्रकार से मिथ्यात्व के पाच भेदो के नाम और उनके लक्षण जानना चाहिए। अब अविरति आदि के भेदो को बतलाते है—

अविरति आदि के भेद

छक्कायवहो मणइंदियाण अजमो असजमो भणिओ।
इइ बारसहा सुगमो कसायजोगा य पुव्वुत्ता ॥३॥

शब्दार्थ—छक्कायवहो—छहकाय का वध, **मणइंदियाण**—मन और इन्द्रियो का, **अजमो**—अनिग्रह, **असजमो**—असयम, अविरति, **भणिओ**—कहे है, **इइ**—इस तरह, **बारसहा**—बारह प्रकार का, **सुगमो**—सुगम,

---

१ यहाँ एकेन्द्रियादि जीवो के अनाभोग मिथ्यात्व बतलाया है। किन्तु इसी गाथा एव आगे पाचवी गाथा की स्वोपज्ञवृत्ति मे सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त के सिवाय शेप जीवो के अनाभिग्रहिक मिथ्य[illegible]ताया है तथा इसी गाथा की स्वोपज्ञवृत्ति मे 'आगम का अभ[illegible]रना यानि अज्ञान ही श्रेष्ठ है', ऐसा अनाभोग मिथ्यात्व का अर्थ[illegible]

हेतु के विद्यमान न होने से किसी भी प्रकार का कर्मबन्ध नहीं करते है।[1]

इस प्रकार से गुणस्थानो मे मिथ्यात्व आदि मूल बंधहेतुओ को जानना चाहिए। सरलता से समझने के लिए इनका प्रारूप इस प्रकार है—

क्रम	गुणस्थान	बंधहेतु
१	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग ४
२,३,४	सासादन, मिश्र, अविरतसम्य	अविरति, कषाय, योग ३
५	देशविरत	अविरति, कषाय, योग ३ (यहाँ अविरति प्रत्यय कुछ न्यून है।)
६-१०	प्रमत्तसयत आदि सूक्ष्मसपराय	कषाय, योग २
११-१३	उपशातमोह आदि सयोगिकेवली	योग १
१४	अयोगिकेवली	× ×

१ इसी प्रकार से दिगम्बर कर्मग्रन्थो (दि पचम ग्रह, शतक अधिकार गाथा ७८, ७९ और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७, ७८८) मे भी गुणस्थानो की अपेक्षा सामान्य बन्धहेतुओ का निर्देश किया है। पाचवें देशविरतगुणस्थान के बन्धहेतुओ के लिए सकेत किया है कि—

मिस्सगविदिय उवरिमदुग च देसेक्कदेसम्मि ॥

—गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७

अर्थात् एकदेश असयम के त्याग वाले देशसयमगुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय विरति से मिला हुआ है तथा आगे के दो प्रत्यय पूर्ण है। इस प्रकार इस गुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय मिश्र और उपरिम दो प्रत्यय कर्मबन्ध के कारण हैं। इस तरह पाचवें गुणस्थान के तीनो बंधहेतुओ के बारे मे जानना चाहिये।

सासादन, मिश्र और अविरतसम्यग्दृष्टि, इन दूसरे, तीसरे और चौथे तीन गुणस्थानो मे अविरति, कषाय और योग रूप तीन हेतुओ द्वारा वन्ध होता है। क्योकि मिथ्यात्व का उदय पहले गुणस्थान मे ही होता है। अत इन गुणस्थानो मे मिथ्यात्व नही होने से अविरति आदि तीन हेतु पाये जाते हैं।

देशविरत मे भी यही अविरति आदि पूर्वोक्त तीन हेतु है, किन्तु उनमें कुछ न्यूनता है। क्योकि यहाँ त्रस जीवो की अविरति नही होती है। यद्यपि श्रावक त्रसकाय की सर्वथा अविरति से विरत नही हुआ है, लेकिन हिंसा न हो इस प्रकार के उपयोगपूर्वक प्रवृत्ति करता है, जिसकी यहाँ विवक्षा नही की है। इसीलिए इस गुणस्थान मे कुछ न्यून तीन हेतुओ का सकेत किया है। ग्रन्थकार आचार्य ने तो गाथा मे इसका कुछ भी सकेत नही किया है, लेकिन सामर्थ्य से ही समझ लेना चाहिए। क्योकि इस गुणस्थान मे न तो पूरे तीन हेतु ही कहे है और न दो हेतु ही। इसलिए यही समझना चाहिए कि पाचवें देशविरत-गुणस्थान मे तीन से न्यून और दो से अधिक बंधहेतु हैं।

'दुगपच्चओ पमत्ता' अर्थात् छठे प्रमत्तसयतगुणस्थान से लेकर दसवें सूक्ष्मसपरायगुणस्थान पर्यन्त कषाय और योग, इन दो हेतुओ द्वारा कर्मबध होता है। क्योकि प्रमत्त आदि गुणस्थान सम्यक्त्व एव विरति सापेक्ष हैं। जिससे इनमे मिथ्यात्व और अविरति का अभाव है। इसीलिए प्रमत्तसयत आदि सूक्ष्मसपराय पर्यन्त पाच गुणस्थानो मे कषाय और योग, ये दो बधहेतु पाये जाते है।

'उवसता जोगपच्चइओ' अर्थात् ग्यारहवें उपशातमोहगुणस्थान से लेकर तेरहवें सयोगिकेवलीगुणस्थान पर्यन्त तीन गुणस्थानो मे मात्र योगनिमित्तक कर्मबन्ध होता है। क्योकि इन गुणस्थानो मे कषाय भी नही होती है। अत' योगनिमित्तक कर्मबन्ध इन तीन गुण-स्थानो मे माना जाता है तथा अयोगिकेवली भगवत किसी भी बन्ध-

हेतु के विद्यमान न होने से किसी भी प्रकार का कर्मबन्ध नही करते है।[1]

इस प्रकार से गुणस्थानो मे मिथ्यात्व आदि मूल बंधहेतुओ को जानना चाहिए। सरलता से समझने के लिए इनका प्रारूप इस प्रकार है—

क्रम	गुणस्थान	बंधहेतु
१	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग ४
२,३,४	सासादन, मिश्र, अविरतसम्य	अविरति, कषाय, योग ३
५	देशविरत	अविरति, कषाय, योग ३ (यहाँ अविरति प्रत्यय कुछ न्यून है।)
६-१०	प्रमत्तसंयत आदि सूक्ष्मसंपराय	कषाय, योग २
११-१३	उपशातमोह आदि सयोगिकेवली	योग १
१४	अयोगिकेवली	× ×

1 इसी प्रकार से दिगम्बर कर्मग्रन्थो (दि पचसंग्रह, शतक अधिकार गाथा ७८, ७९ और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७, ७८८) मे भी गुणस्थानो की अपेक्षा सामान्य बन्धहेतुओ का निर्देश किया है। पाचवें देशविरतगुणस्थान के बन्धहेतुओ के लिए सकेत किया है कि—

मिस्सगविदिय उवरिमदुग च देसेक्कदेसम्मि ॥

—गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७

अर्थात् एकदेश असयम के त्याग वाले देशसयमगुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय विरति से मिला हुआ है तथा आगे के दो प्रत्यय पूर्ण है। इस प्रकार इस गुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय मिश्र और उपरिम दो प्रत्यय कर्मबन्ध के कारण है। इस तरह पाचवें गुणस्थान के तीनो बंधहेतुओ के बारे मे जानना चाहिये।

सासादन, मिश्र और अविरतसम्यग्दृष्टि, इन दूसरे, तीसरे और चौथे तीन गुणस्थानो मे अविरति, कषाय और योग रूप तीन हेतुओ द्वारा बन्ध होता है। क्योकि मिथ्यात्व का उदय पहले गुणस्थान मे ही होता है। अत इन गुणस्थानो मे मिथ्यात्व नही होने से अविरति आदि तीन हेतु पाये जाते हैं।

देशविरत मे भी यही अविरति आदि पूर्वोक्त तीन हेतु हैं, किन्तु उनमें कुछ न्यूनता है। क्योकि यहाँ त्रस जीवो की अविरति नही होती है। यद्यपि श्रावक त्रसकाय की सर्वथा अविरति से विरत नही हुआ है, लेकिन हिंसा न हो इस प्रकार के उपयोगपूर्वक प्रवृत्ति करता है, जिसकी यहाँ विवक्षा नही की है। इसीलिए इस गुणस्थान मे कुछ न्यून तीन हेतुओ का संकेत किया है। ग्रन्थकार आचार्य ने तो गाथा मे इसका कुछ भी सकेत नही किया है, लेकिन सामर्थ्य से ही समझ लेना चाहिए। क्योकि इस गुणस्थान मे न तो पूरे तीन हेतु ही कहे है और न दो हेतु ही। इसलिए यही समझना चाहिए कि पाचवें देशविरत-गुणस्थान मे तीन से न्यून और दो से अधिक बंधहेतु है।

'दुगपच्चओ पमत्ता' अर्थात् छठे प्रमत्तसयतगुणस्थान से लेकर दसवें सूक्ष्मसपरायगुणस्थान पर्यन्त कषाय और योग, इन दो हेतुओ द्वारा कर्मबध होता है। क्योकि प्रमत्त आदि गुणस्थान सम्यक्त्व एव विरति सापेक्ष हैं। जिससे इनमे मिथ्यात्व और अविरति का अभाव है। इसीलिए प्रमत्तसयत आदि सूक्ष्मसपराय पर्यन्त पाच गुणस्थानो मे कपाय और योग, ये दो बधहेतु पाये जाते है।

'उवसता जोगपच्चइओ' अर्थात् ग्यारहवें उपशातमोहगुणस्थान से लेकर तेरहवें सयोगिकेवलीगुणस्थान पर्यन्त तीन गुणस्थानो मे मात्र योगनिमित्तक कर्मबन्ध होता है। क्योकि इन गुणस्थानो मे कषाय भी नही होती हैं। अत योगनिमित्तक कर्मबन्ध इन तीन गुण-स्थानो मे माना जाता है तथा अयोगिकेवली भगवत किसी भी बन्ध-

हेतु के विद्यमान न होने से किसी भी प्रकार का कर्मबन्ध नही करते है।[1]

इस प्रकार से गुणस्थानों मे मिथ्यात्व आदि मूल बंधहेतुओं को जानना चाहिए। सरलता मे समझने के लिए इनका प्रारूप इस प्रकार है—

क्रम	गुणस्थान	बंधहेतु
१	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग ४
२,३,४	सासादन, मिश्र, अविरतसम्य	अविरति, कषाय, योग ३
५	देशविरत	अविरति, कषाय, योग ३ (यहाँ अविरति प्रत्यय कुछ न्यून है।)
६-१०	प्रमत्तसयत आदि सूक्ष्मसपराय	कषाय, योग २
११-१३	उपशानमोह आदि सयोगिकेवली	योग १
१४	अयोगिकेवली	× ×

1 इसी प्रकार से दिगम्बर कर्मग्रन्थो (दि पचसग्रह, शतक अधिकार गाथा ७८, ७९ और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७, ७८८) मे भी गुणस्थानों की अपेक्षा सामान्य बन्धहेतुओं का निर्देश किया है। पाचवें देशविरतगुणस्थान के बन्धहेतुओं के लिए सकेत किया है कि—

सिस्सगविदिय उवरिमदुग च देसेक्कदेसम्मि ॥

—गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८७

अर्थात् एकदेश असयम के त्याग वाले देशसयमगुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय विरति से मिला हुआ है तथा आगे के दो प्रत्यय पूर्ण है। इस प्रकार इस गुणस्थान मे दूसरा अविरति प्रत्यय मिश्र और उपरिम दो प्रत्यय कर्मबन्ध के कारण है। इस तरह पाचवें गुणस्थान के तीनों बंधहेतुओं के बारे मे जानना चाहिये।

उक्त प्रकार से गुणस्थानो में मूल बधहेतुओ को बतलाने के पश्चात् अब गुणस्थानो मे मूल बधहेतुओ के अवान्तर भेदो को बतलाते है—

गुणस्थानो मे मूल बंध हेतुओ के अवान्तर भेद

पणपन्न पन्न तियछहियचत्त गुणचत्त छक्कचउसहिया ।
दुजुया य वीस सोलस दस नव नव सत्त हेऊ य ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—**पणपन्न**—पचपन, **पन्न**—पचास, **तियछहियचत्त**—तीन और छह अधिक चालीस अर्थात् तेतालीस, छियालीस, **गुणचत्त**—उनतालीस **छक्कचउसहिया**—छह और चार सहित, **दुजुया**—दो सहित, **य**—और, **वीस**—वीस, **सोलस**—सोलह, **दस**—दस, **नव**—नौ, **नव**—नौ, **सत्त**—सात, **हेऊ**—हेतु, **य**—और ।

गाथार्थ—पचपन, पचास, तीन और छह अधिक चालीस, उनतालीस, छह, चार और दो सहित बीस, सोलह, दस, नौ, नौ और सात, इस प्रकार मूल बधहेतुओ के अवान्तर भेद अनुक्रम से तेरह गुणस्थानो मे होते हैं ।

विशेषार्थ—चौदहवें अयोगिकेवलीगुणस्थान मे बधहेतुओ का अभाव होने से नाना जीवो और नाना समयो की अपेक्षा गाथा मे पहले मिथ्यात्व से लेकर सयोगिकेवली पर्यन्त तेरह गुणस्थानो मे अनुक्रम से मूल बन्धहेतुओ के अवान्तर भेद बतलाये है। जिनका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है—

मिथ्यात्व आदि चारो मूल बधहेतुओ के क्रमश पाच, बारह, पच्चीस और पन्द्रह उत्तरभेदो का जोड सत्तावन होता है। उनमे से पहले मिथ्यात्वगुणस्थान मे आहारक और आहारकमिश्र काययोग, इन दो काययोगो के सिवाय शेप पचपन बधहेतु होते है। यहाँ आहारकद्विक काययोग का अभाव होने का कारण यह है कि आहारकद्विक आहारकलब्धिसम्पन्न चतुर्दश पूर्वधर मुनियो के ही होते हैं तथा इन दोनो का बन्ध सम्यक्त्व और सयम सापेक्ष है। किन्तु पहले गुणस्थान मे न तो सम्यक्त्व है और न सयम है। जिससे पहले गुणस्थान मे ये दोनो नही पाये जाते है। इसलिए इन दोनो योगो के सिवाय शेष पचपन बधहेतुमिथ्यात्व गुणस्थान मे है ।

सासादनगुणस्थान मे पाच प्रकार के मिथ्यात्व का अभाव होने से उनके विना शेष पचास बधहेतु होते है।

तीसरे मिश्रगुणस्थान मे तेतालीस वधहेतु है। यहाँ अनन्तानुबधी कपायचतुष्क, कार्मण, औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र, ये सात वधहेतु भी नही होते है। इसलिए पूर्वोक्त पचास मे से इन सात को कम करने पर शेष तेतालीस वधहेतु तीसरे गुणस्थान मे माने जाते है। अनन्तानुबधी कपायचतुष्क आदि सात हेतुओ के न होने का कारण यह है कि 'न सम्ममिच्छो कुणइ काल—सम्यगमिथ्यादृष्टि काल नही करता है' ऐसा शास्त्र का वचन होने से मिश्रगुणस्थानवर्ती जीव परलोक मे नही जाता है। जिससे अपर्याप्त अवस्था मे सभव कार्मण और औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र, ये तीन योग नही पाये जाते है तथा पहले और दूसरे गुण-स्थान तक ही अनन्तानुवधी कषायो का उदय होता है। इसलिये अनन्तानुवधी चार कषाय भी यहाँ सभव नही है। अतएव अनन्तानुवधी वपायचतुष्क, कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र, इन सात हेतुओ को पूर्वोक्त पचास मे से कम करने पर शेप नेतालीस वधहेतु तीसरे गुणस्थान मे होते है।

अविरतमम्यग्दृष्टि नामक चौथे गुणस्थान मे छियालीस वधहेतु होते है। क्योकि इस गुणस्थान मे मरण सभव होने से परलोकगमन भी होता है, जिससे तीसरे गुणस्थान के वधहेतुओ मे मे कम किये गये और अपर्याप्त-अवस्थाभावी कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रिय-मिश्र, ये तीन योग यहाँ सम्भव होने से उनको मिलाने पर छियालीम वध-हेतु होते है।[1]

देशविरतगुणस्थान मे उनतालीम वधहेतु होते है। इसका कारण यह है कि यहा अप्रत्याख्यानावरण कपाय का उदय नही है तथा त्रस-

---

1 दिगम्बर कर्मग्रन्थो (पच-सग्रह, गाथा ८० और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ७८६) मे भी आदि के चार गुणस्थानो मे नाना जीवो और समय की अपेक्षा इसी प्रकार से उत्तर वधहेतुओ की सख्या का निर्देश किया है।

काय की अविरति नही होती है और इस गुणस्थान मे मरण असभव होने से विग्रहगति और अपर्याप्त अवस्था मे सभव कार्मण और औदारिकमिश्र, ये दो योग भी नही होते है। अतएव पूर्वोक्त छियालीस मे से अप्रत्याख्यानावरण कषायचतुष्क, त्रसकाय की अविरति और औदारिकमिश्र, कार्मण, इन सात हेतुओ को कम करने पर उनतालीस वधहेतु होते है।

प्रश्न—देशविरत श्रावक मात्र सकल्प से उत्पन्न त्रसकाय की अविरति से विरत हुआ है, किन्तु आरम्भजन्य अविरति से विरत नहीं हुआ है। आरम्भजन्य त्रस की अविरति तो श्रावक मे है ही। तो फिर बंधहेतुओ मे से त्रस-अविरति को कैसे अलग कर सकते है ?

उत्तर—उपर्युक्त दोष यहाँ घटित नहीं होता है। क्योकि श्रावक यतनापूर्वक प्रवृत्ति करने वाला होने से आरम्भजन्य त्रस की अविरति होने पर भी उसकी विवक्षा नही की है।

प्रमत्तसयत गुणस्थान मे छव्वीस बधहेतु है। छव्वीस बधहेतुओ को मानने का कारण यह है कि इस गुणस्थान मे अविरति सर्वथा नही होती है और प्रत्याख्यानावरण कषायचतुष्क का भी उदय नही है किन्तु लब्धिसम्पन्न चतुर्दश पूर्वधर मुनियो के आहारकद्विक सभव होने से ये दो योग होते है। अत अविरति के ग्यारह भेद[1] और प्रत्याख्यानावरण कषायचतुष्क, कुल पन्द्रह बधहेतुओ को पूर्वोक्त उनतालीस मे से कम करने और आहारक, आहारकमिश्र, इन दो योगो को मिलाने पर छव्वीस बधहेतु माने जाते है तथा अप्रमत्तसयत लब्धिप्रयोग करने वाले नही होने से आहारकशरीर या वैक्रियशरीर का आरम्भ नही करते है। जिससे उनमे आहारकमिश्र अथवा वैक्रियमिश्र, ये दो योग नही होते है। अत पूर्वोक्त छव्वीस मे से वैक्रियमिश्र और आहा-

---

1 त्रसकाय-अविरति को पूर्व मे कम कर देने से यहाँ ग्यारह अविरति भेद कम किये हैं।

रकमिश्र, इन दो योगो को कम करने पर चौबीस बधहेतु[1] अप्रमत्त-सयत नामक सातवे गुणस्थान मे होते है ।

आठवें अपूर्वकरणगणस्थान मे आहारककाययोग और वैक्रिय-काययोग, ये दो योग भी नही होते है। अत अप्रमत्तसयतगुणस्थानवर्ती चौबीस बधहेतुओ मे से इन दो योगो को कम करने पर शेष बाईस ही बधहेतु अपूर्वकरणगुणस्थान मे होते है।

हास्यादिषट्क नोकषायो का अपूर्वकरणगुणस्थान मे ही उदय-विच्छेद होने से नौवें अनिवत्तिबादरसपरायगुणस्थान मे पूर्वोक्त बाईस बधहेतुओ मे से इनको कम करने पर सोलह बधहेतु पाये जाते है तथा अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान मे वेदत्रिक, सज्वलनत्रिक—सज्वलन क्रोध, मान माया का उदयविच्छेद हो जाने से पूर्वोक्त सोलह मे से वेदत्रिक और सज्वलनत्रिक इन छह को कम करने पर सूक्ष्मसप-राय नामक दसवें गुणस्थान मे दस बधहेतु होते है।

सज्वलन लोभ का सूक्ष्मसपरायगुणस्थान मे उदयविच्छेद हो जाने मे ग्यारहवें उपशातमोहगुणस्थान मे मिथ्यात्व, अविरति, कषाय के सम्पूर्ण भेदो और योग के भेदो मे से कार्मण, औदारिकमिश्र, वैक्रिय-द्विक, आहारकद्विक इन छह भेदो का भी उदयविच्छेद पूर्व मे हो जाने से शेष रहे योगरूप नौ बधहेतु होते है। यही नौ बधहेतु बारहवें क्षीण-कषायगुणस्थान मे भी जानना चाहिये।

सयोगिकेवली गुणस्थान मे सत्यमनोयोग, असत्यामषामनोयोग, सत्यवचनयोग, असत्यामृषावचनयोग, कार्मणकाययोग, औदारिककाय-योग और औदारिकमिश्रकाययोग, ये सात बधहेतु होते है। इनमे से केवलिसमुद्घात के दूसरे, छठे और सातवें समय मे औदारिकमिश्र और

---

१ यद्यपि यहाँ आहारक की तरह वैक्रियकाययोग कहा है। परन्तु तत्त्वार्थ सूत्र २/४४ की सिद्धर्षिगणि टीका मे वैक्रिय शरीर बनाकर उत्तरकाल मे अप्रमत्त गुणस्थान मे नही जाता है, ऐसा कहा है। अतएव इस अपेक्षा से अप्रमत्त गुणस्थान मे वैक्रियकाययोग भी घटित नही होता है।

तीसरे, चौथे, पाचवे समय मे कार्मणकाययोग और शेप काल मे औदारिककाययोग होता है। सत्य और असत्यामृषा वचनयोग प्रवचन के समय और दोनो मनोयोग अनुत्तरविमानवासी आदि देवो और अन्य क्षेत्र मे विद्यमान मुनियो द्वारा मन से पूछे गये प्रश्न का उत्तर देते समय होते है।

अयोगिकेवली भगवान शरीर मे रहने पर भी सर्वथा मनोयोग, वचनयोग और काययोग का रोध करने वाले होने से उनके एक भी वधहेतु नही होता है।

इस प्रकार अनेक जीवापेक्षा गुणस्थानो मे सभव मिथ्यात्व आदि वधहेतुओ के पचपन आदि अवान्तर भेद जानना चाहिये।[1] अव एक जीव के एक समय मे जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट से गुणस्थानो मे सभव वधहेतुओ को वतलाते हे।

एक जीव एवं समयापेक्षा गुणस्थानो मे बन्धहेतु

दस दस नव नव अड पच जइतिगे दु दुग सेसयाणेगो।
अड सत्त सत्त सत्तग छ दो दो दो इगि जुया वा ॥६॥

शब्दार्थ—दस दस—दस, दस, नव नव—नौ, नौ, अड—आठ, पच—पाच, जइतिगे—यतित्रिक मे, (प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत, अपूर्वकरण गुणस्थान मे), दुदुग—दो, दो सेसयाणेगो—शेप गुणस्थानो मे एक, अड—आठ, सत्त सत्त सत्तग—सात, सात, सात, छ—छह, दो दो दो—दो, दो, दो, इगि—एक, जुया—साथ, वा—विवक्षा से।

गाथार्थ—एक समय मे एक जीव के कम से कम मिथ्यात्व आदि तेरहवें गुणस्थानपर्यन्त क्रमश दस, दस, नौ, नौ, आठ, यतित्रिक मे पाच, पाच, पाच, दो मे दो, दो और शेष गुणस्थानो मे

---

१ दिगम्बर कर्मसाहित्य मे यहाँ वताई गई अवान्तर वधप्रत्ययो की सख्या मे किन्ही गुणस्थानो की सख्या मे समानता एव भिन्नता भी है। अतएव तुलना की दृष्टि से दिगम्बर कर्मसाहित्य मे दिये गये उत्तर वधप्रत्ययो के वर्णन को परिशिष्ट मे देखिये।

एक, एक हेतु है और उत्कृष्टत उपर्युक्त सख्या मे अनुक्रम से आठ, सात, सात, सात, छह, यतित्रिक मे दो, दो, दो और नौवें मे एक हेतु के मिलाने से प्राप्त सख्या जितने होते है।

विशेषार्थ—गाथा के पूर्वार्ध द्वारा अनुक्रम से एक जीव के एक समय मे मिथ्यात्व आदि गुणस्थानो मे जघन्यत प्राप्त बधहेतु बतलाये है और उत्तरार्ध द्वारा उत्कृष्टपद की पूर्ति के लिये मिलाने योग्य हेतुओ की सख्या का निर्देश किया है, कि मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानो मे जघन्य मे दस आदि और उत्कृष्ट से आठ आदि सख्या को मिलाने से अठारह आदि बधहेतु होते हैं। जिनका तात्पर्यार्थ इस प्रकार है—

पहले मिथ्यादृष्टिगुणस्थान मे जघन्यत एक समय मे एक जीव के एक साथ दस, उत्कृष्टत अठारह और मध्यम ग्यारह से लेकर सत्रह पर्यन्त बधहेतु होते है। इसी प्रकार उत्तर के सभी गुणस्थानो मे मध्यमपद के बधहेतुओ का विचार स्वय कर लेना चाहिये।

सासादन नामक दूसरे गुणस्थान मे जघन्य से दस, उत्कृष्ट सत्रह, मिश्रगुणस्थान मे जघन्य नौ, उत्कृष्ट सोलह, अविरतसम्यग्दृष्टि-गुणस्थान मे जघन्य नौ, उत्कृष्ट सोलह, देशविरतगुणस्थान मे जघन्य आठ, उत्कृष्ट चौदह, यतित्रिक—प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत और अपूर्व-करण गुणस्थानो मे जघन्य पाच, पाच, पाच और उत्कृष्ट सात, सात, सात, अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान मे जघन्य दो, उत्कृष्ट तीन, सूक्ष्म-सपरायगुणस्थान मे जघन्य और उत्कृष्ट दो बधहेतु होते है और शेष रहे उपशान्तमोह, क्षीणमोह और सयोगिकेवल गुणस्थानो मे जघन्य और उत्कृष्ट का भेद नही है। अत प्रत्येक मे अजघन्योत्कृष्ट एक-एक ही बधहेतु है।[1]

---

1 सूक्ष्मसपराय आदि गुणस्थानो मे उनके मिलाने योग्य सख्या नही होने से उसका सकेत नही किया है। अत इन गुणस्थानो मे गाथा के पूर्वार्ध मे कही गई बधहेतुओ की सख्या ही समझना चाहिए।

सरलता से समझने के लिए जिनका प्रारूप इस प्रकार है—

गुणस्थान मि	सा	मि	अवि	दे	प्र अ	अपू	अनि	सू	उ	क्षी	स	अयो
जघन्यपद १०	१०	९	९	८	५,५	५	२	२	१	१	१	×
मध्यमपद ११ से १७	११से१६	१०से१५	१०से१५	९से१३	६,६	६	×	२	१	१	१	×
उत्कृष्टपद १८	१७	१६	१६	१४	७ ७	७	३	२	१	१	१	×

इस प्रकार से प्रत्येक गुणस्थान मे एक जीव की अपेक्षा एक समय मे उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य वधहेतुओ को जानना चाहिए।[1]

अव प्रत्येक गुणस्थान मे जघन्यादि की अपेक्षा बताये गये वधहेतुओ के कारण सहित नाम वतलाते है। सर्वप्रथम मिथ्यात्वगुणस्थान के जघन्यपदभावी हेतुओ का निर्देश करते है।

मिच्छत्त एक्कायादिघाय अन्नयरअक्खजुयलुदओ।
वेयस्स कसायाण य जोगस्सणभयदुगछा वा ॥७॥

शब्दार्थ—मिच्छत्त—मिथ्यात्व, एक्ककायादिघाय—एक कायादिघात, अन्नयर—अन्यतर, अक्ख—इन्द्रिय, जुयल—युगल, उदओ—उदय, वेयस्स—वेद का, कसायाण—कपाय का य—और, जोगस्स—योग का, अण—अनन्तानुवधी, भयदुगछा—भय, जुगप्सा, वा—विकल्प मे।

गाथार्थ—मिथ्यात्वगुणस्थान मे एक मिथ्यात्व, एक कायादि का घात, अन्यतर इन्द्रिय का असयम, एक युगल, अन्यतर वेद, अन्यतर क्रोधादि कपायचतुष्क, अन्यतर योग इस तरह जघन्यत दस वधहेतु होते है और अनन्तानुवधी तथा भय,जुगुप्सा विकल्प से उदय मे होते है। अर्थात् कभी उदय मे होते है और कभी नही होते है।

---

१ दिगम्बर कर्मग्रन्थो मे भी इसी प्रकार मे प्रत्येक गुणस्थान मे एक जीव की अपेक्षा एक समय मे वधहेतुओ का निर्देश किया है—

दस अट्ठारस दसय सत्तर णव सोलस च दोण्ह पि।
अट्ठ य चउदस पणय सत्त तिए दु ति दु एगेग ॥

—पचसग्रह ४ | १०१
—गो-कर्मकाण्ड ७९२

विशेषार्थ—मिथ्यात्वगुणस्थान मे एक समय मे एक साथ जघन्यत जितने बधहेतु होते है, उनको गाथा मे बताया है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

मिथ्यात्व के पांच भेदो मे से कोई एक मिथ्यात्व, छह काय के जीवो मे से एक, दो आदि काय की हिंसा के भेद से काय की हिंसा के छह भेद होते है। यथा—छह काय मे से जब बुद्धिपूर्वक एक काय की हिंसा करे तब एक काय का घातक, किन्ही दो काय की हिसा करे तब दो काय का घातक, इसी प्रकार से तीन, चार, पाच की हिसा करे तब अनुक्रम से तीन, चार और पाच काय का घातक और छहो काय की एक साथ हिंसा करे तो पट्काय का घातक कहलाता है। अत इन छह कायघात भेदो मे से अन्यतर एक कायघात भेद तथा श्रोत्रादि पाच इन्द्रियो मे से किसी एक इन्द्रिय का असयम[1] और हास्य-रति एव शोक-अरति, इन दोनो युगलो मे से किसी एक युगल का उदय, वेदत्रिक मे से अन्यतर किसी एक वेद का उदय, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन इन तीन कषायो मे से कोई भी क्रोधादि तीन कषायो का उदय। क्योकि कषायो मे क्रोध, मान, माया और लोभ का एक साथ उदय नही होता है परन्तु अनुक्रम से उदय मे आती है। इसलिये जब क्रोध का उदय हो तब मान, माया या लोभ का उदय नही होता है। मान का उदय होने पर क्रोध, माया और लोभ का उदय नही होता है। इसी प्रकार माया और लोभ के लिए भी समझना चाहिये। परन्तु जब अप्रत्याख्यानावरणादि क्रोध का उदय हो तब प्रत्याख्यानावरणादि क्रोध का भी उदय होता है। इसी तरह मान, माया, लोभ के लिए भी समझना चाहिए। ऐसा नियम है कि ऊपर के क्रोधादि

---

१ मन का असयम पृथक् होने पर भी इन्द्रियो के असयम की तरह अलग नही बताने का कारण यह है कि मन के असयम से ही इन्द्रिय असयम होता है। अत इन्द्रियो के असयम से मन के असयम को अलग न गिनकर इन्द्रिय असयम के अन्तर्गत ग्रहण कर लिया है।

का उदय होने पर नीचे के क्रोधादि का अवश्य उदय होता है। इसीलिए यहाँ अप्रत्याख्यानावरणादि कषायो मे से क्रोधादित्रिक का ग्रहण किया है तथा दस योगो मे से कोई भी एक योग। इस प्रकार मिथ्यात्व गुणस्थान मे जघन्य से एक साथ दस बधहेतु होते है।

सरलता से समझने के लिए जिनका अकस्थापनाविप्रक प्रारूप इस प्रकार जानना चाहिए—

मि०	इ०	का०	कषाय	वे०	युगलद्विक	योग०
१	१	१	३	१	२	१

प्रश्न—योग के पन्द्रह भेद है। तो फिर यहाँ पन्द्रह योगो की बजाय दस योगो मे से एक योग कहने का क्या कारण है ?

उत्तर—मिथ्यादृष्टिगुणस्थान मे आहारकद्विक हीन शेष तेरह योग सभव है। क्योकि यह पूर्व मे बताया जा चुका है कि आहारक और आहारकमिश्र, ये दोनो काययोग लब्धिसम्पन्न चतुर्दश पूर्वधर को आहारकलब्धिप्रयोग के समय होते है। इसलिए आहारकद्विक काययोग मिथ्यादृष्टि मे सभव ही नही तथा उसमे भी जब अनन्तानुबधी कषाय का उदय न हो तब दस योग ही सभव है।

यदि यह कहो कि अनन्तानुबधी के उदय का अभाव मिथ्यादृष्टि के कैसे सम्भव है ? तो इसका उत्तर यह है कि किसी जीव ने सम्यग्दृष्टि होने के पूर्व अनन्तानुबंधो की विसयोजना की और वह मात्र विसयोजना करके ही रुक गया, किन्तु विशुद्ध अध्यवसाय रूप तथाप्रकार की सामग्री के अभाव मे मिथ्यात्व आदि के क्षय के लिए उसने प्रयत्न नही किया और उसके बाद कालान्तर मे मिथ्यात्वमोह के उदय से मिथ्यात्वगुणस्थान मे गया और वहाँ जाकर मिथ्यात्वरूप हेतु के द्वारा अनन्तानुबधी का बध किया और बाँधे जा रहे उस अनन्तानुबधी मे प्रतिसमय शेप चारित्रमोहनीय के दलिको को सक्रमित किया और सक्रमित करके अनन्तानुबधी के रूप मे परिणमाया, अत जब तक सक्रमावलिका पूर्ण न हो तब तक मिथ्यादृष्टि होने और अनन्तानुबधी को बाँधने पर भी एक आवलिका कालप्रमाण

उसका उदय नहीं होता है[1] और उसके उदय का अभाव होने से मरण नहीं होता है। क्योंकि सत्कर्म आदि ग्रन्थों में अनन्तानुबंधी कषायों के उदय बिना के मिथ्यादृष्टि के मरण का निषेध किया है, जिससे भवान्तर में जाते समय जो सम्भव हैं ऐसे वैक्रियमिश्र, औदारिकमिश्र और कार्मण, ये तीन योग भी नहीं होते हैं। इसी कारण यह कहा गया है कि दस योग में से कोई एक योग होता है।[2]

अनन्तानुबन्धी, भय और जुगुप्सा का उदय विकल्प से होता है। अर्थात् किसी समय उदय होता है और किसी समय नहीं होता है।

१

इसलिये जब उनका उदय नही है तब जघन्यपद मे पूर्वोक्त दस बधहेतु होते है ।

इस प्रकार मिथ्यात्वगुणस्थान मे जघन्यपदभावी दस बधहेतुओ को समझना चाहिए। अब मिथ्यात्व आदि भेदो का विकल्प से परिवर्तन करने पर जो अनेक भग सम्भव है, उनके जानने का उपाय बतलाते है ।

मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती बधहेतुओ के भग

> **इच्चेसिमेगगहणे तस्सखा भगया उ कायाण ।**
> **जुयलस्स जुय चउरो सया ठवेज्जा कसायाण ॥८॥**

शब्दार्थ—**इच्चेसि**—इनमे से, **एगगहणे**—एक का ग्रहण करके, **तस्सखा**—उनकी सख्या, **भगया**—भग, **उ**—और, **कायाण**—काय के भेदो की, **जुयलस्स**—युगल के, **जुय**—दो, **चउरो**—चार, **सया**—सदा **ठवेज्जा**—स्थापित करना चाहिए **कसायाण**—कषायो के ।

गाथार्थ—भंगो की सख्या प्राप्त करने के लिए मिथ्यात्व के एक-एक भेद को ग्रहण करके उनके भेदो की सख्या, काय के भेदो की सख्या, युगल के स्थान पर दो और कषाय के स्थान पर चार की सख्या स्थापित करना चाहिए—रखना चाहिए ।

विशेषार्थ—गाथा मे मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती अनेक जीवो के आश्रय से एक समय मे होने वाले बन्धहेतुओ की सख्या के भगो को प्राप्त करने का उपाय बतलाया है। जिसका स्पष्टोकरण इस प्रकार है—

पूर्व की गाथा मे यह बताया है कि पाच मिथ्यात्व मे से एक मिथ्यात्व, छह काय मे से किसी एक काय का घात, पाच इन्द्रियो मे से किसी एक इन्द्रिय का असयम, युगलद्विक मे से कोई एक युगल, वेदत्रिक मे से कोई एक वेद, क्रोधादि चार कषायो मे से कोई एक क्रोधादि कषाय और दस योगो मे से किसी एक योग का ग्रहण करने से मिथ्यात्व गुणस्थान मे एक जीव के आश्रय से एक समय मे जघन्य से दस बधहेतु होते हैं ।

अब यदि एक समय मे अनेक जीवो के आश्रय से भगो की संख्या प्राप्त करना हो तो मिथ्यात्व आदि के भेदो की सम्पूर्ण सख्या स्थापित करना चाहिए। क्योंकि एक जीव को तो एक साथ मिथ्यात्व के सभी भेदो का उदय नही होता है। किसी को एक मिथ्यात्व का तो किसी को दूसरे मिथ्यात्व का उदय होता है तथा उपयोगपूर्वक जिस इन्द्रिय के असयम मे प्रवृत्त हो, उसको ग्रहण किये जाने से एक जीव को किसी एक इन्द्रिय का असयम होता है और किसी को दूसरी इन्द्रिय का, इसी प्रकार किसी को एक काय का घात और वेद होता है तो किसी को दूसरे काय का घात और वेद होता है। इसलिए मिथ्यात्व आदि के स्थान पर उन के समस्त अवान्तर भेदो की सख्या इस प्रकार रखना चाहिए—

मिथ्यात्व के पाच भेद है, अत उसके स्थान पर पाच का अक, उसके बाद पृथ्वीकायादि के घात के आश्रय से काय के छह भेद होने से छह की सख्या और तत्पश्चात् इन्द्रिय असयम के पाच भेद होने से उसके स्थान पर पाच की सख्या रखना चाहिये।

प्रश्न—पाच इन्द्रिय और मन, इस तरह इन्द्रिय असयम के छह भेद होने पर भी इन्द्रिय के स्थान पर छह के बजाय पाच अक रखने का क्या कारण है ?

उत्तर—इन्द्रियो की प्रवृत्ति के साथ मन का सम्बन्ध जुडा हुआ है। अत पाचो इन्द्रियो की अविरति के अन्तर्गत ही मन की अविरति का भी ग्रहण किये जाने से मन की अविरति होने पर भी उसकी विवक्षा नही की है। इसीलिए इन्द्रिय असयम के स्थान पर पाच की सख्या रखने का सकेत किया है।[1]

तत्पश्चात् हास्य-रति और अरति-शोक, इन युगलद्विक के स्थान पर दो के अक की स्थापना करना चाहिए। क्योंकि इन दोनो युगलो का

---

१ दि कर्मग्रन्थ पचसग्रह गाथा १०३, १०४ (शतक अधिकार) मे इन्द्रिय असयम के छह भेद मानकर छह का अक रखने का निर्देश किया है।

उदय क्रमपूर्वक होता है, युगपत् नही। हास्य का उदय होने पर रति का उदय तथा शोक का उदय होने पर अरति का उदय अवश्य होता है। इसीलिए हास्य-रति और शोक-अरति, इन दोनो युगलो को ग्रहण करने के लिए दो का अक रखने का सकेत किया है।

इसके बाद तीन वेदो का क्रमपूर्वक उदय होने से वेद के स्थान पर तीन का अक रखना चाहिये और क्रोध, मान माया और लोभ का क्रमपूर्वक उदय होने से कषाय के स्थान पर चार का अक रखना चाहिए। यद्यपि दस हेतुओ मे अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन इन तीन कषायो के भेद मे तीन हेतु लिए है। परन्तु अप्रत्याख्यानावरण क्रोध का उदय होने पर उसके बाद के प्रत्याख्यानावरणादि क्रोध का उदय अवश्य होता है। इसी प्रकार मान आदि का उदय होने पर तीन मानादि का एक साथ उदय होता है। लेकिन क्रोध, मान आदि का उदय क्रमपूर्वक होने से अकस्थापना मे कषाय के स्थान पर चार ही रखे जाते हैं। तत्पश्चात् योग की प्रवृत्ति क्रमपूर्वक होने से योग के स्थान पर दस की सख्या रखना चाहिए।

सरलता से समझने के लिए उक्त अकस्थापना का रूपक इस प्रकार का है—

मिथ्यात्व	काय	इन्द्रिय	अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
५	६		५	२	३	४	१०

अब इस जघन्यपदभावी अकस्थापना एव मध्यम व उत्कृष्ट बन्धहेतुओ से प्राप्त भगसख्या का प्रमाण बतलाते हैं।

बधहेतुओ के भगो का प्रमाण

जा बायरो ता घाओ विगप्प इइ जुगवबन्धहेऊणं।
अणबन्धि भयदुगछाण चारणा पुण विमज्झेसु ॥६॥

शब्दार्थ—जा—जहाँ तक, बायरो—बादरसपराय, ता—वहाँ तक, घाओ—गुणाकार, विगप्प—विकल्प, इइ—इस प्रकार जुगव—एक साथ, बन्धहेऊण—बन्धहेतुओ के, अणबन्धि—अनन्तानुबधी, भयदुगछाण—

भय, जुगुप्सा का, चारणा—बदलना, पुण—पुन, विमज्झेसु—मध्यम विकल्पों में।

गाथार्थ—जहाँ तक बादरसंपराय (कषाय) है, वहाँ तक अर्थात् नौवें बादरसंपरायगुणस्थान तक अनुक्रम से स्थापित अंकों का गुणाकार करने से अनेक जीवाश्रित होने वाले बंधहेतुओं के विकल्प होते हैं। मध्यम विकल्पों में अनन्तानुबंधी, भय और जुगुप्सा की चारणा करना चाहिये।

विशेषार्थ—गाथा में मिथ्यात्व गुणस्थान के जघन्य से लेकर उत्कृष्ट बन्धहेतुओं तक के भंग प्राप्त करने का नियम बताया है कि अनिवृत्तिबादरसंपरायगुणस्थानपर्यन्त पूर्वोक्त प्रकार से स्थापित अंकों का परस्पर गुणा करने पर एक समय में अनेक जीवों की अपेक्षा बन्धहेतुओं के विकल्प होते हैं।

इस नियम के अनुसार अत्र मिथ्यादृष्टिगुणस्थान में बनने वाले भंगों की संख्या बतलाते हैं कि एक जीव के एक समय में बताये गये दस बंधहेतुओं के अनेक जीवापेक्षा छत्तीस हजार भंग होते हैं। जो इस प्रकार समझना चाहिये—

अवान्तर भेदों की अपेक्षा मिथ्यात्व के पांच प्रकार हैं। ये पांचों भेद एक-एक कायघात में संभव हैं। जैसे कि कोई एक आभिग्रहिक मिथ्यादृष्टि पृथ्वीकाय का वध करता है तो कोई अप्काय का वध करता है। इसी प्रकार कोई तेज, कोई वायु, कोई वनस्पति और कोई त्रस काय का वध करता है। जिससे आभिग्रहिक मिथ्यादृष्टि काय की हिंसा के भेद से छह प्रकार का होता है। इसी प्रकार अन्य मिथ्यात्व के प्रकारों के लिये भी समझना चाहिए। जिससे पांच मिथ्यात्वों की छह कायों की हिंसा के साथ गुणा करने पर (६×५=३०) तीस भेद हुए।

उपर्युक्त सभी तीस भेद एक-एक इन्द्रिय के असंयम में होते हैं। जैसे कि उक्त तीसों भेदों वाला कोई स्पर्शनेन्द्रिय की अविरति वाला होता है, दूसरा रसनेन्द्रिय की अविरति वाला होता है। इस प्रकार तीसरा, चौथा, पांचवां तीस-तीस भेद वाला जीव क्रमशः घ्राण, चक्षु और श्रोत्र

इन्द्रिय की अविरति वाला होता है। इसलिए तीस को पाच इन्द्रियो की अविरति के साथ गुणा करने पर (३०×५=१५०) एक सौ पचास भेद हुए।

ये एक सौ पचास भेद हास्य-रति के उदय वाले होते है और दूसरे एक सौ पचास भेद शोक-अरति के उदय वाले होते है। इसलिए उनका युगलद्विक से गुणा करने पर (१५०×२=३००) तीन सौ भेद हुए।

ये तीन सौ भेद पुरुषवेद के उदयवाले होते है, दूसरे तीन सौ भेद स्त्रीवेद के उदयवाले और तीसरे तीन सौ भेद नपु सकवेद के उदयवाले होते है। अतएव पूर्वोक्त तीन सौ भेदो का वेदो के साथ गुणा करने पर (३००×३=९००) नौ सौ भग हुए।

ये नौ सौ भेद अप्रत्याख्यानावरणादि तीन क्रोध वाले और इसी प्रकार दूसरे, तीसरे और चौथे नौ सौ अप्रत्याख्यानावरणादि मान, माया और लोभ वाले होते है। इसलिये नौ सौ भेदो को चार कपायो से गुणा करने पर (९००×४=३६००) छत्तीस सौ भेद हुए।

उक्त छत्तीस सौ भेद योग के दस भेदो मे से किसी न किसी योग से युक्त होते है। अत छत्तीस सौ भेदो को दस योगो से गुणा करने पर (३६००×१०=३६०००) छत्तीस हजार भेद हुए।

इस प्रकार से एक समय मे एक जीव मे प्राप्त होने वाले जघन्य दस बघहेतुओ के उसी समय मे अनेक जीवो की अपेक्षा उन मिथ्यात्वादि के भेदो को बदल-बदल कर प्रक्षेप करने पर छत्तीस हजार भग[1] होते

---

१ दिगम्बर कार्मग्रन्थिक आचार्यो ने अनेक जीवो की अपेक्षा मिथ्यात्वगुणस्थान के जघन्यपद मे ४३२०० भग बतलाये है। ये भग इन्द्रिय असयम पाँच की बजाय छह भेद मानने की अपेक्षा जानना चाहिये। जिनकी अक-रचना का प्रारूप इस प्रकार है—५×६×६×४×३×२×१०=४३२००। यह कथन विवक्षाभेद का द्योतक है। यहाँ ३६००० भग मन के असयम को पाच इन्द्रियो के असयम मे गर्भित कर लेने से इन्द्रिय असयम के पाच भेद मानकर कहे है।

है। ग्यारह आदि बन्धहेतुओ मे भी मिथ्यात्व आदि के भेदो को बदल-कर गुणा करने की भी यही रीति है। अत अब ग्यारह आदि बंधहेतुओ के भगो का प्रतिपादन करते है।

ग्यारह आदि बंधहेतुओ के भग

ये ग्यारह आदि हेतु अनन्तानुबधी कषाय, भय और जुगुप्सा को बदल बदल कर लेने और काय के वध की वृद्धि करने से होते है। जिनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

१ पूर्वोक्त दस बधहेतुओ मे भय को मिलाने पर ग्यारह हेतु होने हैं।[1] उनके भग पूर्व मे कहे गये अनुसार छत्तीस हजार होते है।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर ग्यारह होते है। यहाँ भी भग छत्तीस हजार होते है।

३ अथवा अनन्तानुबधी क्रोधादि चार मे से किसी एक को मिलाने पर ग्यारह हेतु होते है। लेकिन अनन्तानुबधी का उदय होने पर योग तेरह होते है। क्योकि मिथ्यादृष्टि के अनन्तानुबधी का उदय होने पर मरण सभव होने से अपर्याप्त अवस्थाभावी कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र, ये तीन योग सभव है। अत कषाय के साथ गुणा करने पर पूर्व मे जो छत्तीस सौ भग प्राप्त हुए थे, उनको दस के बदले तेरह योगो मे गुणा करने पर (३६०० × १३ = ४६८००) छियालीस हजार आठ सौ भग होते है।

---

1 भय अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर ग्यारह बधहेतु तथा भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर बारह हेतु के भग छत्तीस हजार ही होगे, अधिक नही। क्योकि भय और जुगुप्सा परस्पर विरोधी नही हैं, जिससे एक-एक के साथ गुणा करने पर भी छत्तीस हजार ही भग होते हैं। युगलद्विक की तरह यदि परस्पर विरोधी हो, यानि एक जीव को भय और दूसरे जीव को जुगुप्सा हो तो दोनो से गुणा करने पर पदभग बढेंगे। परन्तु भय और जुगुप्सा दोनो का एक समय मे एक जीव के उदय हो सकता है, जिससे उनकी भगसख्या मे वृद्धि नही होगी।

४ अथवा पूर्वोक्त जघन्य दस वधहेतुओ मे पृथ्वीकाय आदि छह काय मे से कोई भी दो काय के वध को गिनने पर ग्यारह हेतु होते हैं। क्योकि दस हेतुओ मे पहले से ही एक काय का वध ग्रहण किया गया है और यहाँ एक काय का वध और मिलाया है। जिससे दस के साथ एक को और मिलाने से ग्यारह हेतु हुए। छह काय के द्विकसयोग मे पन्द्रह भग होते है। इसलिये कायघात के स्थान पर (१५) पन्द्रह का अक रखना चाहिये, जिससे मिथ्यात्व के पाच भेदो के साथ दो काय की हिंसा के द्विकसयोग से होने वाले पन्द्रह भगो के साथ गुणा करने पर (१५×५=७५) पचहत्तर भग होते है और इन पचहत्तर भगो का पाच इन्द्रियो के असयम द्वारा गुणा करने पर (७५×५=३७५) तीन सौ पचहत्तर भग हुए। इन तीन सौ पचहत्तर को युगलद्विक से गुणा करने पर (३७५×२=७५०) सात सौ पचास भग हुए और इन सात सौ पचास को तीन वेदो से गुणा करने पर (७५०×३=२,२५०) दो हजार दो सौ पचास भग हुए और इनको चार कषाय से गुणित करने पर (२,२५०×४=९०००) नौ हजार हुए और इन नौ हजार को दस योगो के साथ गुणा करने से (९०००×१०=९०,०००) नव्वे हजार भग हुए।

इस प्रकार ग्यारह बधहेतु के चार प्रकार है और मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे चारो प्रकारो के कुल मिलाकर (३६,०००+३६,०००+४६,८००+९०,०००=२,०८,८००) दो लाख आठ हजार आठ सौ भग होते है।

इस प्रकार से ग्यारह वधहेतुओ के भगो का विचार करने के पश्चात् अब वारह वधहेतुओ के भगो को बतलाते है।

१ पूर्वोक्त जघन्य दस वधहेतुओ मे भय और जुगुप्सा, दोनो का प्रक्षेप करने पर बारह हेतु होते है। इसके भी पूर्व मे कहे गये अनुसार छत्तीस हजार भग होते है।

२ अथवा अनन्तानुवधी और भय का प्रक्षेप करने पर भी वारह वधहेतु होते है। लेकिन यहाँ अनन्तानुवधी के उदय मे तेरह योगो को लेने के कारण पहले की तरह (४६८००) छियालीस हजार आठ सौ भंग हुए।

३ अथवा अनन्तानुबधी और जुगुप्सा को मिलाने पर भी बारह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् (४६८००) छियालीस हजार आठ सौ भग हुए।

४ अथवा एक काय के स्थान पर कायत्रय के वध को ग्रहण करने पर बारह हेतु होते है। छह काय के त्रिकसयोग मे बीस भग होते है। इसलिये कायघात के स्थान पर बीस का अक रखकर गुणा करना चाहिये। वह इस प्रकार—

मिथ्यात्व के पाच भेदो का कायहिसा के त्रिकसयोग से होने वाले बीस भगो के साथ गुणा करने पर (२०×५=१००) सौ भग हुए और इन सौ को पाच इन्द्रियो की अविरति से गुणा करने पर (१००×५=५००) पाच सौ भग हुए और इन पाच सौ को युगलद्विक से गुणा करने पर (५००×२=१०००) एक हजार हुए और इनको तीन वेद से गुणा करने पर (१०००×३=३०००) तीन हजार हुए। इन तीन हजार को चार कषाय से गुणा करने पर (३०००×४=१२,०००) बारह हजार हुए और इनको भी दस योगो से गुणा करने पर (१२,०००×१०=१,२०,०००) एक लाख बीस हजार भग हुए।

५ अथवा भय और कायद्विक की हिसा का प्रक्षेप करने पर बारह हेतु होते है। इनके भी पूर्व को तरह (९०,०००) नव्वे हजार भंग हुए।

६ इसी प्रकार जुगुप्सा और कायद्विक की हिसा का प्रक्षेप करने पर भी (९०,०००) नव्वे हजार भंग हुए।

७ अथवा अनन्तानुबधी और कायद्विक की हिसा का प्रक्षेप करने पर भी बारह हेतु होते है। यहाँ कायहिसा के स्थान पर द्विकसयोग मे होने वाले पन्द्रह भग तथा अनन्तानुबधी का उदय होने मे तेरह योग रखना चाहिये और पूर्व मे कही गई विधि के अनुसार गुणा करने पर (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होते है।

इस प्रकार बारह हेतु सात प्रकार से होते है। जिनके भगो का कुल योग (३६०००+४६८००+४६८००+१,२०,०००+९०,०००+

+९०,०००+१,१७,०००=५,४६,६००) पाच लाख छियालीस हजार छह सौ होता है।

अब तेरह हेतुओ के भगो को वतलाते है—

१ पूर्वोक्त जघन्यपदभावी दस बधहेतुओ मे भय, जुगुप्सा और अनन्तानुबधी का युगपत् प्रक्षेप करने पर तेरह बधहेतु होते हैं। अनन्तानुवधी के उदय मे तेरह योग लेने से पूर्व की तरह (४६,८००) छियालीस हजार आठ सौ भग हुए।

२ अथवा दस वधहेतुओ मे ग्रहण किये गये एक काय के बदले कायचतुष्क को लेने पर भी तेरह हेतु होते है। छह काय के चतुष्कसयोगी पन्द्रह भग होते है। अत कायवध के स्थान पर पन्द्रह का अक रखने के पश्चात पूर्वक्रम से व्यवस्थापित अको का गुणा करने पर (९०,०००) नब्बे हजार भग हुए।

३ अथवा भय और कायत्रिक की हिंसा को लेने पर भी तेरह हेतु होते है और छह काय के त्रिकसयोग बीस भग होने से कायवध के स्थान पर वीस का अक रखना चाहिये और गुणाकार करने पर (१,२०,०००) एक लाख वीस हजार भग हुए।

४ इसी प्रकार जुगुप्सा और कायत्रिक को मिलाने से भी तेरह हेतु होते है। इनके भी (१,२०,०००) एक लाख बीम हजार भग होगे।

५ अथवा अनन्तानुवधी और कायत्रिक के वध को ग्रहण करने से भी तेरह हेतु होते है। जिनके पूर्वोक्त विधि के अनुसार अको का गुणाकार करने पर (१,५६ ०००) एक लाख छप्पन हजार भग हुए।

६ अथवा भय, जुगुप्सा और कायद्विक की हिंसा को ग्रहण करने से भी तेरह हेतु होते है। उमके (९०,०००) नब्बे हजार भंग हुए।

७ अथवा भय, अनन्तानुवधी और कायद्विक को लेने पर भी तेरह हेतु होते है। उनके भी पूर्व की तरह (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होगे।

८ इसी प्रकार अनन्तानुवधी, जुगुप्सा और कायद्विक वध को लेने पर भी (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होगे।

इस प्रकार तेरह बधहेतु आठ प्रकार से होते है। जिनके कुल भग (४६,८००+६०,००० + १,२०,००० + १,२०,००० + १,५६,०००+ ६०,०००+१,१७,०००+१,१७,००० = ८,५६,८००) आठ लाख छप्पन हजार आठ सौ होते है।

इस तरह तेरह हेतुओ के आठ प्रकारो और उनके भगो को जानना चाहिए। अब चौदह बधहेतुओ के प्रकारो और उनके भगो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त जघन्यपदभावी दस बधहेतुओ मे एक कायवध के स्थान पर कायपचक के वध को ग्रहण करने पर चौदह बधहेतु होते है। छह काय के पाच के सयोग मे छह भग होते है। अत कायवध के स्थान पर छह का अक रखकर पूर्वोक्त रीति से अको का गुणा करने से (३६,०००) छत्तीस हजार भग होते है।

२ अथवा भय और कायचतुष्कवध को ग्रहण करने पर भी चौदह हेतु होते है और छह काय के चतुष्कसयोग मे पन्द्रह भग होते है। अतएव कायवध के स्थान पर पन्द्रह को रखने पर पूर्वोक्त प्रकार से अको का परस्पर गुणा करने से (९०,०००) नब्बे हजार भग होगे।

३ इसी प्रकार जुगुप्सा और कायचतुष्कवध को लेने पर भी चौदह हेतु होते है। इनके (९०,०००) नब्बे हजार भग होगे।

४ अथवा अनन्तानुबधी और कायचतुष्कवध लेने पर भी चौदह हेतु होते है। अनन्तानुबधी के उदय मे योग तेरह होते है और कायचतुष्क के सयोगी पन्द्रह भग होते है इसलिए योग के स्थान पर तेरह और कायवध के स्थान पर पन्द्रह रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (११७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होगे।

५ अथवा भय, जुगुप्सा और कायत्रिक के वध को ग्रहण करने से भी चौदह हेतु होते है। कायत्रिक के सयोग के बीस भग होते है। अत कायवध के स्थान पर बीस का अक रखकर अको का परस्पर गुणा करने पर (१,२०,०००) एक लाख बीस हजार भग होगे।

६ अथवा भय, अनन्तानुबन्धी और कायत्रिकवध को लेने से भी चौदह हेतु होते है। उनके पूर्ववत् (१,५६,०००) एक लाख छप्पन हजार भग होगे।

७ इसी प्रकार जुगुप्सा, अनन्तानुबधी और कायत्रिकवध के भी (१,५६,०००) एक लाख छप्पन हजार भग होगे।

८ अथवा भय, जुगुप्सा, अनन्तानुवधी और कायद्विकवध को लेने पर भी चौदह हेतु होते है। उनके पूर्वोक्त विधि के अनुसार गुणा करने पर (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होगे।

इस प्रकार चौदह वधहेतु आठ प्रकार से होते है और इनके कुल भगो की सख्या (३६,०००+६०,०००+६०,०००+१,१७,०००+१,२०,०००+१,५६,०००+१,५६,०००+१,१७,०००=८८२०००) आठ लाख बयासी हजार होती है।

अव पन्द्रह वधहेतु के प्रकारो व भगो का प्रतिपादन करते है—

१ पूर्वोक्त दस वधहेतुओ मे छहो काय की हिसा को ग्रहण करने से पन्द्रह हेतु होते है। कायहिसा का छह के सयोग मे एक ही भग होता है। अत पूर्वोक्त अको मे कायवध के स्थान पर एक का अक रखकर अनुक्रम से अको का गुणा करने पर (६,०००) छह हजार भग होते है।

२ अथवा भय और कायपचकवध को ग्रहण करने से भी पन्द्रह हेतु होते है। छह काय के पाच के सयोग मे छह भग होते हैं। उनका पूर्वोक्त क्रम से गुणा करने पर (३६,०००) छत्तीस हजार भग होते है।

३ इसी तरह जुगुप्सा और कायपचकवध के भी (३६,०००) छत्तीस हजार भग जानना चाहिए।

४ अथवा अनन्तानुवधी और कायपचकवध लेने से भी पन्द्रह हेतु होते हैं। अनन्तानुवन्धी के उदय मे तेरह योग लिये जाने और कायहिसा के पाच के सयोग मे छह भग होने से योग और काय के

स्थान पर तेरह और छह को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (४६,८००) छियालीस हजार आठ सौ भग होते है ।

५ अथवा भय, जुगुप्सा और कायचतुष्कवध के ग्रहण से भी पन्द्रह हेतु होते है । उनके भग (६०,०००) नब्बे हजार होते है ।

६ अथवा भय, अनन्तानुबधी और कायचतुष्कवध के ग्रहण से भी पन्द्रह हेतु होते है । इनके भी पहले की तरह (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होते है ।

७ इसी तरह जुगुप्सा, अनन्तानुबधी और कायचतुष्कवध से बनने वाले पन्द्रह हेतुओ के भी (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होते है ।

८ अथवा भय, जुगुप्सा, अनन्तानुबधी और कायत्रिकवध को लेने से भी पन्द्रह हेतु होते है । इनके (१,५६,०००) एक लाख छप्पन हजार भग होते है ।

इस प्रकार पन्द्रह हेतु आठ प्रकार से होते है और इनके कुल भग (६,०००+३६,०००+३६,०००+४६,८००+६०,०००+१,१७,०००+१,१७,०००+१,५६,०००=६,०४,८००) छह लाख चार हजार आठ सौ होते है ।

पन्द्रह हेतुओ के प्रकार और उन प्रकारो के भगो की सख्या बतलाने के बाद अब सोलह बधहेतुओ के प्रकार और उनके भगो का प्रतिपादन करते है—

१ पूर्वोक्त दस बधहेतुओ मे भय और छहकायवध को ग्रहण करने पर सोलह हेतु होते है । पूर्वोक्त क्रमानुसार उनका गुणा करने पर (६,०००) छह हजार भग होते है ।

२ इसी प्रकार जुगुप्सा और छहकायहिंसा को मिलाने से भी सोलह हेतु होते है । पूर्वोक्त क्रमानुसार उनका गुणा करने पर (६,०००) छह हजार भग होते है ।

३ अथवा अनन्तानुबधी और छह काय के वध को मिलाने पर भी सोलह हेतु होते है। उनके ५×५×१×२×३×४×१३, इस क्रम से अको का गुणाकार करने पर (७,८००) सात हजार आठ सौ भग होते है।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायपचकवध को मिलाने से भी सोलह हेतु होते है। उनके भी पूर्व की तरह (३६,०००) छत्तीस हजार भग होते हैं।

५ अथवा भय, अनन्तानुबधी और कायपचकवध को मिलाने पर भी सोलह हेतु होते है। उनके (४६,८००) छियालीस हजार आठ सौ भग होते है।

६ इसी प्रकार जुगुप्सा, अनन्तानुबधी और पाच काय के वध को मिलाने पर भी सोलह हेतु होते है। उनका पूर्वोक्त प्रकार से गुणा करने पर (४६,८००) छियालीस हजार आठ सौ भग होते हैं।

७ अथवा भय, जुगुप्सा, अनन्तानुबधी और कायचतुष्कवध को मिलाने पर भी सोलह हेतु होते है। उनके पहले की तरह (१,१७,०००) एक लाख सत्रह हजार भग होते है।

इस प्रकार सोलह हेतु सात प्रकार से बनते है और उनके कुल भग (६,०००+६,०००+७,८००+३६,०००+४६,८००+४६,८००+१,१७,०००=२,६६,४००) दो लाख छियासठ हजार चार सौ होते है।

सोलह हेतुओ के प्रकार और उनके भगो को बतलाने के बाद अब सत्रह बधहेतुओ के प्रकार व भगो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त जघन्यपदभावी दस हेतुओ मे भय, जुगुप्सा और कायषट्कवध को मिलाने पर सत्रह हेतु होते है। उनका पूर्वोक्त क्रमानुसार अको का गुणा करने पर (६,०००) छह हजार भग होते है।

२ अथवा भय, अनन्तानुबंधी और कायषट्क की हिंसा को मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते हैं। उनके पूर्ववत् (७,८००) सात हजार आठ सौ भंग होंगे।

३ इसी प्रकार जुगुप्सा, अनन्तानुबंधी और छह काय की हिंसा को मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते हैं। उनके भी (७,८००) सात हजार आठ सौ भंग होंगे।

४ अथवा भय, जुगुप्सा, अनन्तानुबंधी और कायपंचक का वध मिलाने से भी सत्रह हेतु होते हैं। उनके (४६,८००) छियालीस हजार आठ सौ भंग होते हैं।

इस प्रकार सत्रह बंधहेतु के चार प्रकार हैं और उन चारों प्रकारों के कुल भंग (६,०००+७,८००+७,८००+४६,८००=६८,४००) अड़सठ हजार चार सौ होते हैं।

अब मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती जघन्य और मध्यम पदभावी बंध-हेतुओं के प्रकारों और उनके भंगों का विचार करने के पश्चात् उत्कृष्ट पदभावी बंधहेतु और उनके भंगों का प्रतिपादन करते हैं—

पूर्वोक्त दस बंधहेतुओं में छह काय का वध, भय, जुगुप्सा और अनन्तानुबंधी को मिलाने से अठारह हेतु होते हैं। उसके कुल भंग (७,८००) सात हजार आठ सौ होते हैं। इसमें विकल्प नहीं होने से प्रकार नहीं हैं।

इस प्रकार मिथ्यात्वगुणस्थान के दस से लेकर अठारह हेतुओं पर्यन्त भंगों का कुल जोड़ (३४७७६००) चौंतीस लाख सतहत्तर हजार छह सौ है।

मिथ्यात्वगुणस्थान के बंधहेतुओं के विकल्पों व उनके भंगों का सरलता से बोध कराने वाला प्रारूप इस प्रकार है—

—

बधहेतु	हेतुओ के विकल्प	विकल्पगत भग	कुल भग
१०	१ वेद, १ योग, १ युगल, १ मिथ्यात्व, १ इन्द्रिय असयम, अप्रत्याख्यानावरणादि तीन कषाय, १ कायवध	३६०००	३६०००
११	पूर्वोक्त दस और दो काय का वध	६००००	
११	,, ,, ,, अनन्तानुवधी	४६८००	
११	,, ,, ,, भय	३६०००	
११	,, ,, ,, जुगुप्सा	३६०००	२०८८००
१२	पूर्वोक्त दस तथा कायत्रिक का वध	१२००००	
१२	,, ,, ,, कायद्विकवध अनन्तानुबधी	११७०००	
१२	,, ,, ,, भय	६००००	
१२	,, ,, ,, जुगुप्सा	६००००	
१२	,, ,, ,, अनन्ता भय	४६८००	
१२	,, ,, ,, जुगुप्सा	४६८००	
१२	,, ,, ,, भय, जुगुप्सा	३६०००	५४६६००
१३	पूर्वोक्त दस कायचतुष्कवध	६००००	
१३	,, ,, कायत्रिकवध, अनन्ता	१५६०००	
१३	,, ,, ,, भय	१२००००	
१३	,, ,, ,, जुगुप्सा	१२००००	
१३	,, ,, कायद्विकवध, अनन्ता भय	११७०००	
१३	,, ,, ,, ,, जुगुप्सा	११७०००	

बंधहेतु	हेतुओं के विकल्प	विकल्पगत भंग	कुल भंग
१३	पूर्वोक्त दस, कायद्विकवध, भय, जुगुप्सा	९००००	
१३	„ „ अनन्ता, भय, जुगुप्सा	४९०००	८५६८००
१४	पूर्वोक्त दस, कायपंचकवध	३६०००	
१४	„ , कायचतुष्कवध, अनन्ता	११७०००	
१४	„ „ „ भय	९००००	
१४	„ „ „ जुगुप्सा	९००००	
१४	„ „ कायत्रिकवध, अनन्ता भय	१५६०००	
१४	„ „ „ जुगुप्सा	१५६०००	
१४	„ „ „ भय, जुगुप्सा	१२००००	
१४	„ „ कायद्विकवध अनन्ता भय, जुगुप्सा	११७०००	८८२०००
१५	„ „ कायषट्कवध	६०००	
१५	„ „ कायपंचकवध, अनन्ता°	४६८००	
१५	„ „ „ भय	३६०००	
१५	„ „ „ जुगुप्सा	३६०००	
१५	„ , कायचतुष्कवध, अनन्ता भय	११७०००	
१५	„ , „ अनन्ता जुगुप्सा	११७०००	
१५	„ „ „ भय, जुगुप्सा	९००००	
१५	„ „ कायत्रिकवध, अनन्ता भय, जुगुप्सा	१५६०००	६०८८००
१६	पूर्वोक्त दस, कायषट्क वध, अनन्ता	७८००	
१६	„ „ „ भय	६०००	
१६	„ „ „ जुगुप्सा	६०००	
१६	„ „ कायपंचकवध, अनन्ता भय	४६८००	

बधहेतु	हेतुओ के विकल्प	विकल्पगतभग	कुल भग
१६	पूर्वोक्तदसकायपचकवध अनन्ता जुगुप्सा	४६८००	
१६	,, ,, भय, जुगुप्सा	३६०००	
१६	पूर्वोक्त दस कायचतुष्कवध, अनन्ता भय, जुगुप्सा	११७०००	२६६४००
१७	पूर्वोक्त दस कायषट्कवध अनन्ता, भय	७८००	
१७	,, ,, ,, ,, जुगुप्सा	७८००	
१७	,, ,, ,, भय, जुगुप्सा	६०००	
१७	,, ,, कायपचकवध अनन्ता भय, जुगुप्सा	४६८००	६८४००
१८	,, ,, कायषट्कवध अनन्ता भय, जुगुप्सा	७८००	७८००
	कुल भग सख्या		३४,७७,६००

इस प्रकार मिथ्यात्वगुणस्थान मे समस्त वधहेतुओ के कुल भग चौतीस लाख सतहत्तर हजार छह सौ (३४,७७६००) होते है।

नोट—इस प्रारूप मे जघन्यपदभावी बधहेतुओ मे एक कायवध तो पूर्व मे ग्रहण किया हुआ है। अत कायद्विक आदि वध लिये जाने पर एक कायवध के अतिरिक्त शेष अधिक सख्या लेना चाहिये। जैसे—अठारह बधहेतुओ मे कायषट्कवध वताया है किन्तु उसमे एक कायवध का पूर्व मे समावेश होने से छह के बदले कायपचकवध, अनन्तानुवधी, भय, जुगुप्सा इन आठ को मिलाने से अठारह हेतु होगे। इसी प्रकार पूर्व मे एव आगे सवत्र समझना चाहिये।

अब अनन्तानुवधी कषाय का मिथ्यादृष्टि के विकल्प से उदय होने एव उसके उदयविहीन मिथ्यादृष्टि के सभव योगो के होने के कारण को स्पष्ट करते हैं।

नन्तानुबधी के विकल्पोदय का कारण

अणउदयरहियमिच्छे जोगा दस कुणइ जन्न सो कालं।
अणणुदओ पुण तदुवलगसम्मदिट्ठिस्स मिच्छुदए ॥१०॥

शब्दार्थ—अणउदयरहिय—अनन्तानुबधी के उदय से रहित, मिच्छे—मिथ्यादृष्टि के, जोगा—योग, दस—दस, कुणइ—करता है, जन्—क्योकि न—नही, सो—वह, काल—मरण, अणणुदओ—अनन्तानुबधी के उदय का अभाव, पुण—पुन, तदुवलग—उसके उद्‌वलक, सम्मदिट्ठिस्स—सम्यग्दृष्टि के, मिच्छुदए—मिथ्यात्व का उदय होने पर।

गाथार्थ—अनन्तानुबंधी के उदय से रहित मिथ्यादृष्टि के दस योग होते है। क्योकि तथास्वभाव से वह मरण नही करता है। अनन्तानुबधी के उदय का अभाव उसके उद्‌वलक सम्यग्दृष्टि को मिथ्यात्व का उदय होने पर होता है।

विशेषार्थ—गाथा मे अनन्तानुबधी के उदय से रहित मिथ्यादृष्टि के दस और उदय वाले के तेरह योग होने एव किस मिथ्यादृष्टि के अनन्तानुबधी का उदय होता है ? के कारण को स्पष्ट किया है—

अनन्तानुबधी के उदय से रहित मिथ्यादृष्टि के दस योग होने का कारण यह है कि अनन्तानुबधी के उदय बिना का मिथ्यादृष्टि तथास्वभाव से मरण को प्राप्त नही होता है 'कुणइ जन्न सो काल' और जब मरण नही करता है तो विग्रहगति और अपर्याप्त अवस्था मे प्राप्त होने वाले कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र, ये तीन योग सभव नही हो सकते है। इसीलिए मिथ्यादृष्टि के दस योग ही होते है।

प्रश्न—मिथ्यादृष्टि के अनन्तानुबधी का अनुदय कैसे सभव है ?

उत्तर—अनन्तानुबधी का अनुदय अनन्तानुबधी की उद्‌वलान करने वाले—सत्ता मे से नाश करने वाले सम्यग्दृष्टि के मिथ्यात्वमोहनीय का उदय होने पर होता है—'तदुवलगसम्मदिट्ठिस्स मिच्छुदए'। साराश यह है कि जिसने अनन्तानुबधी की उद्‌वलना की हो ऐसा सम्यग्दृष्टि जब मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से गिरकर मिथ्यात्व-

गुणस्थान को प्राप्त करता है और वहाँ बीजभूत मिथ्यात्व रूप हेतु के द्वारा पुन अनन्तानुबधी का बध करता है, तब एक आवलिका काल तक उसका उदय नही होने से उतने कालपर्यन्त दस योग ही होते है।

इस प्रकार से मिथ्यात्वगुणस्थान सम्बन्धी बधहेतुओ का समग्र रूप से विचार करने के पश्चात् अब द्वितीय सासादनगुणस्थान और उसके निकटवर्ती तीसरे मिश्रगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो का निर्देश करते है।

सासादन, मिश्र गुणस्थान के बधहेतु

सासायणम्मि रूव चय वेयहयाण नियगजोगाण।
जम्हा नपु सउदए वेउव्वियमीसगो नत्थि ॥११॥

शब्दार्थ—सासायणम्मि—सासादन गुणस्थान मे, रूव—रूप (एक) चय—कम करना चाहिए, वेयहयाण—वेद के साथ गुणा करने पर, नियगजोगाण—अपने योगो का, जम्हा—क्योकि, नपु सउदए—नपुंसक वेद के उदय मे, वेउव्वियमीसगो—वैक्रियमिश्र योग, नत्थि—नही होता है।

गाथार्थ—सासादनगुणस्थान मे अपने योगो का वेदो के साथ गुणा करने पर प्राप्त सख्या मे से एक रूप कम करना चाहिए। क्योकि नपु सकवेद के उदय मे वैक्रियमिश्रयोग नही होता है।

विशेषार्थ—गाथा मे सासादनगुणस्थान के बधहेतुओ के विचार करने का एक नियम बतलाया है।

सासादन गुणस्थान मे दस से सत्रह तक के बधहेतु होते है। लेकिन इस गुणस्थान मे मिथ्यात्व सभव नही होने से मिथ्यादृष्टि के जो जघन्य से दस बधहेतु बताये है, उनमे से मिथ्यात्वरूप प्रथम पद निकालकर शेष पूर्व मे कहे गये जघन्य पदभावी नौ बधहेतुओ के साथ अनन्तानुबधी कषाय को मिलाकर दस बधहेतु जानना चाहिए। क्योकि सासादनगुणस्थान मे अनन्तानुबधी का उदय अवश्य होता है। अत उसके बिना सासादन गुणस्थान ही घटित नही हो सकता है।

अनन्तानुबधी के उदय मे तेरह योग लेने का सकेत पूर्व मे किया जा चुका है। इसलिए योग के स्थान पर तेरह का अक स्थापित करना चाहिए। जिससे सासादन गुणस्थान के बधहेतुओ के विचार प्रसग मे अकस्थापना का रूप इस प्रकार होगा—

इन्द्रिय अविरति के स्थान पर ५, कायवध के स्थान पर उनके सयोगी भग, कषाय के स्थान पर ४, वेद के स्थान पर ३, युगल के स्थान पर २ और योग के स्थान पर १३—

वेद	योग	काय अविरति	इन्द्रिय असयम	युगल	कषाय
३	१३	६	५	२	४

इस प्रकार से अक स्थापित करने के बाद सम्बन्धित विशेप स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है—

सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थान मे जितने योग हो, उन योगो के साथ पहले वेदो का गुणा करना चाहिए और गुणा करने पर जो सख्या प्राप्त हो, उसमे से एक रूप (अक) कम कर देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि एक-एक वेद के उदय मे क्रमपूर्वक तेरह योग प्राय. सभव है। जैसे कि पुरुषवेद के उदय मे औदारिक, वैक्रिय आदि काय-योग, मनोयोग के चार और वचनयोग के चार भेद सभव है। इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपु सकवेद के उदय मे भी सभव है। इसलिए तीन वेद का तेरह से गुणा करने पर उनतालीस (३९) होते है। उनमे से एक रूप कम करने पर अडतीस ३८ शेष रहेगे।

प्रश्न—वेद के साथ योगो का गुणा करके उसमे से एक सख्या कम करने का क्या कारण है ?

उत्तर—एक संख्या कम करने का कारण यह है कि सासादन-गुणस्थानवर्ती जीव के नपु सकवेद के उदय मे वैक्रियमिश्रकाययोग नही होता है—'नपु सउदए वेउव्वियमीसगो नत्थि'। इसका कारण यह है कि यहाँ वैक्रियमिश्रकाययोग की कार्मण के साथ विवक्षा की है। यद्यपि नपु सकवेद का उदय रहते वैक्रियमिश्रकाययोग नरकगति मे ही होता है, अन्यत्र कही भी नही होता है। लेकिन सासादनगुण-

स्थान के साथ कोई भी जीव नरकगति मे नही जाता है। इसीलिए वेद के साथ योगो का गुणा करके एक सख्या कम करने का सकेत किया है और उसके बाद शेप अको का गुणाकार करना चाहिए। यदि ऐसा न किया जाये तो जितने भग होते है, उतने निश्चित भगो की सख्या का ज्ञान सुगमता से नही हो सकता है।

इस भूमिका के आधार से अव सासादनगुणस्थान मे प्राप्त वध-हेतुओ के भगो का निर्देश करते है।

सासादन गुणस्थान मे जघन्य पदभावी दस वधहेतु होते है। उनके भगो के लिए पूर्वोक्त प्रकार से अंक-स्थापना करके इस प्रकार गुणाकार करना चाहिए—

तीन वेद के साथ तेरह योग का गुणा करने पर (३×१३=३९) उनतालीस हुए। उनमे से एक रूप कम करने पर शेष अडतीस (३८) रहे। ये अडतीस भग छह कायवध मे घटित होते है। यथा—कोई सत्य-मनोयोगी पुरुषवेदी पृथ्वीकाय का वध करने वाला होता है, कोई सत्यमनोयोगी पुरुषवेदी अप्काय का वध करने वाला, कोई तेजस्-काय आदि का वध करने वाला भी होता है। इसी प्रकार असत्यमनो-योग आदि प्रत्येक योग और प्रत्येक वेद का योग करना चाहिए। जिससे अडतीस को छह से गुणा करने पर (३८×६=२२८) दो सौ अट्ठाईस हुए। ये दो सौ अट्ठाईस एक-एक इन्द्रिय की अविरति वाले होते हैं। इसलिए उनको पाच से गुणा करने पर (२२८×५=११४०) ग्यारह सौ चालीस भग हुए। ये ग्यारह सौ चालीस हास्य-रति के उदय वाले और दूसरे उतने हो (अर्थात् ११४०) शोक-अरति के उदय वाले भी होते हैं। इसलिए उनको दो से गुणा करने पर (११४०×२=२२८०) वाईस सौ अस्सी भग हुए। ये वाईस सौ अस्सी जीव क्रोध के उदय वाले होते है, उतने ही मान के उदय वाले उतने ही माया के उदय वाले और उतने ही लोभ के उदय वाले होते हैं। अत इन वाईस सौ अस्सी को चार से गुणा करने पर (२२८०×४=९,१२०) नौ हजार एक सौ वीस भग होते हैं।

इस प्रकार सासादनगुणस्थान मे दस वधहेतुओ के (९,१२०) नौ हजार एक सौ वीस भग होते है। इसी तरह ऊपर कहे गये अनुसार आगे भी वधहेतुओ के भगो को जानने के लिये अको का क्रमपूर्वक गुणा करना चाहिये।

अब ग्यारह वधहेतुओ के भगो को वतलाते है—

१ पूर्वोक्त दस वधहेतुओ मे जो एक काय का वध गिना है, उसके वदले कायद्विक का वध लेने पर ग्यारह हेतु होते है और कायद्विक के सयोगी पन्द्रह भग होते है। इसलिये काय के स्थान पर छह के वदले पन्द्रह अक रखना चाहिये और शेष की अंकसख्या पूर्ववत् है। अत पूर्वोक्त क्रमानुसार अको का गुणा करने पर (२२,८००) वाईस हजार आठ सौ भग होते है।

२ अथवा पूर्वोक्त दस हेतुओ मे भय को मिलाने पर ग्यारह हेतु होते है। लेकिन भय को मिलाने से भगो की सख्या मे वृद्धि नही होती, इसलिये पूर्ववत् (९,१२०) नौ हजार एक सौ वीस भग होते है।

३ इसी प्रकार से जुगुप्सा के मिलाने पर ग्यारह हेतुओ के भी (९,१२०) इक्यानवै सौ वीस भग होते है।

इस प्रकार ग्यारह वधहेतु तीन प्रकार से प्राप्त होते है और उनके भगो का कुल योग (२२,८०० + ९,१२० + ९,१२० = ४१,०४०) इकतालीस हजार चालीस है।

ग्यारह वधहेतुओ के भगो का निर्देश करने के पश्चात अब वारह वधहेतुओ के भगो को वतलाते है—

१ पूर्वोक्त दस वधहेतुओ मे एक काय के वदले कायत्रिक को लेने पर वारह हेतु होते है। कायषट्क के त्रिकसयोग मे वीस भग होते है। अतएव कायवध के स्थान पर छह के वदले वीस का अक रखना चाहिये। तत्पश्चात् पूर्ववत् अको का गुणा करने पर (३०,४००) तीस हजार चार सौ भग होते है।

३ इसी प्रकार जुगुप्सा और कायद्विकवध लेने पर भी (२२,८००) बाईस हजार आठ सौ भग होते है।

४ अथवा भय, जुगुप्सा इन दोनो को मिलाने से भी बारह हेतु होते है। इनके (६,१२०) इक्यानवै सौ वीस भग होते है।

इस प्रकार बारह हेतु चार प्रकार से होते है और उनके कुल भग (३०,४००+२२,८००+२२,८००+६,१२०=८५,१२०) पिचासी हजार एक सौ वीस होते है।

अब तेरह बधहेतुओ के भगो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त दस बधहेतुओ मे एक काय के स्थान पर चार काय का वध लेने पर तेरह हेतु होते है। छह काय के चतुष्कसयोग मे पन्द्रह भग होते है जिससे काय के स्थान पर पन्द्रह रखना चाहिये। तत्पश्चात् पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (२२,८००) बाईस हजार आठ सौ भग होते है।

२ अथवा भय और कायत्रिक का वध मिलाने पर भी तेरह हेतु होते है। उनके (३०,४००) तीस हजार चार सौ भग होते हैं।

३ इसी प्रकार जुगुप्सा और कायत्रिकवध रूप तेरह हेतुओ के भी (३०,४००) तीस हजार चार सौ भग होते है।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायद्विक वध को लेने पर भी तेरह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् (२२,८००) बाईस हजार आठ सौ भग होते है।

इस प्रकार तेरह बधहेतु चार प्रकार से होते है और उनके कुल भंगो का योग (२२,८००+३०,४००+३०,४००+२२,८००= १,०६,४००) एक लाख छह हजार चार सौ है।

इस प्रकार से तेरह हेतुओ के भगो का कथन करने के बाद अब चौदह हेतुओ के भंगो को बतलाते हैं—

१ पूर्वोक्त दस बधहेतुओ मे पाच कायवध को ग्रहण करने पर चौदह हेतु होते है। कायपचक के सयोग मे छह काय के छह भग होते है। उन छह भगो को कायवध के स्थान पर स्थापित कर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (९,१२०) इक्यानवै सौ बीस भग होते है।

२ अथवा भय और कायचतुष्क का वध मिलाने से भी चौदह हेतु होते है। उनके पूर्ववत् (२२ ८००) बाईस हजार आठ सौ भग होते है।

३ इसी प्रकार जुगुप्सा और चार काय का वध मिलाने से भी चौदह हेतु होते है। उनके भी (२२,८००) बाईस हजार आठ सौ भ ग होते है।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायत्रिक का वध मिलाने से भी चौदह हेतु होते है। कायवधस्थान मे त्रिकसयोग मे बीस भ ग रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (३०,४००) तीस हजार चार सौ भ ग होते है।

इस प्रकार चौदह बंधहेतु चार प्रकार से होते है। उनके कुल भ गो का योग (९,१२०+२२,८००+२२,८००+३०,४००=८५,१२०) पिचासी हजार एक सौ बीस है।

अब क्रमप्राप्त पन्द्रह हेतुओ के भ गो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त दस बधहेतुओ मे छह काय का वध मिलाने पर पन्द्रह हेतु होते है। छह काय के वध का एक भग होता है। उस एक भ ग को कायवधस्थान पर रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणाकार करने पर (१,५२०) पन्द्रह सौ बीस भग होते है।

२ अथवा भय और पचकायवध मिलाने पर भी पन्द्रह हेतु होते है। उनके पूर्व की तरह (९१२०) इक्यानवै सौ बीस भ ग होते है।

३ अथवा जुगुप्सा और पचकायवध मिलाने पर भी पन्द्रह हेतु होते है। उनके पूर्व की तरह (९ १२०) इक्यानवे सौ बीस भ ग होते है।

अथवा भय, जुगुप्सा और कायचतुष्कवध को मिलाने पर भी पन्द्रह हेतु होते है। छह काय के चतुष्कसंयोगी पन्द्रह भंग होते है। इन पन्द्रह भंगों को कायवधस्थान मे रखकर पूर्वोक्त क्रम से गुणाकार करने पर (२२,८००) बाईस हजार आठ सौ भंग होते है।

इस प्रकार पन्द्रह बंधहेतु के चार प्रकार है। उनके कुल भंग (१,५२०+९,१२०+९,१२०+२२,८००=४२,५६०) बयालीस हजार पांच सौ साठ होते है।

पन्द्रह बन्धहेतुओं के भंगों का कथन करने के पश्चात अब सोलह बंधहेतुओं के भंगों को बतलाते है —

१ पूर्वोक्त दस बंधहेतुओं मे भय और छह काय का वध मिलाने पर सोलह हेतु होते है। उनके (१,५२०) पन्द्रह सौ बीस भंग होते हैं।

२ अथवा जुगुप्सा और छह काय का वध मिलाने से भी सोलह हेतु होते है और उनके भी पूर्ववत् (१,५२०) पन्द्रह सौ बीस भंग होते हैं।

३ अथवा भय, जुगुप्सा और कायपंचकवध को मिलाने पर सोलह हेतु होते है। छह काय के पंचसंयोगी छह भंग होते है। जिनको कायवध के स्थान पर स्थापित कर पूर्वोक्त क्रम से अंकों का गुणा करने पर (९,१२०) इक्यानवै सौ बीस भंग होते है।

इस प्रकार सोलह बंधहेतु तीन प्रकार से होते है और उनके कुल भंगों का योग (१,५२०+१,५२०+९,१२०=१२,१६०) बारह हजार एक सौ साठ है।

अब सत्रह बंधहेतुओं के भंगों का निर्देश करते है—

पूर्वोक्त दस बंधहेतुओं मे भय, जुगुप्सा और छह काय का वध मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होते है। उनका पूर्वोक्त क्रम से गुणा करने पर (१,५२०) पन्द्रह सौ बीस भंग होते है।

इस प्रकार से सासादनगुणस्थान मे प्राप्त होने वाले जघन्य से उत्कृष्ट पर्यन्त (दस से सत्रह तक) के बधहेतुओ और उनके भगो को जानना चाहिये। इन सब बधहेतु-प्रकारो के भगो का कुल योग (३,८३,०४०) तीन लाख तेरासी हजार चालीस है।

सासादनगुणस्थान के बधहेतुओ के प्रकारो और उनके भगो का सरलता से बोध कराने वाला प्रारूप इस प्रकार है—

बधहेतु	हेतु-विकल्प	प्रत्येक विकल्प के भग	कुल भग
१०	१ वेद, १ योग, १ युगल, १ इन्द्रिय-असयम, ४ कषाय, १ कायवध	६१२०	६१२०
११	पूर्वोक्त दस और कायद्विकवध	२२८००	
११	,, ,, भय	६१२०	
११	,, ,, जुगुप्सा	६१२०	४१०४०
१२	पूर्वोक्त दस, कायत्रिकवध	३०४००	
१२	,, ,, कायद्विकवध, भय	२२८००	
१२	,, ,, ,, जुगुप्सा	२२८००	
१२	,, ,, भय, जुगुप्सा	६१२०	८५१२०
१३	पूर्वोक्त दस, कायचतुष्कवध	२२८००	
१३	,, ,, कायत्रिकवध, भय	३०४००	
१३	,, , ,, जुगुप्सा	३०४००	
१३	,, ,, कायद्विकवध, भय, जुगुप्सा	२२८००	१०६४००
१४	पूर्वोक्त दस, कायपचकवध	६१२०	
१४	,, ,, कायचतुष्कवध, भय	२२८००	

बधहेतु	हेतु विकल्प	प्रत्येक विकल्प के भग	कुल भग
१६	" " " जुगुप्सा	२२८००	
१६	" " कायत्रिकवध, भय जुगुप्सा	३०४००	८४१२०
१७	पूर्वोक्त दस, कायषट्कवध	१५२०	
१७	" " कायपचकवध, भय	९१२०	
१७	" " " जुगुप्सा	९१२०	
१७	" " कायचतुष्कवध, भय जुगुप्सा	२२८००	४२५६०
१८	पूर्वोक्त दस, कायषट्कवध भय	१५२०	
१८	" " " जुगुप्सा	१५२०	
१८	" " कायपचकवध, भय, जुगुप्सा	९१२०	१२१६०
१९	पूर्वोक्त दस, कायषट्कवध, भय, जुगुप्सा	१५२०	१५२०
	कुल भग सख्या		३८३०४०

इस प्रकार सासादनगुणस्थान के बधहेतु-प्रकारो के कुल भगो का जोड तीन लाख तेरासी हजार चालीस (३,८३,०४०) होता है।

सासादनगुणस्थान के बधहेतुओ का निर्देश करने के पश्चात् अब तीसरे मिश्रगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो का प्रतिपादन करते है।

मिश्रगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग

मिश्रगुणस्थान मे नौ से सोलह तक बधहेतु होते है।

मिश्रगुणस्थान मे जघन्यपदभावी नौ बधहेतु इस प्रकार है—१ वेद, १ योग, १ युगल, १ इन्द्रिय-असयम, अप्रत्याख्यानावरणादि तीन क्रोधादि,

१ कायवध। ये पूर्ववर्ती दूसरे सासादनगुणस्थान के जघन्यपदवर्ती दस वधहेतुओ मे से अनन्तानुवधी को कम करने पर प्राप्त होते हैं। अनन्तानुवधिकपाय को कम करने का कारण यह है कि पहले और दूसरे इन दो गुणस्थानो मे ही अनन्तानुबधी का उदय होता है तथा मिश्रदृष्टि मे मरण नही होने से अपर्याप्त अवस्थाभावी औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र और कार्मण ये तीन योग भी सभव नही होने से दस योग पाये जाते है। अतएव अकस्थापना इस प्रकार समझना चाहिये—

योग	कषाय	वेद	युगल	इन्द्रिय-अविरति	कायवध
१०	४	३	२	५	६

ऊपर वताई गई अकस्थापना के अको का क्रमश गुणा करने पर नौ ववहेतुओ के (७२००) वहत्तर सौ भग होते है।

अव दस वधहेतुओ के भगो को वतलाते है—

१ पूर्वोक्त नौ हेतुओ मे कायद्विक को ग्रहण करने पर दस हेतु होते है। छह काय के द्विकसयोग मे पन्द्रह भग होने से कायवध के स्थान पर छह के वदले पन्द्रह रखना चाहिये और उसके वाद अनुक्रम से अको का गुणा करने पर (१८०००) अठारह हजार भग होते है।

२ अथवा भय को मिलाने से भी दस हेतु होते है। उनके पूर्ववत् (७२००) वहत्तर सौ भग होते है।[1]

३ अथवा जुगुप्सा के मिलाने से भी दस हेतु होंगे। उनके भी पूर्व-वत् (७२००) वहत्तर सौ भग होते है।

---

१ भय, जुगुप्सा को मिलाने पर भगो की वृद्धि नही होती है किन्तु कायवध को मिलाने पर भगो की वृद्धि होती है। जैसे कायद्विकवध गिना गया हो तो उसके पन्द्रह भग होते हैं। अत पूर्वोक्त अकस्थापना मे कायवध के स्थान पर पन्द्रह का अक रखकर गुणा करना चाहिए। इसी प्रकार जव तीन, चार, पाच या छह काय गिनी गई हो, तव उनके अनुक्रम से वीस, पन्द्रह, छह और एक सख्या कायवध के स्थान पर रखकर गुणा करना चाहिए।

कायवध के स्थान पर बीस का अक रखकर क्रमश अको का गुणा करने पर (२४,०००) चौबीस हजार भग होते है।

३ अथवा जुगुप्सा और कायत्रिकवध को मिलाने से भी बारह हेतु होते हैं। इनके भी ऊपर कहे गये अनुसार (२४,०००) चौबीस हजार भग होते हैं।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायद्विकवध को मिलाने पर भी बारह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् (१८,०००) अठारह हजार भग होते है।

इस प्रकार बारह हेतु चार प्रकार से होते है। इनके कुल भग (१८,०००+२४,००० + २४,०००+१८,००० = ८४,०००) चौरासी हजार भग होते है।

अब तेरह हेतु के भगो को बतलाते हैं—

१ पूर्वोक्त नौ हेतुओ मे कायपचकवध को मिलाने पर तेरह हेतु होते हैं। छह काय के पचसयोग मे छह भग होते हैं। अत. कायवध के स्थान पर छह का अक रखकर क्रमपूर्वक गुणा करने से (७,२००) बहत्तर सौ भग होते है।

२ अथवा भय और कायचतुष्कवध को मिलाने से भी तेरह हेतु होते हैं। चार के सयोग मे कायवध के पन्द्रह भग होते है। उन पन्द्रह भगो को कायवध के स्थान पर रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१८,०००) अठारह हजार भग होते हैं।

३ जुगुप्सा और कायचतुष्कवध के मिलाने से भी होने वाले तेरह हेतुओ के (१८,०००) अठारह हजार भग जानना चाहिये।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायत्रिकवध को मिलाने से भी तेरह हेतु होते है। कायत्रिकवध के सयोग मे छह काय के बीस भग होते हैं। अत कायवध के स्थान पर बीस का अक रखकर क्रमश अको का गुणा करने पर (२४,०००) चौबीस हजार भग होते हैं।

इस प्रकार से तेरह बधहेतु चार प्रकार से बनते हैं और उनके कुल भगो का योग (७,२००+१८,०००+१८,०००+२४,०००=६७,२००) सड़सठ हजार दो सौ होता है।

स्थान पर छह का अक रखकर अनुक्रम मे अको का गुणा करने पर (७,२००) बहत्तर सौ भग होते है।

इस प्रकार पन्द्रह हेतु तीन प्रकार से बनते है और उनके कुल भग (१,२००+१,२००+७,२००=९,६००) छियानवै सौ होते है।

अब सोलह बधहेतु और उनके भगो को बतलाते है—

पूर्वोक्त नौ बधहेतुओ मे भय, जुगुप्सा और छहो काय का वध मिलाने से सोलह हेतु होते है। काय का छह के सयोग मे एक भग होता है। उस एक भग को कायवध के स्थान पर रखकर क्रमश अको का गुणा करने से (१२००) बारह सौ भग होते है। विकल्प सभव नही होने से सोलह हेतु के अन्य प्रकार नही बनते है।

इस प्रकार मिश्रगुणस्थान मे नौ से सोलह तक के बधहेतु होते है। इनके कुल भगो का जोड तीन लाख, दो हजार, चार सौ (३,०२,४००) है।

मिश्रगुणस्थान के बधहेतुओ के प्रकारो और उनके भगो का सरलता से बोध कराने वाला प्रारूप इस प्रकार है—

बधहेतु	हेतुओं के विकल्प	विकल्प प्रकार के भग	कुल भगसख्या
९	१ वेद, १ योग, १ युगल, १ इन्द्रिय-असयम, अप्रत्या० तीन क्रोधादि, १ कायवध	७२००	७२००
१०	पूर्वोक्त नौ, कायद्विकवध	१८०००	
१०	,, , भय	७२००	
१०	,, ,, जुगुप्सा	७२००	३२४००
११	पूर्वोक्त नौ, कायत्रिकवध	२४०००	
११	,, ,, कायद्विकवध, भय	१८०००	
११	,, ,, ,, जुगुप्सा	१८०००	
११	,, ,, भय, जुगुप्सा	७२००	६७२००

बध-हेतु	हेतुओ के विकल्प	विकल्प-प्रकार के भग	कुल भगसख्या
१२	पूर्वोक्त नौ, कायचतुष्कवध	१८०००	
१२	,, ,, कायत्रिकवध, भय	२४०००	
१२	,, ,, ,, जुगुप्सा	२४०००	
१२	,, ,, कायद्विकवध, भय, जुगुप्सा	१८०००	८४०००
१३	पूर्वोक्त नौ, कायपचकवध	७२००	
१३	,, ,, कायचतुष्कवध, भय	१८०००	
१३	,, ,, ,, जुगुप्सा	१८०००	
१३	,, ,, कायत्रिकवध, भय, जुगुप्सा	२४०००	६७२००
१४	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध	१२००	
१४	,, ,, कायपचकवध, भय	७२००	
१४	,, ,, ,, जुगुप्सा	७२००	
१४	,, ,, कायचतुष्कवध, भय, जुगुप्सा	१८०००	३३६००
१५	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध, भय	१२००	
१५	,, ,, ,, जुगुप्सा	१२००	
१५	,, ,, कायपचकवध, भय जुगुप्सा	७२००	९६००
१६	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध, भय, जुगुप्सा	१२००	१२००
		कुल भग सख्या	३०२४००

इस प्रकार मिश्रगुणस्थान के बधहेतुओ के कुल भगो का जोड तीन लाख दो हजार चार सौ (३,०२,४००) होता है।

पूर्वोक्त प्रकार से मिश्रगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो का कथन जानना चाहिए।

अब चौथे अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो को बतलाते है।

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतु और उनके भग

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे भी मिश्रगुणस्थान की तरह नौ से सोलह तक बधहेतु है। लेकिन उनके भगो का कथन करने से पूर्व जो विशेषता है, उसको बतलाते है—

> **चत्तारि अविरए चय थीउदए विउव्विमीसकम्मइया।**
> **इत्थिनपुसगउदए ओरालियमीसगो जन्नो ॥१२॥**

शब्दार्थ—चत्तारि—चार, अविरए—अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे, चय—कम करना चाहिए, थीउदए—स्त्रीवेद के उदय मे, विउव्विमीसकम्मइया—वैक्रियमिश्र, कार्मणयोग, इत्थिनपुसगउदए—स्त्री और नपुसक वेद के उदय मे, ओरालियमीसगो—औदारिकमिश्र, जत्—क्योकि, नो—नही होता है।

गाथार्थ—अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे (वेद के साथ योगो का गुणा करके) चार रूप कम करना चाहिए। क्योकि स्त्रीवेद के उदय मे वैक्रियमिश्र और कार्मणयोग एव स्त्रीवेद तथा नपुसक वेद के उदय मे औदारिकमिश्रयोग नही होता है।

विशेषार्थ—गाथा मे अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतुओ के विचार को प्रारम्भ करते हुए सर्वप्रथम एक आवश्यक विशेषता का दिग्दर्शन कराया है कि—

'चत्तारि अविरए चय' अर्थात् जैसे सासादनगुणस्थान के बधहेतु के भगो को बतलाने के लिए वेद के साथ योगो का गुणाकार करके एक रूप कम करने का सकेत किया है, उसी प्रकार यहाँ भी वेद के साथ योगो का गुणा करके गुणनफल मे से चार रूप कम कर देना चाहिए।

चार रूप कम करने का कारण यह है कि अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे 'थीउदए विउव्विमीसकम्मइया जन्नो' स्त्रीवेद के उदय

इस प्रकार स्त्रीवेद मे औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र और कार्मण यह तीन योग और नपुंसकवेद मे औदारिकमिश्र काययोग घटित नही होता है। इसलिए वेदो के साथ योगो का गुणा करके गुणनफल मे से चार रूपो को कम करने का विधान बताया है।

इस प्रकार से अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतुओ के भगो विषयक विशेषता का निर्देश करने के पश्चात् अब जघन्य से उत्कृष्ट पर्यन्त के बधहेतुओ के (नौ से सोलह हेतुओ तक के) भगो की प्ररूपणा करते हैं।

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे जघन्यपदभावी नौ बधहेतु होते है। वे इस प्रकार हैं—छह काय मे से कोई एक काय का वध, पाच इन्द्रियो में से एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से एक युगल, वेदत्रिक मे से एक वेद, अप्रत्याख्यानावरणादि कोई भी क्रोधादि तीन कषाय, तेरह योग में से कोई एक योग। इस प्रकार कम से कम नौ बधहेतु एक समय मे एक जीव के होते है और एक समय मे अनेक जीवो की अपेक्षा भगो की सख्या प्राप्त करने के लिए अकस्थापना निम्न-प्रकार से करना चाहिए—

कषाय	युगलद्विक	इन्द्रिय-अविरति	कायवध	योग	वेद
४	२	५	६	१३	३

तीन वेदो के साथ तेरह योगो का गुणा करने पर उनतालीस ३९ होते हैं। उनमे से चार कम करने पर पैंतीस रहे। उनको छह काय से गुणा करने पर (३५ × ६=२१०) दो सौ दस हुए। उनको पाच इन्द्रियो की अविरति के साथ गुणा करने पर (२१० × ५=१०५०) एक हजार पचास होते है। उनको युगलद्विक के साथ गुणा करने पर (१०५० × २ =२१००) इक्कीस सौ हुए और उनको भी चार कषाय के साथ गुणा करने पर (२१०० × ४=८४००) चौरासी सौ होते है।

इस प्रकार नौ बधहेतुओ के अनेक जीवो के आश्रय से (८४००) चौरासी सौ भग होते हैं।

इस प्रकार ग्यारह हेतु चार प्रकार से होते है और उनके कुल भगो का योग (२८,००० × २१,००० × २,१००० × ८४०० = ७८,४००) अठहत्तर हजार चार सौ है।

ग्यारह हेतुओ के भगो का कथन करने के पश्चात् अब बारह हेतुओ के भगो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त नौ बधहेतुओ मे चार काय का वध मिलाने से बारह हेतु होते हैं। छह काय के चतुष्कसयोग मे पन्द्रह भग होते है। अत. कायवध के स्थान मे पन्द्रह को ग्रहण कर पूर्वोक्त क्रमानुसार अंको का गुणा करने पर (२१,०००) इक्कीस हजार भग होते है।

२ अथवा कायत्रिकवध और भय को मिलाने से भी बारह हेतु होते है। यहाँ कायवध के स्थान मे बीस को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (२८,०००) अट्ठाईस हजार भग होते है।

२. अथवा जुगुप्सा और कायत्रिकवध को मिलाने से भी बारह हेतु होते है। इनके ऊपर कहे गये अनुरूप (२८,०००) अट्ठाईस हजार भग होते है।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायद्विकवध को मिलाने से भी बारह हेतु होते है। यहाँ कायवधस्थान मे पन्द्रह को रखकर अको का परस्पर गुणा करने पर पूर्ववत् (२१,०००) इक्कीस हजार भग होते है।

इस प्रकार बारह हेतु चार प्रकार से होते है और इन चार प्रकार के कुल भगो का योग (२१,००० + २८,००० + २८,००० + २१,००० = ९८,०००) अट्ठानवै हजार है।

अब तेरह बधहेतुओ का विचार करते है—

१ पूर्वोक्त नौ बधहेतुओ मे कायपचकवध को लेने पर तेरह हेतु होते हैं। छह काय के पचसहयोगी भग छह होते है। अत कायहिंसा के स्थान पर छह को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (८,४००) चौरासी सौ भंग होते हैं।

पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (२१,०००) इक्कीस हजार भग होते है।

इस प्रकार चौदह बधहेतु चार प्रकार से होते हैं। इनके कुल भगो का योग (१,४००+८,४००+८,४००+२१,०००=३९,२००) उनतालीस हजार दो सौ है।

अब पन्द्रह बधहेतु और उनके भगो का विचार करते है—

१ पूर्वोक्त नौ हेतुओ में भय और छहकायवध को ग्रहण करने पर पन्द्रह हेतु होते है। यहाँ कायवधस्थान पर एक अक को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणाकार करने पर (१४००) चौदह सौ भग होते है।

२ अथवा जुगुप्सा और छहकायवध को ग्रहण करने से भी पन्द्रह हेतु होते है। इनके भी ऊपर बताये गये अनुसार (१,४००) चौदह सौ भग होते है।

३ अथवा भय, जुगुप्सा और कायपचकवध को मिलाने पर भी पन्द्रह हेतु होते है। यहाँ कायवधस्थान मे छह का अक रखकर पूर्वोक्त क्रमानुसार अको का परस्पर गुणा करने पर (८,४००) चौरासी सौ भग होते है।

इस प्रकार पन्द्रह हेतु तीन प्रकार से होते है। इनके कुल भगो का जोड (१,४००+१,४००+८,४००=११,२००) ग्यारह हजार दो सौ है।

अब सोलह बधहेतुओ का कथन करते है—

पूर्वोक्त नौ हेतुओ मे भय, जुगुप्सा और छहकाय को मिलाने पर सोलह हेतु होते है। यहाँ छह काय का षट्सयोगी भग एक होने से कायवधस्थान पर एक रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१,४००) चौदह सौ भग होते है।

इस प्रकार अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे नौ से लेकर सोलह बधहेतु तक के कुल भग तीन लाख बावन हजार आठ सौ (३,५२,८००) होते है।

बध हेतु	हेतुओ के विकल्प	प्रत्येक विकल्प के भग	कुल भग सख्या
१४	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध	१४००	
१४	,, ,, कायपंचकवध, भय	८४००	
१४	,, ,, ,, जुगुप्सा	८४००	
१४	,, ,, कायचतुष्कवध, भय, जुगुप्सा	२१०००	३९२००
१५	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध, भय	१४००	
१५	,, ,, ,, जुगुप्सा	१४००	
१५	,, ,, कायपचकवध, भय, जुगुप्सा	८४००	११२००
१६	पूर्वोक्त नौ, कायषट्कवध, भय जुगुप्सा	१४००	१४००

कुल भगो का योग ३५२८००

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधहेतुओ के कुल भगो का जोड (३,५२,८००) तीन लाख बावन हजार आठ सौ है।

अनेक जीवो की अपेक्षा बहुलता से इन नौ आदि बधहेतुओ के भगो का निर्देश किया है। क्योकि चतुर्थ गुणस्थान को लेकर स्त्रीवेदी रूप मे मल्लिकुमारी, राजीमती, ब्राह्मी, सुन्दरी आदि के उत्पन्न होने के उल्लेख मिलते है। इस अपेक्षा से चतुर्थ गुणस्थान मे स्त्रीवेदी के विग्रहगति मे कार्मण और उत्पत्तिस्थान मे औदारिकमिश्र यह दो योग भी घट सकते है। अतएव इस दृष्टि से स्त्रीवेदी के मात्र वैक्रिय-मिश्र और नपु सकवेदी के पूर्व मे कहे गये अनुसार औदारिकमिश्र इस तरह दो योग होते ही नही है, जिससे तीन वेद को तेरह योग मे गुणा कर चार के बदले दो भग कम करने पर शेष संतीस (३७)

गुणस्थान पर्याप्त अवस्थाभावी होने से अपर्याप्त अवस्थाभावी औदारिक-मिश्र और कार्मण तथा चौदह पूर्व के अध्ययन का अभाव होने से आहारकद्विक कुल चार योग इसमे नही होते है। इसलिए औदारिक-मिश्र, कार्मण और आहारकद्विक ये चार योग नही होने से इस गुण-स्थान मे शेष ग्यारह योग जानना चाहिए।

अब बधहेतुओ के भगो का विचार करते है—

जघन्यपदभावी आठ बधहेतु इस प्रकार है—पाच काय मे से किसी एक काय का वध, पाच इन्द्रिय की अविरति मे से किसी एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से एक युगल, वेदत्रिक मे से कोई एक वेद, अप्रत्याख्यानावरणकषाय के उदय का अभाव होने से प्रत्याख्या-नावरण और सज्वलन की कोई क्रोधादि दो कषाय और ग्यारह योगो मे से कोई एक योग, इस प्रकार एक समय मे एक जीव को आठ बध-हेतु होते है।

तत्पश्चात् पाच काय के एक-एक सयोग मे पाच भग होते है, इस-लिए कायवध के स्थान पर पाच भग होते है। इसलिए कायवध के स्थान पर पाच, वेद के स्थान पर तीन, युगल के स्थान पर दो, कषाय के स्थान पर चार, इन्द्रिय-अविरत के स्थान पर पाच और योग के स्थान पर ग्यारह का अक रखना चाहिए। जिसका रूपक इस प्रकार का होगा—

योग	कषाय	वेद	युगल	इन्द्रिय-अविरति	कायहिसा
११	४	३	२	५	५

इन अको का परस्पर गुणा करने पर एक समय मे अनेक जीवो की अपेक्षा भग उत्पन्न होते है।

गुणाकार इस प्रकार करना चाहिए कि किसी भी इन्द्रिय की अविरति वाला किसी भी काय का वध करने वाला होता है। अत पाच इन्द्रिय की अविरति के साथ पाच काय का गुणा करने पर (२५) पच्चीस हुए। इन पच्चीस को युगलद्विक से गुणा करने पर (५०)

पचास हुए। ये पचास पुरुषवेद के उदय वाले, दूसरे पचास स्त्रीवेद के और तीसरे पचास नपु सकवेद के उदयवाले होते है। अत पचास को तीन वेद से गुणा करने पर (५०×३=१५०) एक सौ पचास भग हुए। ये एक सौ पचास क्रोधकषायी, दूसरे एक सौ पचास मान-कषायी, तीसरे उतने ही माया कषायी भी और चौथे उतने ही लोभ-कषायी होते है। इसलिए एक सौ पचास को कषायचतुष्क के साथ गुणा करने पर (१५०×४=६००) छह सौ भग होते हैं। ये छह सौ सत्यमनोयोगी, दूसरे छह सौ असत्यमनोयोगी आदि इस प्रकार ग्यारह योगो के द्वारा छह सौ को गुणा करने पर (६,६००) छियासठ सौ भग होते है।

इस प्रकार से आठ बधहेतु एक समय मे अनेक जीवो की अपेक्षा छियासठ सौ प्रकार मे होते है। यह जघन्यपदभावी आठ बधहेतुओ के भग जानना चाहिये।

अब नौ हेतु और उनके भग बतलाते है—

१ पूर्वोक्त आठ बधहेतुओ मे कायद्विकवध ग्रहण करने से नौ होते है। पाच काय के द्विकसयोग मे दस भग होते है। अत कायवध के स्थान पर दस को रखकर क्रमश अको का गुणा करने पर १३,२०० तेरह हजार दो सौ भग हुए।

२ अथवा भय को मिलाने पर नौ हेतु होते है। यहाँ कायवधस्थान पर पाच ही रखने पर उनके भग पूर्ववत् (६,६००) छियासठ सौ होते हैं।

३ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी नौ बधहेतु होते है। उनके भी ऊपर बताये गये अनुसार (६,६००) छियासठ सौ भग होते हैं।

इस प्रकार नौ बधहेतु के तीन प्रकार है। इनके कुल भगो का योग (१३,२००+६,६००+६६००=२६४००) छब्बीस हजार चार सौ होता है।

अब दस बधहेतु और उनके भगो को बतलाते है—

१ पूर्वोक्त आठ बधहेतुओ मे कायत्रिक का वध मिलाने से दस हेतु

होते है। पाच काय के त्रिकसंयोग मे दस भग होते है। अत कायहिंसा के स्थान पर दस का अक रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१३,२००) तेरह हजार दौ सौ भग होते है।

२ अथवा कायद्विकवध और भय को मिलाने से भी दस हेतु होते है। यहाँ भी कायहिंसा के स्थान पर पाच काय के द्विकसयोगी दस भग होने से दस का अक रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१३,२००) तेरह हजार दो सौ भग होते है।

३ अथवा जुगुप्सा और कायद्विक के वध को मिलाने से बनने वाले दस वधहेतुओ के भी ऊपर बताये गये प्रकार से (१३,२००) तेरह हजार दो सौ भग होते है।

४ अथवा भय और जुगुप्सा के मिलाने से भी दस वधहेतु होते है। उनके पूर्ववत् (६६००) छियासठ सौ भग होते है।

इस तरह दस वधहेतु के चार प्रकार हैं। उनके कुल भग (१३,२००+१३,२००+१३,२००+६,६००=४६२००) छियालीस हजार दो सौ होते है।

दस वधहेतु के प्रकार और उनके भगो का विचार करने के पश्चात् अब ग्यारह वधहेतु और उनके भगो को वतलाते है—

१ पूर्वोक्त आठ वधहेतुओ मे चार काय के वध को मिलाने से ग्यारह हेतु होते है। पाच काय के चतुष्कसयोगी पाच भग होने मे काय-हिंसा के स्थान पर पाच का अक रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (६,६००) छियासठ सौ भग होते है।

२ अथवा कायत्रिकवध और भय को मिलाने से भी ग्यारह हेतु होते है। यहाँ कायहिसा के स्थान पर दस के अक को रखकर अको का गुणा करने पर (१३,२००) तेरह हजार दो सौ भग होते है।

३ अथवा जुगुप्सा और कायत्रिकवध मिलाने मे भी ग्यारह हेतु होते है। उनके भी ऊपर बताये गये अनुसार (१३,२००) तेरह हजार दो सौ भग जानना चाहिये।

४ अथवा भय, जुगुप्सा और कायद्विकवध को मिलाने पर भी

ग्यारह हेतु होते है। यहाँ भी कायहिंसा के स्थान पर दस का अक रख कर परस्पर अको का गुणा करने पर (१३,२००) तेरह हजार दो सौ भग होते हैं।

इस प्रकार ग्यारह हेतु चार प्रकार से होते हैं। उनके कुल भगो का योग (६६००+१३,२००+१३,२००+१३,२००=४६२००) छियालीस हजार दो सौ है।

अब बारह हेतु और उनके भगो का विचार करते हैं—

१ पूर्वोक्त आठ हेतु मे पाच काय की हिंसा को ग्रहण करने पर बारह हेतु होते हैं। पाच काय का पचसयोगी एक ही भग होने से कायहिंसा के स्थान पर एक को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१ ३२०) तेरह सौ बीस भग होते हैं।

२ अथवा कायचतुष्कवध और भय को मिलाने पर बारह हेतु होते हैं। पाच काय के चतुष्कसयोगी पाच भग होने से कायहिंसा के स्थान पर पाच रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (६,६००) छियासठ सौ भग होते हैं।

३ अथवा जुगुप्सा और कायचतुष्कवध को मिलाने पर भी बारह हेतु होते हैं। इनके भी ऊपर बताये गये अनुसार (६,६००) छियासठ सौ भग होते हैं।

४ अथवा कायत्रिकवध और भय, जुगुप्सा को मिलाने से भी बारह हेतु होते हैं। पाच काय के त्रिकसयोग मे दस भग होने से कायहिंसा के स्थान पर दस को रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१३२००) तेरह हजार दो सौ भग होते है।

इस प्रकार बारह हेतु चार प्रकार से होते हैं। उनके कुल भग (१,३२०+६,६००+६ ६००+१३,२००=२७,७२०) सत्ताईस हजार सात सौ बीस होते है।

अब तेरह बधहेतु का विचार करते हैं—

१ पूर्वोक्त आठ बधहेतुओ मे पाच काय का वध और भय को मिलाने पर तेरह बधहेतु होते हैं। पाच काय का पचसयोगी भग

एक होने से काय के स्थान पर एक को रखकर पूर्वोक्त अको का क्रमश गुणा करने पर भग (१,३२०) तेरह सौ वीस होते है।

२ अथवा जुगुप्सा और पाच काय का वध मिलाने से भी तेरह बधहेतु के ऊपर बताये गये अनुसार (१,३२०) तेरह सौ बीस भग होते हैं।

३ अथवा भय, जुगुप्सा और कायचतुष्क का वध मिलाने पर तेरह हेतु होते हैं। यहाँ कायस्थान पर पाच का अक रखकर क्रमश अको का गुणा करने पर (६,६००) छियासठ सौ भग होते हैं।

इस प्रकार तेरह बधहेतु तीन प्रकार से होते है और उनके कुल भगो का योग (१,३२०+१,३२०+६,६००=९,२४०) बानवै सौ चालीस होता है।

उक्त प्रकार से तेरह बधहेतु के भग बतलाने के बाद अब चौदह बधहेतु और उनके भगो को बतलाते हैं—

पूर्वोक्त आठ बधहेतु मे पाच काय का वध, भय और जुगुप्सा को मिलाने पर चौदह बधहेतु होते है। पाच काय का पचसयोगी एक भग होने से कायस्थान मे एक अक रखकर पूर्वोक्त क्रम से अको का गुणा करने पर (१,३२०) तेरह सौ वीस भग होते है।

चौदह बधहेतुओ मे विकल्प नही होने के यह एक ही भग होता है।

इस प्रकार पाचवे देशविरतगुणस्थान मे आठ से चौदह पर्यन्त के बधहेतुओ के कुल भगो का योग एक लाख त्रेसठ हजार छह सौ अस्सी (१. ६३,६८०) होता है।

पाचवे देशविरतगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो का बोधक प्रारूप इस प्रकार है—

बधहेतु	हेतुओ के विकल्प	प्रत्येक विकल्प के भग	कुल भगसख्या
८	१ वेद, १ योग, १ युगल १ इन्द्रिय का असयम, २ कषाय, १ कायवध	६,६००	६,६००
९	पूर्वोक्त आठ, कायद्विकवध	१३,२००	
९	,, ,, भय	६,६००	
९	,, ,, जुगुप्सा	६,६००	२६४००
१०	पूर्वोक्त आठ, कायत्रिकवध	१३,२००	
१०	,, ,, कायद्विकवध, भय	१३,२००	
१०	,, ,, ,, जुगुप्सा	१३,२००	
१०	,, ,, भय, जुगुप्सा	६६००	४६२००
११	पूर्वोक्त आठ, कायचतुष्कवध	६६००	
११	,, ,, कायत्रिकवध, भय	१३२००	
११	,, ,, ,, जुगुप्सा	१३२००	
११	,, ,, कायद्विकवध, भय, जुगुप्सा	१३२००	४६२००
१२	पूर्वोक्त आठ, कायपचकवध	१३२०	
१२	,, ,, कायचतुष्कवध, भय	६६००	
१२	,, ,, ,, जुगुप्सा	६६००	
१२	,, ,, कायत्रिकवध, भय, जुगुप्सा	१३२००	२७७२०
१३	पूर्वोक्त आठ, कायपचकवध, भय	१३२०	
१३	,, ,, ,, जुगुप्सा	१३२०	
१३	,, ,, कायचतुष्कवध, भय, जुगुप्सा	६६००	९२४०
१४	पूर्वोक्त आठ, कायपचकवध, भय, जुगुप्सा	१३२०	१३२०
		कुल भग	१,६३,६८०

देशविरतगुणस्थान के बधहेतुओ के भगो का कुल जोड (१,६३,६८०) एक लाख त्रेसठ हजार छह सौ अस्सी है।

इस प्रकार से अभी तक नाना जीवो की अपेक्षा पहले मिथ्यात्व से लेकर पाचवे देशविरतगुणस्थान पर्यन्त पाच गुणस्थानो के बधहेतु और उनके भगो का विचार किया गया। अब प्रमत्तसयत और अप्रमत्त-सयत नामक छठे और सातवे गुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो को बतलाते है। इनमे पाच से सात तक बधहेतु होते है। जिनके भगो को बतलाने के लिये योग के सम्बन्ध मे जो विशेषता है, उसका निर्देश करते है।

प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसयत गुणस्थानो के बधहेतुओ के भग

दोरूवाणि पमत्ते चयाहि एग तु अप्पमत्तंमि।
ज इत्थिवेयउदए आहारगमीसगा नत्थि ॥१३॥

शब्दार्थ—दो—दो, रूवाणि—रूप, पमत्ते—प्रमत्तसयतगुणस्थान मे, चयाहि—कम करना चाहिये, एग—एक, तु—इसी प्रकार (और) अप्पमत्तमि—अप्रमत्तसयतगुणस्थान मे, ज—क्योकि, इत्थिवेयउदए—स्त्रीवेद का उदय होने पर, आहारगमीसगा—आहारक और आहारक-मिश्र, नत्थि—नही होते है।

गाथार्थ—प्रमत्तसयतगुणस्थान मे दो रूप और अप्रमत्तसयत-गुणस्थान मे एक रूप को कम करना चाहिये। क्योकि स्त्रीवेद का उदय होने पर प्रमत्त मे आहारक, आहारकमिश्र तथा अप्रमत्त मे आहारक काययोग का उदय नही होता है।

विशेषार्थ—प्रमत्तसयत आदि गुणस्थानो मे नाना जीवापेक्षा बध-हेतुओ के भगो का विचार प्रारम्भ करते हुए प्रमत्त और अप्रमत्त गुण-स्थान मे जो विशेषता है, उसका गाथा मे निर्देश किया है कि—

'दो रूवाणि पमत्ते ' इत्यादि अर्थात् दो रूप कम करना चाहिये। यानि इस गाथा मे यद्यपि वेद के साथ योगो का गुणा करने का सकेत नही किया है, लेकिन पूर्व गाथा से उसकी अनुवृत्ति लेकर

इस प्रकार प्रमत्त और अप्रमत्त सयत गुणस्थानो की विशेषता वतलाने के बाद अव उनके बधहेतुओ और भगो का विचार करते हैं।

प्रमत्तसयतगुणस्थान मे पाच से सात वधहेतु होते है। उनमे से जघन्यपदभावी वधहेतु इस प्रकार है—

सर्वथा पापव्यापार का त्याग होने से मिथ्यात्व और अविरति इन दोनो के सर्वथा नही होने के कारण कषाय और योग यही दो हेतु होते है। इसलिये युगलद्विक मे से एक युगल, वेदत्रिक मे से एक वेद, चार सज्वलन कपाय मे से एक क्रोधादिक कषाय और कार्मण तथा औदारिकमिश्र इन दो योगो के विना शेष तेरह योगो मे से एक योग इस प्रकार पाच वधहेतु होते है। इनकी अकस्थापना का प्रारूप इस प्रकार है—

वेद	योग	युगल	कषाय
३	१३	२	४

इस प्रकार से अकस्थापना करके क्रमश गुणा करना चाहिये। गुणाकार इस प्रकार करना चाहिये—पहले तीन वेदो के साथ तेरह योगो का गुणा करने पर उनतालीस (३६) हुए। उनमे से दो रूप कम करने पर शेष (३७) सैतीस को युगलद्विक मे गुणा करने पर (३७×२ =७४) चौहत्तर हुए। इन चौहत्तर को चार कपाय के साथ गुणा करने पर (७४×४=२६६) दो सौ छियानवै भग होते है।

शरीरो के योग्य पर्याप्तियो को पूर्ण कर अप्रमत्तसयतगुणस्थान मे जाने वाले होने से वहा वैक्रियमिश्र और आहारकमिश्र ये दो योग नही होते है। क्योकि आरम्भकाल और त्यागकाल मे मिश्रपना होता है और उन दोनो समयो मे प्रमत्तगुणस्थान ही होता है। इसलिये अप्रमत्तगुणस्थान मे दो रूप कम करने का सकेत किया है।

इस प्रकार छह वधहेतु के दो प्रकार हैं। उनके कुल भगो का योग (२५६+२५६=५१२) पाच सौ बारह है।

अव सात वधहेतुओ का कथन करते है—

पूर्वोक्त पाच वधहेतुओ मे भय और जुगुप्सा को युगपत् मिलाने से सात हेतु होते है। इनके भी (२५६) दो सौ छप्पन भग होते है।

इस प्रकार अप्रमत्तासयतगुणस्थान मे वधहेतुओ के कुल मिलाकर (२५६+२५६+२५६+२५६=१,०२४) एक हजार चौवीस भग होते है। जिनका दर्शक प्रारूप इस प्रकार है—

वधहेतु	हेतुओ के विकल्प	प्रत्येक विकल्प के भग	कुल भग सख्या
५	१ वेद, १ योग, १ युगल, १ कषाय	२५६	२५६
६	पूर्वोक्त पाच, भय	२५६	५१२
६	,, ,, जुगुप्सा	२५६	
७	पूर्वोक्त पाच, भय, जुगुप्सा	२५६	२५६
		कुल योग	१०२४

पूर्वोक्त प्रकार मे अप्रमत्तासयतगुणस्थान के वधहेतुओ का विचार करने के पश्चात् अव क्रमप्राप्त आठवे अपूर्वकरणगुणस्थान के वधहेतु और उनके भगो को वतलाते है।

अपूर्वकरणगुणस्थान के वधहेतु

अपूर्वकरणगुणस्थान मे वैक्रिय और आहारक यह दो योग भी नही होने से अप्रमत्तासयतगुणस्थान मे वताये गये ग्यारह योगो मे से इन दो योगो को कम करने पर नौ योग होते है। यहाँ भी पाच, छह और सात वधहेतु होते है। पाच वधहेतु इस प्रकार है—वेदत्रिक मे से कोई एक वेद, नौ योग मे से कोई एक योग, युगलद्विक मे कोई एक युगल

और सज्वलनकषायचतुष्क मे से कोई एक कषाय। इस प्रकार जघन्य-पद मे पाच बघहेतु है। जिनकी अकरचना का प्रारूप इस प्रकार जानना चाहिए--

वेद	योग	युगल	कषाय
३	६	२	४

इनमे से वेदत्रिक के साथ नौ योगो का गुणा करने पर (३×६=२७) सत्ताईस भग हुए। इनको युगलद्विक मे गुणा करने पर (२७×२=५४) चउवन भग होते है और इन चउवन को कषाय-चतुष्क मे गुणा करने पर (५४×४=२१६) दो सौ सोलह भग होते है।

इस प्रकार आठवे अपूर्वकरणगुणस्थान मे नाना जीवो की अपेक्षा पाच वघहेतुओ के (२१६) दो सौ सोलह भग होते है।

अव छह वघहेतु और उनके भगो का निर्देश करते है—

१ उक्त पाच मे भय को मिलाने पर छह हेतु होते है। इनके भी ऊपर वताये गये (२१६) दो सौ सोलह भग होते है।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने मे भी छह हेतु होते है। इनके भी (२१६) दो सौ सोलह भग है।

इस प्रकार छह वघहेतु के कुल मिलाकर (२१६+२१६=४३२) चार सौ वत्तीस भग होते है।

अव सात वघहेतु और उनके भगो को वतलाते है—

पूर्वोक्त पाच वघहेतुओ मे भय और जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर सात वघहेतु होते है। इनके भी (२१६) दो सौ सोलह भग होते है।

इस प्रकार अपूर्वकरणगुणस्थान के वघहेतुओ के सब मिलाकर (२१६+२१६+२१६+२१६=८६४) आठ सौ चौसठ भग होते है। इन वघहेतुओ और भगो का दर्शक प्रारूप इस प्रकार है—

बधहेतु	हेतुओ के विकल्प	विकल्पवार भग	कुल भग सख्या
५	१ वेद, १ योग, १ युगल, १ कषाय	२१६	२१६
६	पूर्वोक्त पाच, भय	२१६	
६	,, ,, जुगुप्सा	२१६	४३२
७	पूर्वोक्त पाच, भय, जुगुप्सा	२१६	२१६
		कुल योग	८६४

अब नौवे अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान के बधहेतु और उनके भगो को बतलाते है।

अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान के बधहेतु

अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान मे जघन्यपदवर्ती दो बधहेतु होते हैं और वे इस प्रकार है—सज्वलनकषायचतुष्क मे से कोई एक क्रोधादि कषाय और नौ योगो मे से कोई एक योग। अत चार कषाय से नौ योगो का गुणा करने पर दो बधहेतु के कुल (४×९=३६) छत्तीस भग है तथा उत्कृष्टपद मे तीन हेतु होते हैं। उनमे से दो तो पूर्वोक्त और तीसरा वेदत्रिक मे से कोई एक वेद। इस गुणस्थान मे जब तक पुरुषवेद और सज्वलनकषायचतुष्क इस तरह पाच प्रकृतियो का बध होता है, वहाँ तक वेद का भी उदय है। अत वेदत्रिक मे से कोई एक वेद को मिलाने पर तीन बधहेतु होते है। इन तीन हेतुओ का पूर्वोक्त छत्तीस के साथ गुणा करने पर (३६×३=१०८) एक सौ आठ भग होते है तथा कुल मिलाकर (३६+१०८=१४४) एक सौ चवालीस भग है।

अब दसवे सूक्ष्मसपरायगुणस्थान से लेकर तेरहवें सयोगिकेवली गुणस्थान पर्यन्त चार गुणस्थानो के बधहेतु एव उनके भग बतलाते हैं।

सूक्ष्मसपराय आदि गुणस्थानो के बंधहेतु एव उनके भग

सूक्ष्मसपरायगुणस्थान मे सूक्ष्मकिट्टी रूप की गई सज्वलन लोभ-कषाय और नौ योग कुल दस बधहेतु है। एक जीव के एक समय मे लोभ कषाय और एक योग इस प्रकार दो बधहेतु और अनेक जीवो की अपेक्षा उस एक कषाय का नौ योगों के साथ गुणा करने पर नौ भग होते है।

उपशातमोह आदि सयोगिकेवली पर्यन्त गुणस्थानो मे मात्र योग ही बधहेतु है। उपशातमोहगुणस्थान मे नौ योग है। उन नौ मे से कोई भी एक योग एक समय मे बधहेतु होने से उनके नौ भग होते है।

इसी प्रकार से क्षीणमोहगुणस्थान मे भी नौ भग होते है।

सयोगिकेवलीगुणस्थान मे सात योग होने से सात भग होते है।

इस प्रकार से गुणस्थानो मे से प्रत्येक के बधहेतु और उनके भगो को जानना चाहिये।

अब ग्र थकार आचार्य गुणस्थानो के बधहेतुओ के कुल भगो की सख्या का योग बतलाते है—

सव्वगुणठाणगेसु विसेसहेऊण एत्तिया सखा।
छायाललक्ख बासीइ सहस्स सय सत्त सयरी य ॥१४॥

शब्दार्थ—सव्व—समस्त, गुणठाणगेसु—गुणस्थानको मे, विसेसहेऊण—विशेष हेतुओ की, एत्तिया—इतनी, सखा—सख्या, छायाललक्ख—छियालीस लाख, बासीइ—बयासी, सहस्स—सहस्र, हजार, सय—शत, सौ, सत्त—सात, सयरी—सत्तर, य—और।

गाथार्थ—समस्त गुणस्थानो के विशेष बधहेतुओ के भगो की कुल मिलाकर सख्या छियालीस लाख बयासी हजार सात सौ सत्तर है।

विशेषार्थ—पूर्व मे अनेक जीवो की अपेक्षा मिथ्यात्व आदि सयोगि-केवली गुणस्थान पर्यन्त बधहेतुओ का निर्देश करते हुए प्रत्येक गुण-स्थान मे प्राप्त भगो को बताया है। इस गाथा मे उन सब भगो को

जोडकर अतिम सख्या वताई कि वे छियालीस लाख वयासी हजार सात सौ सत्तर (४६,८२,७७०) होते है।[1]

इस प्रकार से गुणस्थानो मे युगपत् कालभावी वधहेतु और उनके भगो की सख्या वतलाने के पश्चात् अव जीवस्थानो मे युगपत् काल-भावी बधहेतुओ की सख्या का प्रतिपादन करते है।

जीवस्थानो मे बधहेतु

सोलसट्ठारस हेऊ जहन्न उक्कोसया असन्नीण।
चोद्दसट्ठारसऽपज्जस्स सन्निणो सन्निगुणगहिओ ॥१५॥

शब्दार्थ—सोलसटठारस—सोलह, अठारह, हेऊ—हेतु, जहन्न—जघन्य, उक्कोसया—उत्कृष्ट, असन्नीण—असज्ञियो के, चोद्दसट्ठारस—चौदह, अठारह, अपज्जस्स—अपर्याप्त, सन्निणो—सज्ञी के, सन्नि—सज्ञी को, गुणगहिओ—गुणस्थानो के द्वारा ग्रहण किया है।

गाथार्थ—असज्ञियो के जघन्य और उत्कृष्ट क्रमश सोलह और अठारह बधहेतु होते है, अपर्याप्त सज्ञी के जघन्य चौदह और उत्कृष्ट अठारह बधहेतु होते हैं। सज्ञी को गुणस्थानो के द्वारा ग्रहण किया गया है।

विशेषार्थ—गुणस्थानो की तरह जीवस्थानो मे भी जघन्य और उत्कृष्ट बधहेतुओ की सख्या का गाथा मे सकेत किया है।

जीवस्थानो के सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त आदि सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त पर्यन्त चौदह भेदो के नाम पूर्व मे बतलाये जा चुके हैं। उनमे से आदि के बारह भेद असज्ञी ही होते है। अत उन बारह भेदो का समावेश गाथा मे 'असन्नीण' शब्द द्वारा किया है। जिसका आशय इस प्रकार है—

१- दिगम्बर कर्मसाहित्य मे भी बध-प्रत्ययो की सख्या यहाँ की तरह समान होने पर भी उनके भगो मे अतर है। उनका वर्णन परिशिष्ट मे किया गया है।

सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त को छोडकर शेष बारह जीव-स्थानो मे जघन्यत सोलह और उत्कृष्टत अठारह बधहेतु होते है। लेकिन यह कथन मिथ्यादृष्टिगुणस्थान की अपेक्षा से ही समझना चाहिये। क्योकि सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे तो बादर अपर्याप्त एकेन्द्रियो के जघन्यपद मे पन्द्रह बधहेतु होते हैं।

सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्तको के जघन्यपद मे चौदह और उत्कृष्ट-पद मे अठारह बधहेतु होते है। इस प्रकार से तेरह जीवस्थानो मे तो यथोक्त क्रम से बधहेतुओ को समझ लेना चाहिये और इनसे शेष रहे एक जीवस्थान सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त मे तो जैसे पहले गुणस्थानो मे बधहेतुओ का प्रतिपादन किया है तदनुसार समझना चाहिये। क्योकि पर्याप्त सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय मे ही चौदह गुणस्थान सभव है। जिससे चौदह गुणस्थानो के बधहेतुओ के भगो के कथन द्वारा पर्याप्त सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय मे ही बधहेतुओ का निर्देश किया गया है, ऐसा समझ लेना चाहिये। अत यहाँ पुन उनके भगो का कथन नही करके शेष तेरह जीवस्थानो के भगो को बतलाते हैं।

अब पर्याप्त सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय के सिवाय शेप तेरह जीवस्थानो मे मिथ्यात्व आदि बधहेतुओ के सभव अवान्तर भेदो का निर्देश करते हैं।

पर्याप्त सञ्ज्ञी व्यतिरिक्त शेष जीवस्थानो मे सभव बधहेतु

मिच्छत्त एगं चिय छक्कायवहो ति जोग सन्निम्मि।
इंदियसंखा सुगमा असन्निविगलेसु दो जोगा ॥१६॥

शब्दार्थ—मिच्छत्तं—मिथ्यात्व, एग—एक, चिय—ही, छक्कायवहो—छहो काय का वध, ति—तीन, जोग—योग, सन्निम्मि—(अपर्याप्त) सञ्ज्ञी मे, इंदियसखा—इन्द्रियो की सख्या, सुगमा—सुगम, असन्निविगलेसु—असञ्ज्ञी और विकलेन्द्रियो मे, दो—दो, जोगा—योग।

गाथार्थ—(पर्याप्त सञ्ज्ञी के सिवाय तेरह जीवभेदो मे) मिथ्यात्व

नही होने से हिंसक ही है। तो फिर उसे सामान्यत छहो काय का हिंसक क्यो नही कहा ? किसी समय एक काय का, किसी समय दो आदि काय का हिंसक क्यो वताया ?

उत्तर—यह दोपापत्ति मिथ्यात्वगुणस्थान के भगो मे सम्भव नही है। इसका कारण यह है कि सज्ञी जीव मन वाले है और मन वाले होने से उनको किसी समय कोई एक काय के प्रति तीव्र, तीव्रतर परिणाम होते है। उन सज्ञी जीवो के ऐसा विकल्प होता है कि मुझे अमुक एक काय की हिंसा करना है, अमुक दो काय की हिंसा करना है, अथवा अमुक अमुक तीन काय का घात करना है। इस प्रकार वुद्धिपूर्वक अमुक-अमुक काय की हिंसा मे वे प्रवृत्त होते है। इसलिए उस अपेक्षा छह काय के एक, दो आदि सयोग से वनने वाले भगो की प्ररूपणा वहाँ घटित होती है। परन्तु असज्ञी जीवो मे तो मन के अभाव मे उस प्रकार का सकल्प न होने से सभी काय के जीवो के प्रति अविरति रूप सर्वदा एक जैसे परिणाम ही पाये जाते है। इस कारण उनके सदैव छहो काय का वधरूप एक भग ही होता है। जिससे यहाँ काय के स्थान पर एक का अक रखने का सकेत किया है।

'ति जोग सन्निम्मि' अर्थात् अपर्याप्त सज्ञी मे कार्मण, औदारिक-मिश्र और वैक्रियमिश्र ये तीन योग होते है और दूसरे योग नही होते है। अत अपर्याप्त सज्ञी पचेन्द्रिय के वधहेतु के भगो के विचार मे योग के स्थान पर तीन का अक रखना चाहिए किन्तु 'असन्नि विगलेसु दो जोगा' पर्याप्त, अपर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवो मे दो, दो योग समझना चाहिए। जो इस प्रकार कि अपर्याप्त अवस्था मे कार्मण और औदारिकमिश्र ये दो योग और पर्याप्त दशा मे औदा-रिक काययोग तथा असत्यामृषावचनयोग ये दो योग होते हैं। अत. उनके वधहेतु के विचार मे योग के स्थान पर दो का अक रखना चाहिए।

'इदियसखा सुगमा' अर्थात् तेरह जीवस्थानो मे इन्द्रियो की सख्या प्रसिद्ध होने से सुगम है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि पचेन्द्रिय के

इस प्रकार से जीवस्थानो मे बधहेतुओ सम्बन्धी विशेषताओ की सामान्य रूपरेखा जानना चाहिए। अब इसी प्रसग मे एकेन्द्रिय जीवो मे सम्भव योगो और सज्ञी अपर्याप्त आदि मे प्राप्त गुणस्थानो को बतलाते हैं।

एकेन्द्रिय जीवो मे संभव योग

एव च अपज्जाण बायरसुहुमाण पज्जयाण पुणो।
तिण्णेक्ककायजोगा सण्णिअपज्जे गुणा तिन्नि ॥१७॥

शब्दार्थ—एवं—इसी तरह, च—और, अपज्जाण—अपर्याप्त, बायरसुहुमाण—बादर और सूक्ष्म के, पज्जयाण—पर्याप्त के, पुणो—पुन, तिण्णेक्क—तीन और एक, काययोगा—काययोग सण्णिअपज्जे—सज्ञी अपर्याप्त के, गुणा—गुणस्थान, तिन्न—तीन।

गाथार्थ—इसी तरह अर्थात् असज्ञी की तरह बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त के दो योग होते है। पर्याप्त बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय के क्रमश तीन और एक योग होता है तथा अपर्याप्त सज्ञी के तीन गुणस्थान होते है।

विशेषार्थ—गाथा मे बादर, सूक्ष्म एकेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त अवस्था मे प्राप्त योगो एव अपर्याप्त सज्ञी मे पाये जाने वाले गुणस्थानो का निर्देश किया है। जिसका विशेष स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

पूर्व गाथा मे जैसे अपर्याप्त असज्ञी और विकलेन्द्रियो मे दो योग बतलाये है, उसी प्रकार अपर्याप्त बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय मे भी कार्मण और औदारिकमिश्र ये दो योग समझाना चाहिये— 'एव च अपज्जाण बायरसुहुमाण'। किन्तु पर्याप्त बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय के अनुक्रम से तीन और एक योग होता है। उनमे से पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय के औदारिक, वैक्रिय और वैक्रियमिश्र ये तीन योग होते हैं और पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के औदारिक काययोग रूप एक योग ही होता है। इसलिये उन-उन जीवो की अपेक्षा से बधहेतुओ के भगो का विचार करने के प्रसग मे योगस्थान मे तीन और एक का अक रखना चाहिये।

यदि गुणस्थानो का विचार किया जाये तो करण-अपर्याप्त सज्ञी के मिथ्यादृष्टि, सासादन और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान होते है तथा करण-अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और असज्ञी पचेन्द्रिय जीवो मे मिथ्यादृष्टि और सासादन ये दो गुणस्थान होते है। जिसका सकेत गाथा के प्रारम्भ मे 'एव च' पद मे 'एव' के अनन्तर आगत 'च' शब्द से किया गया समझना चाहिये तथा पर्याप्त अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय और पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और असज्ञी पचेन्द्रिय जीवो मे मिथ्यादृष्टि रूप एक गुणस्थान होता है। लेकिन जब एकेन्द्रियादि पूर्वोक्त जीवो मे सासादन गुणस्थान होता है तब वहाँ मिथ्यात्व नही होने से बधहेतु पन्द्रह होते हैं। उस समय कार्मण और औदारिकमिश्र ये दो योग होते है। क्योकि सज्ञी के सिवाय अन्य जीवो को सासादनत्व अपर्याप्त अवस्था मे ही होता है, अन्य काल मे नही होता है और अपर्याप्त सज्ञी के सिवाय शेष जीवो के अपर्याप्त अवस्था मे पूर्वोक्त दो योग ही होते हैं और यह पहले कहा जा चुका है कि अपर्याप्त सज्ञी मे तो कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र ये तीन योग होते है।

प्रश्न—सासादनभाव मे भी शेष पर्याप्तियो से अपर्याप्त और शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त के औदारिककाययोग सभव है। इसलिये बादर एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और असज्ञी पचेन्द्रिय जीवो के सासादन-गुणस्थान मे तीन योग न कह कर दो योग ही क्यो बताये है ?

उत्तर—दो योग बताने का कारण यह है कि शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त अवस्था मे सासादनगुणस्थान होता ही नही है। क्योकि सासा-दनभाव का काल मात्र छह आवलिका है और शरीरपर्याप्ति से पर्याप्तत्व तो अन्तमुहूर्त काल मे होता है। जिससे शरीरपर्याप्ति पूण होने से पहले ही सासादनभाव चला जाता है। इसीलिये उन जीवो को सासादनभाव मे पूर्वोक्त दो योग ही पाये जाते है और मिथ्यादृष्टिगुणस्थान मे जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नही होती है,

तब तक कार्मण और औदारिकमिश्र यही दो योग होते है और शरीर-पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद औदारिककाययोग होता है। जिससे अपर्याप्त अवस्था मे तीन योग माने जाते है।

अब इसी बात को स्वय ग्रन्थकार आचार्य स्पष्ट करते हुए जीव-स्थानो मे बधहेतु और उनके भगो का कथन करते है—

उरलेण तिन्नि छण्ह सरीरपज्जत्तयाण मिच्छाण।
सविउव्वेण सन्निस्स सम्ममिच्छस्स वा पच ॥१८॥

शब्दार्थ—उरलेण—औदारिक के साथ, तिन्नि—तीन, छण्ह—छह जीव-स्थानो मे, सरीरपज्जत्तयाण—शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त, मिच्छाण—मिथ्याद्दष्टि, सविउव्वेण—वैक्रियकाययोग सहित, सन्निस्स—सज्ञी के, सम्म—सम्यग्द्दष्टि, मिच्छस्स—मिथ्याद्दष्टि के, वा—अथवा, पच—पाच।

गाथार्थ—शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त मिथ्याद्दष्टि छह जीव-स्थानो मे औदारिककाययोग के साथ तीन योग और सम्यग्द्दष्टि अथवा मिथ्याद्दष्टि शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त सज्ञी जीवो के वैक्रिय-काययोग सहित पाच योग होते है।

विशेषार्थ—गाथा मे शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त और शेष पर्याप्तियो से अपर्याप्त एकेन्द्रिय आदि सज्ञी पचेन्द्रिय पर्यन्त जीवभेदो मे बधहेतु और उनके भगो का विचार किया गया है।

शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त एव शेष पर्याप्तियो से अपर्याप्त मिथ्या-द्दष्टि सूक्ष्म-बादर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असज्ञी पचेन्द्रिय इन छह जीवस्थानो मे औदारिककाययोग के साथ तीन योग होते है—'उरलेण तिन्नि छण्ह'। अत इन अपर्याप्त छह जीव-स्थानो मे मिथ्याद्दष्टिगुणस्थान की अपेक्षा बधहेतुओ के भगो का विचार करने पर अकस्थापना मे योग के स्थान पर तीन रखना चाहिये तथा सज्ञी अपर्याप्त मिथ्याद्दष्टि अथवा सम्यग्द्दष्टि जीवो के शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के पहले पूर्वोक्त वैक्रियमिश्र, औदारिक और कार्मण ये तीन योग होते है और शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के पश्चात्

देव और नारको की अपेक्षा वैक्रियकाययोग एव मनुष्य और तिर्यंचो की अपेक्षा औदारिककाययोग सभव होने से कुल पाच योग होते हैं। अतएव सज्ञी के अपर्याप्त अवस्था मे सम्यग्दृष्टित्व की अपेक्षा या मिथ्यादृष्टित्व की अपेक्षा वधहेतुओ के भगो के कथन करने के प्रसग मे योग के स्थान पर पाच का अक रखना चाहिये।

इस भूमिका को वतलाने के पश्चात् अव पहले जो गाथा १५ मे सज्ञी अपर्याप्त के (चोद्दसट्ठारसऽपज्जस्स सन्निणो) जघन्यपद मे चौदह और उत्कृष्टपद मे अठारह वधहेतु कहे हैं, उनका विचार करते है।

सज्ञी अपर्याप्त के वधहेतु के भग

जघन्यपद मे चौदह बधहेतु सम्यग्दृष्टि के होते है, जो इस प्रकार जानना चाहिये—

छह काय का वध, पाच इन्द्रियो की अविरति मे से कोई एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से कोई एक युगल, वेदत्रिक मे से कोई एक वेद, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन क्रोधादि कषायो मे से कोई भी क्रोधादि तीन कषाय तथा योग यहाँ पाच सभव हैं। जैसाकि ग्र थकार आचार्य ने ऊपर गाथा मे सकेत किया है—

सविउव्वेण सन्निस्स सम्ममिच्छस्स वा पच।

अर्थात् सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि सज्ञी अपर्याप्त के वैक्रिय और औदारिक काययोग के साथ पाच योग होते है। अत पाच योगो मे से कोई एक योग। इस प्रकार जघन्यपद मे चौदह बधहेतु होते है।

अकस्थापना मे पर्याप्त सज्ञी के सिवाय सभी जीवो के सदैव छह काय का वधरूप एक ही भग होता है। इसलिए अकस्थापना इस प्रकार करना चाहिये—

काय	वेद	योग	इन्द्रिय-अविरत	युगल	कषाय
१	३	५	५	२	४ =

इस प्रकार से अकस्थापना करने के पश्चात् सर्वप्रथम तीन वेद के साथ पाच योगो का गुणा करने पर (३×५=१५) पन्द्रह हुए। इनमे से अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे चार रूप कम करने का सकेत पूर्व मे (गाथा १२ मे) किया गया है। अत शेष ग्यारह रहे। इन ग्यारह को पाच इन्द्रियो की अविरत से गुणा करने पर (११×५=५५) पचपन हुए। इनको युगलद्विक से गुणा करने पर (५५×२=११०) एक सौ दस हुए और इन एक सौ दस को क्रोधादि चार कषायो के साथ गुणा करने पर (११०×४=४४०) चार सौ चालीस होते हैं।

ये सज्ञी अपर्याप्त सम्यग्दृष्टि के चौदह बधहेतुओ के भंग है।

१ इन चौदह बधहेतुओ मे भय को मिलाने पर पन्द्रह हेतु होते है। उनके भी चार सौ चालीस (४४०) ही भग हुए।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी होने वाले पन्द्रह हेतुओ के भी चार सौ चालीस (४४०) भग होते हैं।

पूर्वोक्त जघन्यपदभावी चौदह बधहेतुओ मे भय और जुगुप्सा इन दोनो को युगपत् मिलाने से सोलह हेतु होते है। उनके भी चार सौ चालीस (४४०) भग होते है।

इस प्रकार कुल मिलाकर अविरतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त सज्ञी के (४४०+४४०+४४०+४४०=१७६०) सत्रह सौ साठ भग होते है।

सासादनसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त सज्ञी के कार्मण, औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र ये तीन योग होते है। अत योग के स्थान पर तीन का अक रखना चाहिये। इस गुणस्थान वाले के अनन्तानुबधी का उदय होने से जघन्यपद मे पन्द्रह बधहेतु होते है। उनकी अकस्थापना इस प्रकार करना चाहिये—

कायवध	वेद	योग	इन्द्रिय-अविरत	युगल	कषाय
१	३	३	५	२	४

इनमे से पहले तीन वेद के साथ तीन योग का गुणा करने पर नौ (३×३=९) होते है। इनमे से पूर्व मे बताये गये अनुसार सासादन-

गुणस्थान मे एक रूप कम करने पर[1] आठ (८) शेप रहे। इन आठ का पाच इन्द्रिय-अविरत से गुणा करने पर (८×५=४०) चालीस हुए। इनका युगलद्विक से गुणा करने पर (४०×२=८०) अस्सी हुए। जिनका चार कपाय मे गुणा करने पर (८०×४=३२०) तीन सौ वीस हुए। जिससे सासादनगुणस्थान मे सज्ञी अपर्याप्त के पन्द्रह वधहेतुओ के तीन सौ बीस (३२०) भग जानना चाहिये।

१ पूर्वोक्त पन्द्रह वधहेतुओ मे भय को मिलाने पर होने वाले सोलह वधहेतुओ के भी तीन सौ वीस (३२०) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा के मिलाने पर भी सोलह वधहेतुओ के तीन सौ बीस (३२०) भग समझ लेना चाहिये।

भय, जुगुप्सा को युगपत् मिलाने से सत्रह वधहेतु होते है। इनके भी तीन सौ वीस (३२०) भग होते है।

इस प्रकार सासादनगुणस्थान मे सज्ञी अपर्याप्त के कुल मिलाकर (३२०+३२०+३२०+३२०=१२८०) बारह सौ अस्सी भग जानना चाहिये।

मिथ्यादृष्टि सज्ञी अपर्याप्त के पूर्वोक्त पन्द्रह हेतुओ मे मिथ्यात्व के उदय का समावेश होने से जघन्यपद मे सोलह बधहेतु होते हैं। यहाँ योग पाच होते है। क्योकि पूर्व मे बताया जा चुका है कि सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि सज्ञी अपर्याप्त के वैक्रिय सहित पाच योग होते है। अतएव अकस्थापना पूर्ववत् करके मिथ्यात्व का उदय होने से और वह भी अनाभोगिकमिथ्यात्व का होने से मिथ्यात्व के स्थान पर एक के अक की स्थापना करना चाहिये। जिससे अकस्थापना इस प्रकार होगी—

---

१ नपु सकवेदी के वैक्रियमिश्र काययोग नही होने से एक रूप कम करने का निर्देश किया है।

मिथ्यात्व	कायवध	वेद	योग	इन्द्रिय अविरत	युगल	कषाय
१	१	३	५	५	२	४

इस अकस्थापना मे तीन वेदो के साथ पाच योगो का गुणा करने से (३×५=१५) पन्द्रह हुए। उनका पाच इन्द्रियो की अविरति से गुणा करने पर (१५×५=७५) पचहत्तर हुए। जिनको युगलद्विक से गुणा करने पर (७५×२=१५०) एक सौ पचास हुए और इनको भी चार कपाय से गुणा करने पर (१५०×४=६००) छह सौ होते है। जो सज्ञी अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि के सालह वधहेतु के भगो की सख्या है।

१ उक्त वधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सत्रह वधहेतु होते है। इनके भी उतने ही अर्थात् छह सौ (६००) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत छह सौ (६००) भग जाना चाहिये।

भय, जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठारह वधहेतु होते है। इनके भी छह सौ (६००) भग जानना चाहिये।

इस प्रकार कुल मिलाकर सज्ञी अपर्याप्त मिथ्यादृष्टि के (६००+६००+६००+६००=२४००) चौवीस सौ भग होते है और तीनो गुणस्थानो के सभी मिलकर (१७६०+१२८०+२४००=५४४०) चउवन सौ चालीस भग जानना चाहिये।

अपर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के वधहेतु के भग

सज्ञी अपर्याप्त के वधहेतुओ के भगो को वतलाने क पश्चात् अव अपर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के वधहेतुओ के भगो को वतलाते है—

असज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त के सासादनगुणस्थान मे जघन्य मे पन्द्रह वधहेतु होते है। जो इस प्रकार है—छह काय का वध, पाच इन्द्रिय की अविरत मे से किसी एक इन्द्रिय की अविरत, युगलद्विक मे से कोई एक युगल, वेदत्रिक मे से कोई एक वेद, अनन्तानुवधी आदि कपायो मे से कोई एक क्रोधादि चार और कार्मण तथा औदारिकमिश्र

काययोग मे से कोई एक योग। इस प्रकार कम से कम पन्द्रह ववहेतु होते है। जिनकी अकस्थापना इस प्रकार जानना चाहिये—

कायवध	इन्द्रिय-अविरति	कपाय	युगल	वेद	योग
१	५	४	२	३	२'

इन अको का अनुक्रम से गुणा करने पर पन्द्रह वधहेतुओ के दो सौ चालीस (२४०) भग होते है।

१ उक्त पन्द्रह वधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सोलह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् दो सौ चालीस (२४०) भग है।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सोलह वधहेतुओ के दो सौ चालीस (२४०) भग होते है।

उक्त पन्द्रह हेतुओ मे भय, जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर सत्रह बधहेतु होते है। इनके भी दो सौ चालीस (२४०) भग जानना चाहिये तथा सब मिलाकर सासादनगुणस्थान मे वर्तमान असज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त के (२४०+२४०+२४०+२४०=९६०) नौ सौ साठ भग होते हैं।

मिथ्यादृष्टि असज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त के मिथ्यात्व का उदय होने से जघन्यपद मे सोलह बधहेतु होते हैं। मिथ्यात्वगुणस्थान मे अपर्याप्त अवस्था मे योग तीन होते है। अत योग के स्थान पर तीन का अक रखकर पूर्ववत् अनुक्रम से अको का गुणा करने पर सोलह बधहेतुओ के तीन सौ साठ (३६०) भग होते हैं।

१ उक्त सोलह बधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सत्रह बधहेतु होते है। इनके भी तीन सौ साठ (३६०) भग होते है।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सत्रह बधहेतु होते हैं। इनके तीन सौ साठ (३६०) भग जानना चाहिये।

उक्त सोलह बधहेतुओ मे भय, जुगुप्सा को युगपत् मिलाने से अठारह बधहेतु होते हैं। इनके भी तीन सौ साठ (३६०) भग जानना चाहिये।

इस प्रकार कुल मिलाकर मिथ्यादृष्टि असज्ञी अपर्याप्त के (३६०+३६०+३६०+३६०=१४४०) चौदह सौ चालीस भग होते है और दोनो गुणस्थानो के बधहेतुओ के कुल मिलाकर भग (९६०+१४४०=२४००) चौबीस सौ होते है।

पर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के बधहेतु के भंग

पर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के जघन्यपद मे सोलह बधहेतु होते है। जो इस प्रकार है—एक मिथ्यात्व, छह काय का वध, पाच इन्द्रियो की अविरति मे से किसी एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से कोई एक युगल, अनन्तानुबधी आदि कषायो मे से कोई भी क्रोधादि चार कषाय, वेदत्रिक मे से एक वेद और औदारिक काययोग तथा असत्यामृषा वचनयोग रूप दो योग। जिनकी अकस्थापना इस प्रकार जानना चाहिये—

मिथ्यात्व	षट्कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	कषाय	वेद	योग
१	१	५	२	४	३	२

इन अको का क्रमश गुणा करने पर सोलह बंधहेतुओ के दो सौ चालीस (२४०) भग होते है।

१ इन सोलह बधहेतुओ मे भय का प्रक्षेप करने पर सत्रह बधहेतु होते है। इनके भी दो सौ चालीस (२४०) भग होते है।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर भी सत्रह बंधहेतु होते है। इनके भी दो सौ चालीस (२४०) भग जानना चाहिये।

उक्त सोलह हेतुओ मे भय, जुगुप्सा को युगपत् मिलाने से अठारह बधहेतु होते हैं। इनके भी दो सौ चालीस (२४०) भग होते है और सब मिलकर पर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के बधहेतु के (२४०+२४०+२४०+२४०=९६०) नौ सौ साठ भग होते हैं।

इस प्रकार पर्याप्त असज्ञी पचेन्द्रिय के बधहेतुओ के भग जानना चाहिये।

अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय के बधहेतुओ के भग

अब चतुरिन्द्रिय के बधहेतुओ के भगो को बतलाते हैं।

अपर्याप्त और पर्याप्त के भेद से चतुरिन्द्रिय जीवो के दो प्रकार है। उनमे से पहले अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय जीवो के बधहेतुओ के भगो को बतलाते है कि इनको सासादनगुणस्थान मे जघन्यत पन्द्रह बधहेतु होते है। जो इस प्रकार है— छह काय का वध, चार इन्द्रियो की अविरति मे से एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से एक युगल तथा सज्ञी पचेन्द्रिय के सिवाय शेष सभी ससारी जीव परमार्थत नपु सकवेदी है मात्र असज्ञी पचेन्द्रिय जीवो मे स्त्री और पुरुष का आकार होने से उस आकार की अपेक्षा वे स्त्रीवेदो और पुरुषवेदी भी माने जाते है। जिससे असज्ञियो मे तीन वेद बतलाये है। चतुरिन्द्रिय जीवो मे एक नपु-सकवेद ही समझना चाहिये। अत वेद एक तथा अनन्तानुबधी क्रोधादि मे से कोई भी क्रोधादि चार कषाय, कार्मण और औदारिकमिश्र काय-योग मे से एक योग।

इनकी अकस्थापना मे कायस्थान पर एक रखना चाहिये। क्योकि षट्काय की हिंसा का षट्सयोगी भग एक हो होता। इन्द्रिय-अविरित के स्थान पर चार, युगल के स्थान पर दो, वेद के स्थान पर एक, कषाय के स्थान पर चार और योग के स्थान पर दो का अक रखना चाहिये। अकस्थापना का रूप इस प्रकार का होगा—

कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	४	२	१	४	२

इन अको का गुणकार इस प्रकार करना चाहिये—चारो इन्द्रिय की अविरति एक एक युगल के उदय वाले के होती है। इसलिये इन्द्रिय-अविरति को युगलद्विक से गुणा करने पर (४+२=८) आठ होते हैं। ये आठो क्रोधादि कोई भी एक एक कषाय के उदय वाले हैं। अत आठ को चार से गुणा करने पर (८×४=३२) बत्तीस हुए। ये बत्तीस भी एक एक योग वाले हैं। इसलिये उनका दो से गुणा करने पर

(३२×२=६४) चौसठ होते है। इतने अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय के सासादनगुणस्थान में पन्द्रह बंधहेतु के भंग होते है।

१ इन पन्द्रह बंधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सोलह बंधहेतु होते है। इनको भी चौसठ (६४) भंग है।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर भी सोलह बंधहेतु होगे। इनके भी चौसठ (६४) भंग जानना चाहिये।

पूर्वोक्त पन्द्रह हेतुओ मे युगपत् भय-जुगुप्सा को मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होते है। इनके भी चौसठ (६४) भंग होते है और कुल मिलाकर सासादनगुणस्थान मे अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय के बंधहेतुओ के (६४+६४+६४+६४=२५६) दो सौ छप्पन भंग जानना चाहिये।

मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय के जघन्यपद मे पूर्वोक्त पन्द्रह बंधहेतुओ मे मिथ्यात्वमोहनीय का प्रक्षेप करने से सोलह बंधहेतु होते है। यहाँ कार्मण और औदारिकमिश्र और औदारिक यह तीन योग होते हैं। क्योकि शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के बाद औदारिक काययोग घटित होता है। जिसमे योग के स्थान पर तीन का अंक रखना चाहिये। अंकस्थापना का क्रम इस प्रकार है—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	१	४	२	१	४	३

इन अंको का परस्पर क्रमश गुणा करने पर छियानवै (९६) भंग होते है।

१ इन सोलह बंधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सत्रह हेतु होते है। इनके भी छियानवै (९६) भंग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते है। इनके भी छियानवै (९६) भंग होते हैं।

पूर्वोक्त सोलह बंधहेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठारह हेतु होते है। इनके भी छियानवै (९६) भंग होते है और सब मिलाने पर अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय मिथ्यादृष्टि के (९६+९६+९६+

६६=३८४) तीन सौ चौरासी भग होते हैं और दोनो गुणस्थानो के कुल मिलाकर (२५६+३८४=६४०) छह सौ चालीस भग होते है।

पर्याप्त चतुरिन्द्रिय के बधहेतु के भग

पर्याप्त चतुरिन्द्रिय के एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। इसके जघन्यपद मे सोलह बधहेतु होते है। वे इस प्रकार जानना चाहिये— मिथ्यात्व एक, छह काय का वध एक, चार इन्द्रियो की अविरति मे से अन्यतर एक इन्द्रिय की अविरति, युगलद्विक मे से एक युगल, अनन्तानुबधि क्रोधादि मे से अन्यतर क्रोधादि चार कषाय, नपु सकवेद और औदारिक काययोग तथा असत्यामृषा वचनयोग ये दो योग। जिनकी अकस्थापना इस प्रकार होगी—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	कषाय	वेद	योग
१	१	४	२	४	१	२

इन अको का क्रमश गुणा करने पर सोलह बधहेतुओ के चौसठ भग होते है।

१ इन सोलह बधहेतुओ मे भय का प्रक्षेप करने पर सत्रह बधहेतु होने है। इनके भी पूर्व की तरह चौसठ (६४) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सत्रह बधहेतु होते हैं। इनके भी चौसठ भग होगे।

पूर्वोक्त सोलह बधहेतुओ मे युगपत् भय-जुगुप्सा को मिलाने पर अठारह हेतु होते है। इनके भी चौसठ (६४) भग जानना चाहिये।

इस प्रकार चतुरिन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि के बधहेतुओ के कुल मिलाकर (६४+६४+६४+६४=२५६) दो सौ छप्पन भग होते हैं।

चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त और पर्याप्त दोनो के बधहेतुओ के कुल मिलाकर (२५६+३८४+२५६=८९६) आठ सौ छियानवै भग जानना चाहिये।

अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के बंधहेतु के भंग

अब त्रीन्द्रिय के बंधहेतुओ के भंगो का कथन करते हैं। पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से त्रीन्द्रिय भी दो प्रकार के हैं। उनमे से पहले अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के बंधहेतुओ के भंगो को बतलाते है।

अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के भी चतुरिन्द्रिय की तरह सासादनगुणस्थान मे जघन्यपदभावी पन्द्रह बंधहेतु होते हैं। यहाँ इतनी विशेषता है कि इन्द्रिय-अविरति के स्थान पर तीन इन्द्रियो की अविरति मे से एक इन्द्रिय की अविरति ग्रहण करके अंकस्थापना इस प्रकार करना चाहिये—

कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	३	२	१	४	२

इन अंको का क्रमश परस्पर गुणा करने पर पन्द्रह बंधहेतुओ के अड़तालीस (४८) भंग होते है।

१ इन पन्द्रह बंधहेतुओ मे भय को मिलाने पर सोलह हेतु होते हैं। इनके भी अड़तालीस (४८) भंग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सोलह हेतु होते है। इनके अड़तालीस (४८) भंग होंगे।

पूर्वोक्त पन्द्रह बंधहेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होते है। इनके भी अड़तालीस (४८) भंग जानना चाहिये।

इस प्रकार सासादनगुणस्थान मे अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के बंधहेतुओ के कुल मिलाकर (४८+४८+४८+४८=१९२) एक सौ बानवै भंग होते है।

मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त त्रीन्द्रिय के पूर्वोक्त पन्द्रह बंधहेतुओ मे मिथ्यात्वरूप हेतु के मिलाने मे सोलह बंधहेतु होते हैं। यहाँ योग कार्मण, औदारिकमिश्र और औदारिक ये तीन होने से योग के स्थान

पर तीन के अक की स्थापना करना चाहिये। अकस्थापना का रूप इस प्रकार है—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कपाय	योग
१	१	३	२	१	४	३

इन अको का क्रमश गुणा करने पर सोलह बधहेतुओ के बहत्तर (७२) भग होते है।

१ इन सोलह हेतुओ मे भय को मिलाने पर सत्रह बधहेतु होगे। जिनके पूर्ववत् बहत्तर (७२) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर होने वाले सत्रह बधहेतुओ के पूर्ववत् बहत्तर (७२) भग जानना चाहिये।

उक्त सोलह हेतुओ मे युगपत् भय-जुगुप्सा को मिलाने पर अठारह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् बहत्तर भग होते हैं और कुल मिलाकर अपर्याप्त त्रीन्द्रिय मिथ्यादृष्टि के (७२+७२+७२+७२=२८८) दो सौ अठासी भग होते है तथा दोनो गुणस्थान के बधहेतु के कुल भग (१९२+२८८=४८०) चार सौ अस्सी है।

पर्याप्त त्रीन्द्रिय के बंधहेतु के भग

पर्याप्त त्रीन्द्रिय के पर्याप्त चतुरिन्द्रिय की तरह जघन्यपद मे सोलह बधहेतु होते हैं। मात्र तीन इन्द्रिय की अविरति मे से अन्यतर एक इन्द्रिय की अविरति समझना चाहिये। शेष सभी कथन पर्याप्त चतुरिन्द्रियवत् जानना चाहिये। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है कि यहाँ अकस्थापना का रूप यह होगा—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	कषाय	वेद	योग
१	१	३	२	४	१	२

इन अको का परस्पर गुणा करने पर अडतालीस (४८) भग होते है।

१ इन सोलह मे भय को मिलाने पर सत्रह बधहेतु होते हैं। इनके भी अडतालीस (४८) भग होते हैं।

२. अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होंगे। उनके भी अड़तालीस (४८) भग जानना चाहिये।

पूर्वोक्त सोलह बंधहेतुओं में युगपत् भय-जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर अठारह हेतु होते हैं। उनके भी अड़तालीस भंग जानना चाहिये और कुल मिलाकर मिथ्यादृष्टिगुणस्थान में पर्याप्त त्रीन्द्रिय के बंधहेतुओं के (४८+४८+४८+४८=१९२) एक सौ बानवै भंग जानना चाहिये तथा त्रीन्द्रिय के बंधहेतुओं के कुल भंग (४८०+१९२=६७२) छह सौ बहत्तर होते हैं।

इस प्रकार से त्रीन्द्रिय के बंधहेतु और उनके भंगों को जानना चाहिये। अब द्वीन्द्रिय के बंधहेतु और उनके भंगों को बतलाते हैं।

अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के बंधहेतु के भंग

द्वीन्द्रिय जीव भी दो प्रकार के होते हैं—अपर्याप्त और पर्याप्त। इनमें से पहले अपर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों के बंधहेतु और उनके भंगों को बतलाते हैं।

अपर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों के सासादनगुणस्थान में चतुरिन्द्रिय की तरह पन्द्रह बंधहेतु होते हैं। लेकिन यहाँ मात्र दो इन्द्रिय की अविरति में से अन्यतर एक इन्द्रिय की अविरति कहना चाहिये। अतः अंक-स्थापना का रूप इस प्रकार होगा—

कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	२	२	१	४	२

इन अंकों का क्रमशः गुणा करने पर पन्द्रह बंधहेतुओं के बत्तीस (३२) भंग होते हैं।

१. इन पन्द्रह बंधहेतुओं में भय को मिलाने पर सोलह हेतु होते हैं। इनके भी बत्तीस (३२) भंग जानना चाहिये।

२. अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर सोलह हेतुओं के भी बत्तीस (३२) भंग होंगे।

पूर्वोक्त पन्द्रह हेतुओं में भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होते हैं। इनके भी बत्तीस (३२) भंग होंगे और सब मिलाकर

कर अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के सासादनगुणस्थान मे (३२+३२+३२+३२=१२८) एक सौ अट्ठाईस भग होते है।

मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के पूर्वोक्त पन्द्रह बधहेतुओ मे मिथ्यात्व के मिलाने पर सोलह होते हैं। यहाँ योग कार्मण, औदारिक-मिश्र और औदारिक ये तीन होते हैं। अत योग के स्थान पर तीन का अक रखकर इस प्रकार अकस्थापना करना चाहिये—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	१	२	२	१	४	३

इन अको का पूर्ववत् अनुक्रम से गुणा करने पर मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के सोलह बधहेतु के अडतालीस (४८) भग होते है।

१ इन सोलह बधहेतुओ मे भय का प्रक्षेप करने पर सत्रह हेतु होते हैं। इनके भी अडतालीस (४८) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा के मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते है। इनके भी पूर्ववत् अडतालीस (४८) भग होते है।

उक्त सोलह हेतुओ मे युगपत् भय-जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर अठारह हेतु होते है। इनके भी अडतालीस (४८) भग जानना चाहिये और सब मिलाकर (४८+४८+४८+४८=१९२) एक सौ बानवै भग होते है।

दोनो गुणस्थानो मे द्वीन्द्रिय अपर्याप्त के बधहेतुओ के कुल मिलाकर (१२८+१९२=३२०) तीन सौ बीस भग होते है।

पर्याप्त द्वीन्द्रिय के बधहेतु के भग

पर्याप्त द्वीन्द्रिय के अनन्तरोक्त (मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त द्वीन्द्रिय के लिए कहे गये) सोलह बधहेतु होते हैं। यहाँ औदारिक काययोग और असत्यामृषा वचनयोग इन दो योगो के होने से योग के स्थान पर दो का अक रखकर इस प्रकार अकस्थापना करना चाहिये—

मिथ्यात्व	कायवध	इन्द्रिय-अविरति	युगल	वेद	कषाय	योग
१	१	२	२	१	४	२

इन अंकों का क्रमानुसार गुणा करने पर सोलह बंधहेतुओं के बत्तीस (३२) भंग होते हैं।

१ इन सोलह में भय को मिलाने पर सत्रह हेतु होते हैं। इनके भी बत्तीस (३२) भंग होते हैं।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर सत्रह हेतुओं के भी बत्तीस (३२) भंग जानना चाहिये।

पूर्वोक्त सोलह हेतुओं में युगपत् भय-जुगुप्सा के मिलाने पर अठारह बंधहेतु होते हैं। इनके भी बत्तीस (३२) भंग जानना चाहिये और कुल मिलाकर पर्याप्त द्वीन्द्रिय के बंधहेतुओं के (३२+३२+३२+३२=१२८) एक सौ अट्ठाईस भंग होते हैं तथा अपर्याप्त और पर्याप्त द्वीन्द्रिय के सब मिलाकर (३२०+१२८=४४८) चार सौ अड़तालीस भंग जानना चाहिये।

इस प्रकार से द्वीन्द्रिय के बंधहेतुओं के भंगों का कथन करने के पश्चात् अब एकेन्द्रिय के बंधहेतु और उनके भंगों को बतलाते हैं।

अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय के बंधहेतुओं के भंग

बादर और सूक्ष्म के भेद से एकेन्द्रिय जीव दो प्रकार के हैं और इनके भी अपर्याप्त एवं पर्याप्त की अपेक्षा दो-दो भेद होने से एकेन्द्रिय जीवों के कुल चार भेद हो जाते हैं। इनमें से पहले बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त के बंधहेतु और उनके भंगों का निरूपण करते हैं।

अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय के सासादनगुणस्थान में जघन्यतः पूर्व की तरह पन्द्रह बंधहेतु होते हैं। यहाँ मात्र एक स्पर्शनेन्द्रिय की अविरति ही होती है। अतः अंकस्थापना में इन्द्रिय-अविरति के स्थान में एक, छह कायवध के स्थान में एक, कषाय के स्थान में चार, युगल के स्थान में दो, वेद के स्थान में एक और योग के स्थान में दो रखना चाहिये। जिससे अंकस्थापना का रूप इस प्रकार होगा—

इन्द्रिय-अविरति	कायवध	कषाय	युगल	वेद	योग
१	१	४	२	१	२

इन अको का अनुक्रम से परस्पर गुणा करने पर पन्द्रह बधहेतु के सोलह (१६) भग होते है।

१ इन पन्द्रह हेतुओ मे भय का प्रक्षेप करने पर सोलह बधहेतु होते हैं। इनके भी सोलह (१६) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा के मिलाने पर भी सोलह (१६) हेतु होंगे। इनके भी सोलह (१६) भग होंगे।

पूर्वोक्त पन्द्रह हेतुओ मे भय और जुगुप्सा को युगपत् मिलाने से सत्रह हेतु होते है। इनके भी सोलह (१६) भग जानना चाहिये और इस प्रकार सासादनगुणस्थान मे अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय के कुल मिलाकर (१६+१६+१६+१६=६४) चौसठ भग होते है।

अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि के उक्त पन्द्रह बधहेतुओ मे मिथ्यात्व रूप हेतु के मिलाने पर सोलह बधहेतु होते है और यहाँ कार्मण, औदारिकमिश्र एव औदारिक इन तीन योगो मे से अन्यतर योग कहकर योग के स्थान पर तीन का अक रखना चाहिये। जिससे अकस्थापना का रूप इस प्रकार होगा—

मिथ्यात्व	इन्द्रिय-अविरति	कायवध	कषाय	युगल	वेद	योग
१	१	१	४	२	१	३

इन अको का परस्पर गुणा करने पर सोलह बधहेतुओ के चौबीस (२४) भग होते है।

१० इन सोलह बधहेतुओ मे भय का प्रक्षेप करने पर सत्रह हेतु होते है। इनके भी चौबीस (२४) भग होते है।

२० अथवा जुगुप्सा के मिलाने पर सत्रह हेतु के भी चौबीस (२४) भग जानना चाहिये।

पूर्वोक्त सोलह हेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठारह हेतु होते हैं। इनके भी चौबीस (२४) भग जानना चाहिये और

सब मिलाकर (२४+२४+२४+२४=९६) छियानवै भग होते है। और दोनो गुणस्थानो मे अपर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के कुल मिलाकर (६४+९६=१६०) एक सौ साठ भग जानना चाहिये।

पर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के बंधहेतु के भग

पर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के जघन्यपद मे अनन्तरोक्त (ऊपर अपर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के मिथ्यात्वगुणस्थान मे कहे गये) सोलह बंधहेतु है। यहाँ मात्र औदारिक, वैक्रिय और वैक्रियमिश्र इन तीन योगो मे से अन्यतर एक योग कहना चाहिये। क्योकि पर्याप्त वादर वायुकाय मे से कितने ही जीवो के वैक्रियशरीर होता है। अत योग के स्थान पर तीन का अक रखकर इस प्रकार अकस्थापना करनी चाहिये—

मिथ्यात्व	इन्द्रिय-अविरति	कायवध	कषाय	युगल	वेद	योग
१	१	१	४	२	१	३

इन अको का क्रमश गुणा करने पर सोलह बंधहेतुओ के चौवीस (२४) भग होते है।

इन सोलह मे भय को मिलाने पर सत्रह बंधहेतु होते हैं। इनके भी चौवीस भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने से भी सत्रह बंधहेतु होते है। इनके भी चौवीस (२४) भग होते है।

उक्त सोलह हेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठारह हेतु होते है। इनके भी चौवीस (२४) भग होंगे और कुल मिलाकर (२४+२४+२४+२४=९६) छियानवै भग जानना चाहिये और अपर्याप्त, पर्याप्त वादर एकेन्द्रिय के बंधहेतुओ के कुल मिलाकर (१६०+९६=२५६) दो सौ छप्पन भग होते है।

इस प्रकार से वादर एकेन्द्रिय के बंधहेतुओ और उनके भगो का निर्देश करने के वाद अब पूर्व कथनशैली का अनुसरण करके पर्याप्त अपर्याप्त मे से पहले अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के बंधहेतु और उनके भगो का निर्देश करते हैं।

अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के वधहेतु के भग

सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त के पहला मिथ्यात्वगुणस्थान ही से जघन्यपद मे मिथ्यात्वगुणस्थानवर्ती वादर एकेन्द्रिय की सोलह वधहेतु होते है। यहाँ पूर्ववत् भग चौवीस (२४) होते है।

१ इन सोलह मे भय को मिलाने पर सत्रह हेतु होते है। इ भी चौवीस (२४) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा को मिलाने पर भी सत्रह हेतु होते हैं। इ भी चौवीस (२४) भग होगे।

उक्त सोलह हेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठा हेतु होते है। इनके भी चौवीस (२४) भग जानना चाहिये।

इस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के कुल मिलाकर (२४+२४+२४+२४=९६) छियानवै भग होते है।

पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के बधहेतु के भग

पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के जघन्यपद मे पूर्वोक्त सोलह बधहेतु होते है। यहाँ सिर्फ एक औदारिकयोग ही होता है। अतएव योग के स्थान पर एक का अक रखना चाहिये। जिससे अकस्थापना का रूप इस प्रकार होगा—

मिथ्यात्व	इन्द्रिय-अविरति	कायवध	कषाय	युगल	वेद	योग
१	१	१	४	२	१	१

इन अको का अनुक्रम से गुणा करने पर सोलह बधहेतु के आठ (८) भग होते है।

१ इन सोलह मे भय को मिलाने पर सत्रह हेतु होते है। इनके भी आठ (८) भग जानना चाहिये।

२ अथवा जुगुप्सा का प्रक्षेप करने पर भी सत्रह बधहेतु होगे। इनके भी आठ (८) भग होते हैं।

उक्त सोलह हेतुओ मे भय-जुगुप्सा को युगपत् मिलाने पर अठारह हेतु हाते हैं। इनके भी आठ (८) भग होते हैं और कुल मिलाकर

(८+८+८+८=३२) बत्तीस भग जानना चाहिये तथा अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय के कुल मिलाकर बधहेतुओ के (९६+३२=१२८) एक सौ अट्ठाईस भग होते हैं।

इस प्रकार से जीवस्थानो मे बधहेतु और उनके भगो को जानना चाहिये।

अब अन्वय-व्यतिरेक का अनुसरण करके विशेष रूप से जो कर्म-प्रकृतिया जिस बधहेतु वाली है, उनका प्रतिपादन करते है।

कर्मप्रकृतियो के विशेष बंधहेतु

सोलस मिच्छनिमित्ता बज्झहि पणतीस अविरईए य।
सेसा उ कसाएहि जोगेहि य सायवेयणीयं ॥१९॥

शब्दार्थ—**सोलस**—सोलह, **मिच्छनिमित्ता**—मिथ्यात्व के निमित्त से, **बज्झहि**—बधती है, **पणतीस**—पैंतीस, **अविरईए**—अविरति से, **य**—और, **सेसा**—शेप, **उ**—और, **कसाएहि**—कपाय द्वारा, **जोगेहि**—योग द्वारा, **य**—और, **सायवेयणीय**—सातावेदनीय।

गाथार्थ—सोलह प्रकृतिया मिथ्यात्व के निमित्त से और पैंतीस प्रकृतिया अविरति से और शेप प्रकृतिया कषाय से बधती है एव सातावेदनीय योगरूप हेतु से बधती है।

विशेषार्थ—सामान्य से मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ये चारो सभी कमप्रकृतियो के बधहेतु है। अर्थात् इन चारो हेतुओ के द्वारा सभी प्रकृतियो का प्रतिक्षण ससारी जीव के बध होता रहता है। लेकिन इन हेतुओ मे मे भी किस के द्वारा मुख्यतया कितनी-कितनी प्रकृतियो का बध हो सकता है, इस बात को गाथा मे स्पष्ट किया है—

'सोलस मिच्छनिमित्ता'—अर्थात् सोलह प्रकृतियो के बध मे मिथ्यात्वरूप हेतु की मुख्यता है। यानी मिथ्यात्व न हो और शेप उत्तरवर्ती अविरत आदि बधहेतु हो तो उन अविरति आदि उत्तर बधहेतुओ के विद्यमान रहने पर भी उनका बध नही होता है। इसी

प्रकार मे अन्य उत्तर के ववहेतुओ के लिए भी ममझना चाहिये। अतएव इस प्रकार के अन्वय-व्यतिरेक[1] का विचार करने पर नरकगति, नरकानुपूर्वी, नरकायु, एकेन्द्रिय आदि जातिचतुष्क, मिथ्यात्व, नपु सकवेद, हुडसस्थान, सेवार्तमहनन, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण और अपर्याप्तनाम ये सोलह प्रकृतिया मिथ्यात्वरूप हेतु के विद्यमान रहने पर ही वधती है और मिथ्यात्वरूप हेतु के अभाव मे नही वधती हैं।

उक्त सोलह प्रकृतिया मिथ्यात्वगुणस्थान मे वधती हैं और मिथ्यात्वगुणस्थान मे मिथ्यात्व आदि योग पर्यन्त चारो ववहेतु होते है। अतएव इन सोलह प्रकृतियो के वध मे अविरति आदि हेतुओ का भी उपयोग होता है लेकिन उनके साथ अन्वय व्यतिरेक सम्वन्ध घटित नही होता है, मिथ्यात्व के साथ ही घटित होता है। क्योकि जहाँ तक मिथ्यात्व रूप हेतु है, वही तक ये प्रकृतिया वधती है। इसलिए इन सोलह प्रकृतियो के बध मे मिथ्यात्व मुख्य हेतु है और अविरति आदि गौण हेतु है। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझना चाहिये। अतएव

'पणतीस अविरईए य'—अर्थात् स्त्यानर्द्धित्रिक, स्त्रीवेद, अनन्तानुबधिकषायचतुष्क, तिर्यचत्रिक, पहले और अन्तिम को छोडकर शेष मध्य के चार सस्थान, आदि के पाच सहनन, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, अनादेय, दु स्वर, नीचगोत्र, अप्रत्याख्यानावरणकषायचतुष्क, मनुष्यत्रिक और औदारिकद्विक रूप पैंतीस प्रकृतिया अविरति के निमित्त से बधती है। यानी इन प्रकृतियो के बध का मुख्य हेतु अविरति है तथा 'सेसा उ कसाएहिं'—शेष प्रकृतिया यानी सातावेदनीय के विना शेष अडसठ प्रकृतिया कषाय द्वारा बधती है। क्योकि कषाय के साथ अन्वय-व्यतिरेक घटित होने से इन अडसठ प्रकृतियो

---

१ कारण के सद्‌भाव मे कार्य के सद्‌भाव को अन्वय और कारण के अभाव मे कार्य के अभाव को व्यतिरेक कहते है।

की कषाय मुख्य बधहेतु है तथा 'जोगहि य सायवेयणीय' अर्थात् जहाँ तक योग पाया जाता है, वहाँ तक सातावेदनीय का बध होता है और योग के अभाव मे बध नही होने से सातावेदनीय का योग बध-हेतु है।[1]

इस प्रकार से बधयोग्य एक सौ बीस प्रकृतियो के बध मे सामान्य से तत्तत् बधहेतु की मुख्यतया जानना चाहिये। लेकिन तीर्थंकरनाम और आहारकद्विक इन तीन प्रकृतियो के बधहेतुओ मे कुछ विशेषता होने से अब आगे की गाथा मे तद्‌विषयक स्पष्टीकरण करते है—

तित्थयराहाराण बधे सम्मत्तसंजमा हेऊ।
पयडीपएसबधा जोगेहिं कसायओ इयरे ॥२०॥

शब्दार्थ—**तित्थयराहाराण**—तीर्थंकर और आहारकद्विक के, **बधे**—बध मे, **सम्मत्तसजमा**—सम्यक्त्व और सयम, **हेऊ**—हेतु **पयडीपएसबधा**—प्रकृति और प्रदेश बध, **जोगेहिं**—योग द्वारा, **कसायओ**—कषाय द्वारा, **इयरे**—इतर—स्थिति और अनुभाग बध।

गाथार्थ—तीर्थंकर और आहारकद्विक के बध मे सम्यक्त्व और सयम हेतु है तथा प्रकृतिबध एव प्रदेशबध योग द्वारा तथा इतर—स्थिति और अनुभाग बध कषाय द्वारा होते है।

विशेषार्थ—यद्यपि पूर्वगाथा मे 'सेसा उ कसाएहिं' पद से तीर्थंकर-नाम और आहारकद्विक—आहारकशरीर, आहारक-अगोपाग इन तीन प्रकृतियो के बधहेतुओ का भी कथन किया जा चुका है कि शेष रही प्रकृतियो का बध कषायनिमित्तक है और उन शेष रही प्रकृतियो मे इन तीनो प्रकृतियो का भी समावेश हो जाता है। लेकिन ये तीनो

---

१ कर्मग्रन्थ टीका मे सोलह का हेतु मिथ्यात्व को, पैंतीस का हेतु मिथ्यात्व और अविरति इन दो को, पैंसठ का योग के विना मिथ्यात्व, अविरति, कषाय इन तीन को और सातावेदनीय का मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग इन चारो को बधहेतु बताया है।

प्रकृतिया विशिष्ट है, अत इनके वध मे कषाय के साथ विशेष निमित्तान्तर की अपेक्षा होने से पृथक् निर्देश किया है—

तीर्थंकरनाम और आहारकद्विक के वध मे अनुक्रम से सम्यक्त्व तथा सयम हेतु है । यानी तीर्थंकरनाम के वध मे सम्यक्त्व और आहारकद्विक के बध मे सयम हेतु है ।

उक्त कथन मे तीर्थंकरनामकर्म का वध सम्यक्त्व और आहारकद्विक का सयम सापेक्ष मानने पर जिज्ञासु अपना तर्क प्रस्तुत करता है—

शका—यदि आप सम्यक्त्व को तीर्थंकरनामकर्म का वधहेतु कहते है तो क्या औपशमिक सम्यक्त्व हेतु है अथवा क्षायिक है या क्षायोपशमिक है ? लेकिन इन तीनो मे दोषापत्ति है। जो इस प्रकार जानना चाहिये—

यदि तीर्थंकरनामकर्म के बंध मे औपशमिक सम्यक्त्व को वधहेतु के रूप मे माना जाये तो उपशातमोह नामक ग्यारहवें गुणस्थान मे भी औपशमिक सम्यक्त्व का सद्भाव होने से वहाँ भी तीर्थंकरनामकर्म का बध मानना पड़ेगा ।

यदि क्षायिक सम्यक्त्व को वधहेतु कहो तो सिद्धो मे भी उसके वध का प्रसग सम्भव मानना पडेगा । क्योकि उनके क्षायिक सम्यक्त्व ही पाया जाता है ।

यदि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कहो तो अपूर्वकरणगुणस्थान के प्रथम समय मे उसके बधविच्छेद का प्रसग उपस्थित होगा । क्योकि उस समय क्षायोपशमिक सम्यक्त्व नही होता है और तीर्थंकरनामकर्म के वध का विच्छेद तो अपूर्वकरण गुणस्थान के छट्ठे भाग मे होता है ।

इसलिए कोई भी सम्यक्त्व तीर्थंकरनामकर्म का बधहेतु नही माना जा सकता है ।

इसी प्रकार आहारकद्विक का बधहेतु सयम कहा जाये तो क्षीण-मोह आदि गुणस्थानो मे भी उसके बध का प्रसग प्राप्त होगा। क्योकि वहाँ विशेषत अतिनिर्मल चारित्र का सद्भाव है किन्तु वहाँ बध तो होता नही है। अतएव आहारकद्विक का सयम बधहेतु नही माना जा सकता है।

समाधान—उक्त शका का समाधान करते हुए आचार्यश्री समग्र स्थिति को स्पष्ट करते है—

हमारे अभिप्राय को न समझ सकने के कारण उक्त तर्क असगत है। क्योकि 'तित्थयराहाराण बधे सम्मत्तसजमा हेऊ' पद द्वारा साक्षात् सम्यक्त्व और सयम ही मात्र तीर्थंकर और आहारकद्विक के बधहेतु रूप मे नही कहे है, किन्तु सहकारी कारणभूत[1] विशेषहेतु रूप मे उनका निर्देश किया है। मूल कारण तो इन दोनो का कषायविशेष ही है। जैसा कि पूर्व मे कहा जा चुका है—'सेसा उ कसाएहि'—शेष प्रकृतियो का कषायरूप बधहेतु के द्वारा बध होता है और तीर्थंकर-नामकर्म के बध मे हेतुरूप से होने वाली कषाय औपशमिक आदि किसी भी सम्यक्त्वरहित होती नहीं हैं। अर्थात् औपशमिक आदि किसी भी सम्यक्त्व से रहित मात्र कषायविशेष ही तीर्थंकरनाम के बध मे हेतुभूत नही होती है तथा औपशमिकादि किसी भी सम्यक्त्वयुक्त कषायविशेष सभी जीवो को उन प्रकृतियो के बध मे हेतु नही होती हैं और अपूर्वकरण के छठे भाग के बाद भी बधहेतु रूप मे नही होती है तथा अप्रमत्तसयतगुणस्थान से लेकर अपूर्वकरण के छठे भाग तक मे हो सम्भव कतिपय प्रतिनियत कषायविशेष ही आहारकद्विक के बध मे हेतु है।

उक्त कथन का तात्पर्य यह है कि चतुर्थ गुणस्थान मे लेकर आठवे गुणस्थान के छठे भाग तक की कषायविशेष औपशमिक आदि किसी भी सम्यक्त्व से युक्त तीर्थंकरनामकर्म के वध मे हेतु होती है और आहारकद्विक के वध मे पूर्व मे कहे गये अनुसार विशिष्ट कषाये हेतुरूप होती है। इसलिए किसी प्रकार का दोप नही है।

प्रश्न—औपशमिकादि मे से किसी भी सम्यक्त्व से युक्त जो कपाय-विशेष तीर्थंकरनामकर्म के वध मे हेतु हे, उनका क्या स्वरूप है ? अर्थात् किस प्रकार को कषायविशेप तीर्थंकरनाम के वध मे कारण है ?

उत्तर—परमात्मा के परमपवित्र और निर्दोष शासन द्वारा जगत-वर्ती जीवो के उद्धार करने की भावना आदि परमगुणो के समूहयुक्त कषायविशेष तीर्थंकरनामकर्म के बध मे कारण है। जो इस प्रकार जानना चाहिये—

भविष्य मे जो तीर्थंकर होने वाले ह, उनको औपशमिक आदि कोई भी सम्यक्त्व जव प्राप्त होता है तब उसके बल से सम्पूर्ण ससार के आदि, मध्य और अन्त भाग मे निर्गुणता का निर्णय करके यानी सम्पूर्ण ससार मे चाहे उसका कोई भी भाग हो, उसमे आत्मा को उन्नत करने वाला कोई तत्त्व नही है, ऐसा निर्णय करके उक्त आत्मा तथाभव्यत्व के योग से इस प्रकार का विचार करती है—

अहो ! यह आश्चर्य की बात है कि सकल गुणसम्पन्न तीर्थंकरो द्वारा प्ररूपित, स्फुरायमान तेज वाले प्रवचन के विद्यमान होते हुए भी सच्चा मार्ग महामोह रूप अधकार द्वारा आच्छादित, व्याप्त हो रहा है। इस गहन ससार मे मूढमति वाली आत्माये भटकती ही रहती है, इसलिए मैं इस पवित्र प्रवचन द्वारा इन जीवो को इस ससार से पार उतारूँ और इस प्रकार से विचार करके परार्थ-व्यसनी करुणादि गुणयुक्त और प्रत्येक क्षण परोपकार करने मे तत्पर वह आत्मा सदैव जिस-जिस प्रकार से भी दूसरो का उपकार हो सकता है, दूसरो का भला हो सकता है, उनका उद्धार हो सकता है, तदनुरूप प्रवृत्ति करती

अव परीषहो का कर्मोदयजन्यत्व सिद्ध करते है कि बद्धकर्मो यथायोग्य रीति से उदय होने पर साधुओ को अनेक प्रकार के परी उपस्थित होते है। अतएव उन परीपहो मे जिस-जिस कर्म का उद निमित्त है, उसको तीन गाथाओ द्वारा वतलाते है।

सयोगिकेवलीगुणस्थान मे प्राप्त परीषह

खुप्पिवासुण्हसीयाणि सेज्जा रोगो वहो मलो।
तणफासो चरीया य दसेक्कारस जोगिसु ॥२१॥

शब्दार्थ—खुप्पिवासुण्हसीयाणि—क्षुधा, पिपासा उष्ण और शीत, सेज्जा शैया, रोगो—रोग, वहो—वध, मलो—मल तणफासो—तृणस्पर्श, चरीया—चर्या य—और, दस—दश, एक्कारस—ग्यारह जोगिसु—योगी (सयोगिकेवली, गुणस्थान मे।

गाथार्थ—क्षुधा (भूख), पिपासा (प्यास), उष्ण (गरमी), शीत (सरदी), शैया, रोग, वध, मल, तृणस्पर्श, चर्या और दश ये ग्यारह परीषह सयोगिकेवलीगुणस्थान मे होते है।

विशेषार्थ—क्षुधा, पिपासा आदि बाईस परीषहो[1] मे से सयोगिकेवलीगुणस्थान मे सभव परीषहो को गाथा मे बतलाया है। कारण सहित जिनका स्पष्टीकरण नीचे किया जा रहा है।

यद्यपि गाथा मे परीषह शब्द का उल्लेख नही किया गया है, तथापि उनका प्रकरण होने से गाथागत पदो के साथ यथायोग्य रीति से जोडकर इस प्रकार आशय समझना चाहिये—

---

१ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदशमशकनान्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ।

क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दशमशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शैया, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार-पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन ये बाईस परीषह होते है।

—तत्त्वार्थसूत्र ९/९

क्षुधापरीषह, पिपासापरीषह, उष्णपरीषह, शीतपरीषह, रोग-परीषह, मलपरीषह, तृणस्पर्शपरीषह, चर्यापरीषह और दशमशक-परीषह, ये ग्यारह परीषह सामान्य श्रमणवर्ग मे ही नही अपितु केवली भगवन्तो मे भी अपना प्रभाव प्रदर्शित करते है।[1] अत कर्मोदय से इस प्रकार के परीषह जब उपस्थित हो तब मुनियो को प्रवचनोक्त विधि के अनुसार समभाव पूर्वक सहन करके उन पर विजय प्राप्त करना चाहिये। इन पर जय प्राप्त करने का मार्ग इस प्रकार है—

निर्दोष आहार की गवेषणा करने पर भी उस प्रकार का निर्दोष आहार नही मिलने से अथवा अल्प परिमाण मे प्राप्त होने से जिनकी क्षुधा (भूख) शात नही हुई है और असमय मे गोचरी हेतु गमन करने की जिनका इच्छा, आकाक्षा नही है, आवश्यक क्रिया मे किंचिन्मात्र भी स्खलना होना सह्य नही है, स्वाध्याय, ध्यान और भावना मे जिनका मन मग्न है और प्रबल क्षुधाजन्य पीडा उत्पन्न होने पर भी अनेषणीय आहार का जिन्होने त्याग किया है, ऐसे मुनिराजो का अल्पमात्र मे भी ग्लानि के बिना भूख से उत्पन्न हुई पीडा को समभाव पूर्वक सहन करना क्षुधापरीषहजय कहलाता है। इसी प्रकार से पिपासापरीषह-जय के विषय मे भी समझना चाहिये।

सूर्य की अत्यत उग्र किरणो के ताप द्वारा सूख जाने से जिनके पत्ते गिर गये है अत छाया प्राप्त करना शक्य नही रहा है, ऐसे वृक्षो वाली अटवी मे अथवा अन्यत्र कि जहाँ उग्र ताप लगता है, वहाँ जाते या रहते तथा अनशन आदि तपविशेष के कारण जिनके पेट मे अत्यत दाह उत्पन्न हुआ है एव अत्यत उष्ण और कठोर वायु के ससर्ग से तालू और गला सूख रहा है, ऐसे मुनिराजो का जीवो को पीडा न पहुचाने की भावना से अप्राशुक जल मे अवगाहन—स्नान करने के लिए उत-

१ एकादश जिने।

—तत्त्वार्थसूत्र ९/११

रने या वैसे पानी से स्नान की अथवा अकल्पनीय पानी को पीने की इच्छा नही करके उष्णताजन्य पीडा को समभाव से सहन करना उष्णपरीषहजय है ।

अत्यधिक सरदी पडने पर भी अकल्पनीय वस्त्र का त्याग और प्रवचनोक्त विधि का अनुसरण करके कल्पनीय वस्त्र का उपयोग करने वाले तथा पक्षी की तरह अपने एक निश्चित स्थान का निश्चय नही होने के कारण वृक्ष के नीचे, शून्य गृह मे अथवा इसी प्रकार के अन्य किसी स्थान मे रहते हुए वहाँ हिमकणो द्वारा अत्यत शातल पवन का सम्बन्ध होने पर भी उसके प्रतिकार के लिये अग्नि आदि के सेवन करने की इच्छा नही करने वाले मुनिराज का पूर्वानुभूत शीत को दूर करने के कारणो को याद नही करते हुए शीत से उत्पन्न पीडा को समभाव से सहन करना शीतपरीषहजय कहलाता है।

तीक्ष्ण कर्कश धार वाले छोटे-मोटे बहुत से ककडो से व्याप्त शीत अथवा उष्ण पृथ्वी पर अथवा कोमल और कठिन भेद वाले चपक आदि के पाट पर निद्रा का अनुभव करते हुए प्रवचनोक्त विधि का अनुसरण करके कठिनादि शैया से होने वाली पीडा को समभाव से सहन करना शैयापरीषहजय है।

किसी भी प्रकार का रोग होने पर हानि-लाभ का विचार करके शास्त्रोक्त विधि के अनुसार चारित्र मे स्खलना न हो, इस प्रकार की प्रतिक्रिया—औषधादि उपचार करना रोगपरीषहजय कहलाता है।

तीक्ष्ण धार वाले शस्त्र, तलवार आदि के द्वारा शरीर के चीरे जाने अथवा मुद्गर आदि शस्त्रो के द्वारा ताडना दिये जाने पर भी मारने वाले पर अल्पमात्र कुछ भी मनोविकार नही करते हुए इस प्रकार का विचार करना कि यह पूर्व मे बाधे हुए मेरे कर्मो का ही फल है, यह विचारे अज्ञानी मुझे कुछ भी हानि नही पहुचा सकते है, ये तो निमित्तमात्र हैं तथा ये लोग तो मेरे विनश्वर स्वभाव वाले शरीर मे पीडा उत्पन्न करते हैं, किन्तु मेरे ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप अतरग

गुणो को किसी भी प्रकार की पीडा नही पहुचा सकते है, इस प्रकार की भावना भाते हुए बास के छिलके उतारने के समान शरीर को छेदन-भेदन करने वाले पर समदर्शी मुनिराजो का वध मे होने वाली पीडा को समभाव मे सहन करना वधपरीषहजय कहलाता है।

जलकायिक आदि जीवो को पीडा आदि न होने देने के लिए यावज्जीवन स्नान नही करने के व्रत को धारण करने वाले, उग्र सूर्य-किरणो के ताप मे उत्पन्न पसीने के जल के सम्बन्ध मे वायु मे उडी हुई पुष्कल धूलि के लगने मे जिनका शरीर अत्यन्त मलीन हो गया है, फिर भी मन मे उस मल को दूर करने की इच्छा भी नही होती है, परन्तु सम्यग्ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप निर्मल जल के प्रवाह द्वारा कर्मरूप मैल को ही दूर करने मे जो प्रयत्नवत है, ऐसे मुनिराजो का मल मे होने वाली पीडा को समभावपूर्वक सहन करना मलपरीषहजय कहलाता है।

गच्छ मे रहने वाले अथवा गच्छ मे नही रहने वाले मुनिराजो को दर्भादि घास के उपयोग की आज्ञा है। उसमे जिनको स्वगुरु ने दर्भादि घास पर शयन करने की अनुज्ञा दी है, वे मुनिराज दर्भादि घास पर सथारा और उत्तरपट बिछाकर सो जाते है अथवा जिनके उपकरणो को चोर चुरा ले गये हैं अथवा अतिजीर्ण हो जाने से फट गये है, ऐसे मुनिराज अपने पास सथारा और उत्तरपट नही होने से दर्भादि घास बिछाकर सो जाते है। किन्तु ऐसे घास पर सोते हुए पूर्व मे अनुभव की गई मखमल आदि की शैया को स्मरण न करके उस तृण—घास के अग्र भाग आदि के चुभने से होने वाली पीडा को समभावपूर्वक सहन करना तृणस्पर्शपरीषह-विजय कहलाता है।

जिन महान आत्माओ ने बध और मोक्ष का स्वरूप जाना है, जो पवन की तरह निःसगता धारण करते है, जो देश और काल का अनुसरण करके सयमविरोधी-मार्ग मे जाने के त्याग करने वाले है तथा जो आगमोक्त मासकल्प की मर्यादा के अनुरूप विहार कर

वाले हैं, ऐसे मुनिराजो का कठोर कक्कर और काटो आदि के द्वारा पैरो मे अत्यन्त पीडा होने पर भी पूर्व मे सेवित वाहनादि मे जाने का स्मरण नही करते हुए ग्रामानुग्राम विहार करना चर्यापरीषहजय कहलाता है।

डास, मच्छर, मक्खी, खटमल, कीडा, मकोडा, विच्छू आदि जन्तुओ द्वारा पीडित होने पर भी उस स्थान से अन्यत्र नही जाकर और उन डास, मच्छर आदि जन्तुओ को किसी भी प्रकार से पीडा नही पहुचाते हुए एव बीजना आदि के द्वारा उनको दूर भी नही करते हुए उन डास, मच्छर आदि से होने वाली वाधा को समभाव से सहन करना दशपरीषहविजय है।

ये ग्यारह परीषह सयोगिकेवली भगवान को भी सम्भव है।

अब दो गाथाओ द्वारा परीषहो की उत्पत्ति मे किस कर्म का उदय हेतु है ? और कौन उनके स्वामी है ? यह बतलाते है।

परीषहोत्पत्ति मे कर्मोदयहेतुत्व व स्वामी

> **वेयणीयभवा एए पन्नानाणा उ आइमे।**
> **अट्ठमम्मि अलाभोत्थो छउमत्थेसु चोद्दस ॥२२॥**
> **निसेज्जा जायणाकोसो अरई इत्थिनग्गया।**
> **सक्कारो दसण मोहा बावीसा चेव रागिसु ॥२३॥**

शब्दार्थ—**वेयणीयभवा**—वेदनीय कर्म से उत्पन्न, **एए**—ये, **पन्नानाणा**—प्रज्ञा और अज्ञान, **उ**—और, **आइमे**—आदि के (ज्ञानावरणकर्म के), **अट्ठमम्मि**—आठवें के (अन्तराय के), **अलाभोत्थो**—अलाभ से उत्पन्न, **छउमत्थेसु**—छद्मस्थो मे, **चोद्दस**—चौदह।

निसेज्जा—निषद्या, **जायणा**—याचना, **कोसो**—आक्रोश, **अरई**—अरति, **इत्थि**—स्त्री, **नग्गया**—नग्नता, **सक्कारो**—सत्कार, **दसण**—दर्शन, **मोहा**—मोह के, **बावीसा**—बाईस, **च**—और, **एव**—ही, **रागिसु**—सरागियो मे।

गाथार्थ—ये (पूर्वोक्त ग्यारह परीषह) वेदनीयकर्म के उदय से उत्पन्न होते है और प्रज्ञा एव अज्ञान परीषह ज्ञानावरणकर्म का

उदय होने पर उत्पन्न होते है, अन्तरायकर्म का उदय होने मे अलाभ से उत्पन्न परीषह होते है। छद्मस्थ जीवो मे ये चौदह परीषह पाये जाते है।

निषद्या, याचना, आक्रोश, अरति, स्त्री, नग्नता, सत्कार और दर्शन ये आठ परीषह मोहकर्म के उदय से होते है। सरागी जीवो मे ये सभी बाईसो ही परीषह पाये जाते है।

विशेषार्थ—इन दो गाथाओ मे सभी परीषहो की उत्पत्ति का कारण एव उन-उनके स्वामियो का निर्देश किया है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

'वेयणीयभवा एए' अर्थात् पूर्वोक्त क्षुधा, पिपासा आदि ग्यारह परीषह वेदनीयकर्म से उत्पन्न होते है।[1] उक्त ग्यारह परीषह इतने सामान्य है कि सभी ससारी जीवो मे, यहाँ तक कि जो केवली भगवान इस ससार मे शरीर आदि योग सहित विद्यमान है, उनमे भी ये सम्भव है। इसी कारण ये ग्यारह परीषह सयोगिकेवलीगुणस्थान तक माने जाते है।

'पन्नानाणा उ आइमे'—ज्ञानावरणकर्म का उदय प्रज्ञा और अज्ञान परीषह के उत्पन्न होने मे हेतु है।[2] ज्ञानावरणकर्म के यथायोग्य उदय से ज्ञान का विकास, अविकास देखा जाता है। इसीलिए इन दो परीषहो की उत्पत्ति मे ज्ञानावरणकर्म का उदय हेतु बतलाया है। इनमे मे अग, उपाग, पूर्व, प्रकीर्णक आदि शास्त्रो मे विशारद एव व्याकरण, न्याय और अध्यात्म शास्त्र मे निपुण ऐसे सभी मेरे सामने सूर्य के समक्ष जुगनू को तरह निस्तेज है, इस प्रकार के अभिमानजन्य ज्ञान के आनन्द का निरास करना, त्याग करना, शमन करना प्रज्ञापरीषह-विजय कहलाता है तथा यह अज्ञ है, पशुतुल्य है, कुछ भी नही

---

१ वेदनीये शेषा। —तत्त्वार्थसूत्र ६।१६

२ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने। —तत्त्वार्थसूत्र ६।१३

समझता है आदि, इस प्रकार के तिरस्कार भरे हुए वचनो को सम्यक् प्रकार से सहन करते हुए, परम दुष्कर तपस्यादि क्रिया मे रत—सावधान और नित्य अप्रमत्तचित्त होते हुए भी मुझे अभी तक ज्ञानातिशय उत्पन्न नही होता है, इस प्रकार का विचार करना किन्तु किंचिन्मात्र भी विकलता उत्पन्न नही होने देना अज्ञानपरीषहजय कहलाता है।

'अट्ठमम्मि अलाभोत्थो' अर्थात् अन्तरायकर्म का उदय—विपाकोदय होने पर अलाभपरीषह सहन करने का अवसर प्राप्त होता है। वह इस प्रकार समझना चाहिये—

भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे विहार करते हुए सम्पत्ति की अपेक्षा बहुत से उच्च-नीच-मध्यम घरो मे भिक्षा को प्राप्त नही करके भी असक्लिष्ट मन वाले और दातार की परीक्षा करने मे निरुत्सुक होते हुए 'अलाभ मुझे उत्कृष्ट तप है' ऐसा विचार करके अप्राप्ति को अधिक गुण वाली मानकर अलाभजन्य परीषह को समभावपूर्वक सहन करना अलाभ-परीषहजय कहलाता है।

इस प्रकार पूर्व गाथा मे कहे गए ग्यारह और यहाँ बताये प्रज्ञा, अज्ञान एव अलाभ ये तीन, कुल मिलाकर चौदह परीषह छद्मस्थ-वीतराग उपशातमोह और क्षीणमोह गुणस्थान मे होते है तथा सज्वलनलोभ की सूक्ष्म किट्टियो का अनुभव करने के कारण वीतराग-छद्मस्थ सदृश जैसा होने से सूक्ष्मसपरायगुणस्थान मे भी ये चौदह परीषह होते है।[1] क्योकि सम्पूर्ण मोहनीय के क्षीण होने और अत्यन्त सूक्ष्म लोभ का उदय स्वकार्य करने मे असमर्थ होने से सूक्ष्मसपराय-गुणस्थान मे मोहनीयकर्मजन्य कोई भी परीषह नही होता है। अत दसवे गुणस्थान मे चौदह परीषहो का कथन विरुद्ध नही है।

अब शेष रहे निषद्या आदि आठ परीषहो की उत्पत्ति की कर्महेतुता बतलाते है—

---

१ सूक्ष्मसपरायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश।

—तत्त्वार्थसूत्र ९।१०

शेप रहे आठ परीषहो मे पहली परीषह है—निषद्या। निषद्या उपाश्रय को कहते है। अर्थात् 'निषीदन्ति अस्याम्' इस व्युत्पत्ति के अनुसार साधु जिसके अन्दर स्थान करते है, वह निषद्या कहलाती है। स्त्री, पशु और नपु सक मे विहीन और जिसमे पहले स्वय रहे नही ऐसे श्मशान, उद्यान, दानशाला या गुफा आदि मे वास करते हुए और सर्वत्र अपने इन्द्रियजन्य ज्ञान के प्रकाश द्वारा परीक्षित प्रदेश मे अनेक प्रकार के नियमो और क्रियाओ को करते हुए सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक पशुओ की भयकर शब्दध्वनियो—स्वर-गर्जनाओ के सुनाई देने पर भी जिनको भय उत्पन्न नही हुआ है, ऐसे मुनिराजो का उपस्थित उपसर्गो का सहन करने पूर्वक मोक्षमार्ग से च्युत न होना निषद्यापरीपहजय कहलाता है।

वाह्य और आभ्यन्तर तपोनुष्ठान मे परायण, दीन वचन और मुख पर ग्लानि का त्याग करके आहार, वसतिका—स्थान, वस्त्र, पात्र और औपधि आदि वस्तुओ को प्रवचनोक्त विधि के अनुसार याचना करते मुनिराजो का—साधु का सभी कुछ मागा हुआ होता है, अयाचित कुछ भी नही होता है, इस प्रकार का विचार करके लघुताजन्य अभिमान को सहन करना अर्थात् मेरी लघुता—हीनता दिखेगी, ऐसा जरा भी अभिमान उत्पन्न नही होने देना याचनापरीषहजय कहलाता है।

क्रोधरूप अग्नि-ज्वाला को उत्पन्न करने मे कुशल, मिथ्यात्वमोह के उदय से मदोन्मत्त पुरुपो द्वारा उच्चारित—कहे गये ईर्ष्यायुक्त, तिरस्कारजनक और निन्दात्मक वचनो को सुनने पर भी तथा उनका प्रतिकार करने मे समर्थ होने पर भी क्रोधादि कपायोदय रूप निमित्त से उत्पन्न हुए पापकर्म का विपाक अत्यन्त दुरन्त है, ऐसा चिन्तन करते हुए अल्पमात्रा मे भी कषाय को अपने हृदय मे स्थान न देना आक्रोशपरीपहविजय कहलाता है।

सूत्र (शास्त्र) के उपदेशानुसार विहार करते अथवा रहते किसी समय यदि अरति उत्पन्न हो तो भी स्वाध्याय, ध्यान, योग और भावना

रूप धर्म मे रमणता द्वारा अरति का त्याग करना अरतिपरीषहजय कहलाता है।

आराम—बगीचा, घर या इसी प्रकार के अन्य किसी एकान्त स्थान मे वास करते, युवावस्था के मद और विलास—हाव-भाव द्वारा प्रमत्त हुई, मदोन्मत्त और शुभ मन सकल्प का नाश करने वाली स्त्रियो के विषय मे भी अत्यन्त वशीभूत किया है इन्द्रियो और मन को जिन्होने ऐसे मुनिराजो का यह अशुचि से भरपूर मास का पिड है, इस प्रकार की शुभ भावना के वश उन स्त्रियो के विलास, हास्य, मृदुभाषण, विलासपूर्वक निरीक्षण और मोह उत्पन्न करे उस प्रकार की गति रूप काम के वाणो को निष्फल करना और जरा भी विकार न होने देना स्त्रीपरीषहजय कहलाता है।

नग्नता का अर्थ है नग्नत्व, अचेलकत्व और शास्त्र के उपदेश द्वारा वह अचेलकत्व अन्य प्रकार के वस्त्र को धारण करने रूप अथवा जीर्ण अल्पमूल्य वाले, फटे हुए और समस्त शरीर को नही ढाकने वाले वस्त्र को धारण करने के अर्थ मे जानना चाहिये। क्योकि वैसे वस्त्र पहने भी हो तो भी लोक मे नग्नपने का व्यवहार होता है। जैसे नदी को पार करते पुरुष ने यदि अधोवस्त्र (धोती आदि) को शिर पर लपेटा हो तो भी नग्न जैसा व्यवहार होता है तथा जिससे जीर्णवस्त्र पहन रखा हो ऐसी कोई स्त्री बुनकर से कहे कि हे बुनकर ! मुझे साडी दो, मै नगी हूँ ! उसी प्रकार जीर्ण-शीर्ण अल्पमूल्य वाले और शरीर के अमुक भाग को ढाकने वाले वस्त्रो के धारक मुनिराज भी वस्त्र सहित होने पर भी वास्तव मे अचेलक माने जाते हैं। जव ऐसा है तो उत्तम धैर्य और उत्तम सहनन से विहीन इस युग के साधुओ का भी सयम पालन करने के निमित्त शास्त्रोक्त वस्त्रो के धारण करने को अचेल-परीषह का सहन करना सम्यक् प्रकार से जानना चाहिये।

उक्त कथन को आधार बनाकर तार्किक अपनी आशका उपस्थित करता है—

प्रश्न—आपने अचेलकत्व का जो रूप बतलाया है, उस प्रकार से तो अचेलकपना औपचारिक सिद्ध हुआ। अतएव उस प्रकार के अचेलकत्व रूप परीषह का सहन करना भी औपचारिक माना जायेगा और यदि ऐसा हो तो मोक्षप्राप्ति किस प्रकार होगी ? क्योंकि उपचरित—आरोपित वस्तु वास्तविक अर्थक्रिया नही कर सकती है। जैसे कि माणवक मे अग्नि का आरोप करने मे पाकक्रिया नही होती है।

उत्तर—यदि ऐसा हो तो निर्दोष आहार का सेवन करने वाले—खाने वाले मुनि के सम्यक् प्रकार से क्षुधापरीषह का सहन करना घटित नही हो सकता है। क्यो तुम्हारे कथनानुसार तो आहार के सर्वथा त्याग से क्षुधापरीषह का सहन करना घट सकता है और यदि ऐसा माने जाये तो अरिहन्त भगवान भी क्षुधापरीषहजयी नही कहलाये। क्योंकि भगवान भी छद्मावस्था मे तुम्हारे मतानुसार निर्दोष आहार ग्रहण करते है और इस प्रकार से निर्दोष आहार लेने वाले क्षुधापरीषह के विजेता तुम्हे इष्ट नही है, किन्तु ऐसा है नही अर्थात् इष्ट है। इसलिये जैसे अनेषणीय और अकल्पनीय भोजन के त्याग से क्षुधापरीषह का सहन करना इष्ट है, इसी प्रकार महामूल्य वाले, अनेषणीय और अकल्पनीय वस्त्र के त्याग से अचेलक परीषह का सहन करना मानना चाहिये।

उक्त दृष्टिकोण को आधार बनाकर ऐसा भी नही कहना चाहिये कि यदि ऐसा है तो सुन्दर स्त्री का त्याग करके कानी-कुबडी और कुरूप अंगवाली स्त्री का उपभोग करते हुए भी स्त्रीपरीषह सहन करने का प्रसंग उपस्थित होगा। क्योंकि सूत्र मे स्त्री के उपभोग का सर्वथा निषेध किया है। किन्तु इसी प्रकार किसी भी सूत्र मे जीर्ण और अल्प मूल्य वाले वस्त्रों का प्रतिषेध नही किया है। जिससे अतिप्रसंग दोष प्राप्त नही होता है।

पुरस्कार पद ग्रहण करना चाहिये। वस्त्र, पात्र, आहार-पानी आदि देना 'सत्कार' और विद्यमान गुणो की प्रशसा करना अथवा प्रणाम, अभ्युत्थान, आसन देना आदि 'पुरस्कार' कहलाता है।

सुदीर्घकाल मे ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला महातपस्वी, स्वपर-सिद्धान्त के रहस्य का वेत्ता, वारम्वार परवादियो का विजेता होने पर भी मुझे कोई प्रणाम नही करता है, भक्ति या बहुमान नही करता है, आदरपूर्वक आसन नही देता है एव आहार-पानी और वस्त्र आदि भी नही देता है, इत्यादि प्रकार के दुष्प्रणिधान—अशुभ सकल्प का त्याग करना सत्कार-पुरस्कारपरीषहजय कहलाता है।

मै समस्त पापस्थानो का त्यागी, उत्कृष्ट तपस्या करने वाला और नि सग हूँ, फिर भी धर्म और अधर्म के फलरूप देव और नारको को देख नही सकता हूँ। इसलिये उपवास आदि महातपस्या करने वाले को प्रातिहार्यविशेष उत्पन्न होते हैं आदि कथन प्रलापमात्र है, इस प्रकार का मिथ्यात्वमोहनीय के प्रदेशोदय के द्वारा जो अशुभ अध्यवसाय होता है, उसे दर्शनपरीषह कहते हैं। उसका जय इस रीति से करना चाहिये—मनुष्यो की अपेक्षा देव परम सुखी है, वर्तमान काल मे दुषम-काल के प्रभाव से तीर्थंकर आदि महापुरुष नही है, जिससे परम सुख मे आसक्त होने से और मनुष्यलोक मे कार्य का अभाव होने से मनुष्यो को दृष्टिगोचर नही होते है और नारक अत्यत तीव्र वेदना से व्याप्त होने के कारण और पूर्व मे बाधे गये दुष्कर्मो के उदयरूप बधन द्वारा बद्ध होने से आवागमन की शक्ति से विहीन है, जिससे वे भी यहाँ आते नही हैं। दुषमकाल के प्रभाव से उत्तम सहनन नही होने से उस प्रकार के उत्कृष्ट तप करने की शक्ति मुझ मे नही है और न उस प्रकार के उत्कृष्ट भाव का उल्लास भी होता है कि जिसके द्वारा ज्ञानातिशय उत्पन्न होने से अपने-अपने स्थान मे रहे हुए देव, नारको को देखा जा सके। पूर्व के महापुरुपो मे उत्तम सहनन के कारण तपोविशेष की शक्ति और उत्तम भावना थी कि जिससे उत्पन्न हुए ज्ञानातिशय द्वारा वे सब कुछ देख सकते थे। इस प्रकार से विचार करके ज्ञानी के वचन मे रुच-

मात्र भी अश्रद्धा न करके मन को स्थिर करना दर्शनपरीषहविजय कहलाता है।

ये निषद्या आदि आठो परीषह मोहनीयकर्म के उदय से उत्पन्न होते है।[1] जो इस प्रकार से समझना चाहिये—भय के उदय से निषद्या-परीषह, मान के उदय से याचनापरीषह, क्रोध के उदय से आक्रोशपरीषह, अरति के उदय से अरतिपरीषह, पुरुषवेद के उदय से स्त्रीपरीषह, जुगुप्सामोहनीय के उदय से नाग्न्यपरीषह, लोभ के उदय से सत्कार-पुरस्कारपरीषह और दर्शनमोह के उदय से दर्शनपरीषह उत्पन्न होते है।

ये सभी पहले क्षुधापरीषह से लेकर बाईसवे दर्शनपरीषह तक बाईसो परीपह रागियो अर्थात् पहले मिथ्यात्वगुणस्थान से लेकर नौवे अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान पर्यन्त सभी जीवो मे होते है। यह कथन सामान्य मे जानना चाहिये, लेकिन विशेषापेक्षा एक-एक जीव की अपेक्षा विचार किया जाये तो एक जीव मे उन्नीस परीपह होते हे। क्योकि शीत और उष्ण, शैया, निषद्या और चर्या ये पाच परीषह परस्पर विरुद्ध होने से एक साथ नही होते हैं। इसी कारण एक जीव को एक समय मे उन्नीस परीषह होना सभव है।[2]

इस प्रकार बधहेतु नामक चतुर्थ अधिकार समाप्त हुआ। □

---

१ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ। चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः।

तत्त्वार्थसूत्र ९/१४,१५

२ एकादयो भाज्या युगपदेकोनविंशतेः।

—तत्त्वार्थसूत्र ९/१७

परिशिष्ट १

बधहेतु-प्ररूपणा अधिकार की मूल गाथाएँ

बधस्स मिच्छ अविरइ कसाय जोगा य हेयवो भणिया।
ते पच दुवालस पन्नवीस पन्नरस भेइल्ला ॥१॥
आभिग्गहियमणाभिग्गह च अभिनिवेसिय चेव।
ससइयमणाभोग मिच्छत्त पचहा होइ ॥२॥
छक्कायवहो मणइदियाण अजमो असजमो भणिओ।
इइ बारसहा सुगमो कसाय जोगा य पुव्वुत्ता ॥३॥
चउपच्चइओ मिच्छे तिपच्चओ मीससासणाविरए।
दुगपच्चओ पमत्ता उवसता जोगपच्चइओ ॥४॥
पणपन्न पन्न तियछहियचत्त गुणचत्त छक्कचउसहिया।
दुजुया य वीस सोलह दस नव नव सत्त हेऊ य ॥५॥
दस दस नव नव अड पच जइतिगे दु दुग सेसयाणेगो।
अड सत्त सत्त सत्तग छ दो दो दो इगि जुया वा ॥६॥
मिच्छत्त एक्ककायादिघाय अन्नयरअक्खजुयलुदओ।
वेयस्स कसायाण य जोगस्सणभयदुगछा वा ॥७॥
इच्चेसिमेग गहणे तस्सखा भगया उ कायाण।
जुयलस्स जुयं चउरो सया ठवेज्जा कसायाण ॥८॥
जा बायरो ता घाओ विगप्प इइ जुगवबधहेऊण।
अणबधि भयदुगछाण चारणा पुण विमज्झेसु ॥९॥
अणउदयरहिय मिच्छे जोगा दस कुणइ जन्न सो काल।
अणणुदओ पुण तदुवलगसम्मदिट्ठिस्स मिच्छुदए ॥१०॥
सासायणम्मि रूव चय वेयहयाण नियगजोगाण।
जम्हा नपुसउदय वेउव्वियमीसगो नत्थि ॥११॥

चत्तारि अविरए चय थीउदय विउव्विमीसकम्मइया।
इत्थिनपुंसगउदए ओरालियमीसगो जन्नो ॥१२॥
दोरूवाणि पमत्ते चयाहि एग तु अप्पमत्तमि।
ज इत्थिवेयउदए आहारगमीसगा नत्थि ॥१३॥
सव्वगुणठाणगेसु विसेसहेऊण एत्तिया सखा।
छायाललक्ख बासीइ सहस्स सय सत्त सयरी य ॥१४॥
सोलसट्ठारस हेऊ जहन्न उक्कोसया असन्नीण।
चोद्दसट्ठारसऽपज्जस्स सन्निणो सन्निगुणगहिओ ॥१५॥
मिच्छत्त एग चिय छक्कायवहो ति जोग सन्निम्मि।
इदियसखा सुगमा असन्निविगलेसु दो जोगा ॥१६॥
एव च अपज्जाण बायरसुहुमाण पज्जयाण पुणो।
तिण्णेक्ककायजोगा सण्णिअपज्जे गुणा तिन्नि ॥१७॥
उरलेण तिन्नि छण्ह, सरीरपज्जत्तयाण मिच्छाण।
सविउव्वेण सन्निस्स सम्ममिच्छस्स वा पच ॥१८॥
सोलस मिच्छनिमित्ता वज्झहि पणतीस अविरईए य।
सेसा उ कसाएहि जोगेहि य सायवेयणीय ॥१९॥
तित्थयराहाराण बधे सम्मत्तसजमा हेऊ।
पयडीपएसबधा जोगेहि कसायओ इयरे ॥२०॥
खुप्पिवासुण्हसीयाणि सेज्जा रोगो वहो मलो।
तणफासो चरीया य दसेक्कारस जोगिसु ॥२१॥
वेयणीयभवा एए पन्नानाणा उ आइमे।
अट्ठमंमि अलाभोत्थो छउमत्थेसु चोद्दस ॥२२॥
निसेज्जा जायणाकोसो अरई इत्थिनग्गया।
सक्कारो दसण मोहा बावीसा चेव रागिसु ॥२३॥

□□

परिशिष्ट २

१

दिगम्बर कर्मसाहित्य मे गुणस्थानापेक्षा मूल बंधप्रत्यय

सामान्य से कर्मवध के कारणो का विचार सभी कर्मसिद्धान्तवादियो ने किया है। जैन कर्मसिद्धान्त मे इन कारणो का सक्षेप और विस्तार की दृष्टि से विविध रूपो मे विवेचन किया है। इनके तीन प्रकार देखने मे आते हैं—

(क) १ मिथ्यात्व, २ अविरति, ३ प्रमाद, ४ कपाय, ५ योग,

(ख) १ मिथ्यात्व, २ अविरति, ३ कपाय, ४ योग,

(ग) १ कषाय, २ योग।

उक्त तीन प्रकारो मे से कार्मग्रन्थिक आचार्यों ने 'ख' विभाग के मिथ्यात्व, अविरति, कपाय और योग इन चार को वधहेतुओ के रूप मे माना है और मूल तथा मूल के अवान्तर भेदो की अपेक्षा गुणस्थानो और मार्गणास्थानो मे वधहेतुओ और उनके भगो की व्याख्या की है।

सामान्यतया श्वेताम्बर और दिगम्बर कर्मग्रन्थो मे बधहेतुओ और उनके भगो मे विशेप भिन्नता नही है और यदि कुछ है भी तो विवेचन करने के दृष्टिकोण की अपेक्षा से समझना चाहिए।

प्रस्तुत ग्रन्थ पचसग्रह मे जिस प्रकार से गुणस्थानो मे वधप्रत्ययो का विचार किया है, उनका तुलनात्मक अध्ययन करने के लिये दिगम्बर कर्म-साहित्य मे किये गये वधप्रत्ययो के विवेचन व भगो को यहाँ उपस्थित करते हैं। सक्षेप मे उक्त वर्णन इस प्रकार है—

मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ये चार कर्मवध के मूल कारण हैं। इनके उत्तरभेद क्रम से पाच, वारह, पच्चीस और पन्द्रह हैं। कुल मिला-कर ये सत्तावन कर्म-वधप्रत्यय होते है।

७-८ अप्रमत्तविरत और अपूर्वकरण, इन दो गुणस्थानो मे उपर्युक्त चौबीस प्रत्ययो मे से आहारकद्विक के विना शेप बाईस उत्तरप्रत्यय होते है।

९ अनिवृत्तिकरणगुणस्थान के सात भागो मे बधप्रत्ययो के होने का क्रम इस प्रकार है—

(क) प्रथम भाग मे अपूर्वकरण के बाईस प्रत्ययो मे से हास्यादि षट्क के विना सोलह प्रत्यय होते है। (ख) द्वितीय भाग मे नपुसकवेद के विना पन्द्रह, (ग) तृतीय भाग मे स्त्रीवेद के विना चौदह, (घ) चतुर्थ भाग मे पुरुषवेद के बिना तेरह, (ड) पचम भाग मे सज्वलनक्रोध के विना बारह, (च) षष्ठ भाग मे सज्वलनमान के विना ग्यारह, (छ) सप्तम भाग मे सज्वलनमाया के विना बादर लोभ सहित दस प्रत्यय होते हैं।

१० सूक्ष्मसपरायगुणस्थान मे चारो मनोयोग, चारो वचनयोग, औदारिककाययोग और सूक्ष्म सज्वलनलोभ ये दस उत्तरप्रत्यय होते हैं।

११, १२ उपशान्तमोह और क्षीणमोह इन दो गुणस्थानो मे दसवें गुणस्थान के दस उत्तरप्रत्ययो मे से सज्वलनलोभ के बिना नौ-नौ उत्तरप्रत्यय होते है।

१३ सयोगिकेवलीगुणस्थान मे प्रथम और अन्तिम दो-दो मनोयोग और वचनयोग तथा औदारिकद्विक और कार्मण काययोग ये सात उत्तरप्रत्यय होते हैं।

१४ अयोगिकेवलीगुणस्थान मे कर्मबध का कारणभूत कोई भी मूल या उत्तर प्रत्यय नही होता है।

उपर्युक्त कथन का साराशदर्शक प्रारूप इस प्रकार है—

गुणस्थान	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ प्र	अ पू	अनि	सू	उ	क्षी	स	अ
मूलप्रत्यय	४	३	३	३	५/२	२	२	२	२	२	१	१	१	०
उत्तरप्रत्यय	५५	५०	४३	४६	३७	२४	२२	२२	१६,१५,१४,१३, १२,११ १०	१०	९	९	७	०

२

दिगम्बर कर्मसाहित्य मे गुणस्थानापेक्षा उत्तर बंधप्रत्ययों के भग

दिगम्बर कर्मसाहित्यानुसार गुणस्थानो मे मूल एव उत्तर बधप्रत्ययो का विवेचन करने के पश्चात् अब गुणस्थानो की अपेक्षा एक जीव के एक समय मे सम्भव जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट बधप्रत्ययो और उनके भगो का निर्देश करते है।

एक जीवापेक्षा गुणस्थानो मे एक समय मे सम्भव जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट उत्तर बधप्रत्यय इस प्रकार है—

गुणस्थान नाम	जघन्य बधप्रत्यय	मध्यम बधप्रत्यय	उत्कृष्ट बधप्रत्यय
मिथ्यात्व	१०	११ से १७	१८
सासादन	१०	११ से १६	१७
मिश्र	६	१० से १५	१६
अविरतसम्यग्दृष्टि	६	१० से १५	१६
देशविरत	८	६ से १३	१४
प्रमत्तविरत	५	६	७
अप्रमत्तविरत	५	६	७
अपूर्वकरण	५	६	७
अनिवृत्तिकरण	२	×	३
सूक्ष्मसपराय	२	×	२
उपशान्तमोह	१	×	१
क्षीणमोह	१	×	१
सयोगिकेवली	१	×	१
अयोगिकेवली	×	×	×

उक्त प्रारूप मे जघन्य और उत्कृष्ट बधप्रत्ययो की सख्या गुणस्थानानुसार इस प्रकार समझना चाहिये कि मिथ्यात्वगुणस्थान मे जघन्य दस और उत्कृष्ट अठारह बधप्रत्यय होते है और इन दोनो की अन्तरालवर्ती सख्या ११ से १७ मध्यम बधप्रत्ययो रूप है। इसी प्रकार से दूसरे आदि आगे के गुणस्थानो के मध्यम बधप्रत्ययो के लिए जानना चाहिये।

गुणस्थानो मे बधप्रत्ययो के एकसयोगी, द्विसयोगी आदि सयोगी भगो का करणसूत्र इस प्रकार है—

जिस विवक्षित राशि के भग निकालना हो, उस विवक्षित राशि प्रमाण को लेकर एक-एक कम करते एक के अक तक अको को स्थापित करना चाहिए और उसके नीचे दूसरी पक्ति मे एक के अक से लेकर विवक्षित राशि के प्रमाण तक अक लिखना चाहिये। पहली पक्ति के अको को अश या भाज्य और दूसरी पक्ति के अको को हार (हर) या भागाहार कहते है।

ये भग भिन्नगणित के अनुसार निकाले जाते है, अत क्रम से स्थापित पहले भाज्यो के साथ अगले भाज्यो का और पहले भागाहारो के साथ अगले भागाहारो का गुणा करना चाहिये। पुन भाज्यो के गुणा करने से जो राशि प्राप्त हो, उसमे भागाहारो के गुणा करने से प्राप्त राशि का भाग देना चाहिये और इस प्रकार जो प्रमाण आये, तत्प्रमाण ही विवक्षित स्थान के भग जानना चाहिये।

इस नियम के अनुसार कायवध सम्बन्धी सयोगी भगो को स्पष्ट करते हैं—

आदि के चार गुणस्थानो मे षट्कायिक जीवो का वध सम्भव है। अतएव छह, पाच, चार, तीन, दो और एक इन भाज्य अको को क्रम से लिखकर पुन उनके नीचे एक, दो, तीन, चार, पाच और छह इन भागाहार अको को लिखना चाहिए। जिससे इनका प्रारूप इस प्रकार होगा—

भाज्यराशि	६	५	४	३	२	१
हारराशि	१	२	३	४	५	६

यहाँ पर पहली भाज्यराशि छह मे पहली हारराशि एक का भाग देने से छह आते हैं। जिसका अर्थ यह हुआ कि एकसयोगी भगो का प्रमाण छह होता है। पहली भाज्यराशि छह का अगली भाज्यराशि पाच से गुणा करने पर

गुणनफल तीस हुआ तथा पहली हारराशि एक का अगली हारराशि दो से गुणा करने पर हारराशि का प्रमाण दो हुआ। इस दो हारराशि का भाज्यराशि तीस मे भाग देने पर भजनफल पन्द्रह आया। जो द्विसयोगी भगो का प्रमाण है। इसी क्रम से त्रिसयोगी भगो का प्रमाण बीस चतुसयोगी भगो का पन्द्रह, पचसयोगी भगो का छह और षट्सयोगी भगो का प्रमाण एक होगा। इन सयोगी भगो की अकसदृष्टि इस प्रकार होगी—

१	२	३	४	५	६
६	१५	२०	१५	६	१

इसी करणसूत्र के अनुसार अन्य बधप्रत्ययो के भी भग प्राप्त कर लेना चाहिए।

अब मिथ्यात्व आदि गुणस्थानो के बधहेतु और उनके भगो का निर्देश करते हैं।

मिथ्यात्वगुणस्थान—इस गुणस्थान मे दस से लेकर अठारह तक बध-प्रत्यय होते हैं। यथाक्रम से बधप्रत्यय और उनके भग इस प्रकार है—

जो अनन्तानुबधी की विसयोजना करके सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व को छोडकर मिथ्यात्वगुणस्थान को प्राप्त होता है, उसके एक आवली मात्र काल तक अनन्तानुबधिकषायो का उदय नही होता है तथा सम्यक्त्व को छोडकर मिथ्यात्व को प्राप्त होने वाले जीव का अन्तर्मुहूर्त काल तक मरण नही होता है। अतएव इस नियम के अनुसार मिथ्यादृष्टि के एक समय मे पाच मिथ्यात्वो मे से एक मिथ्यात्व, पाच इन्द्रियो मे से एक इन्द्रिय, छह कायो मे से एक काय, अनन्तानुबधी के बिना शेष कषायो मे से क्रोधादि तीन कषाय, तीन वेदो मे से कोई एक वेद, हास्यादि दो युगलो मे से कोई एक युगल और आहारकद्विक तथा अपर्याप्तकालभावी तीन मिश्र योग, इन पाच योगो के बिना पन्द्रह योगो मे से शेष रहे दस योगो मे से कोई एक योग, इस प्रकार जघन्य से दस बधप्रत्यय होते है। जिनकी अकस्थापना का प्रारूप इस प्रकार है—

मि०	इ०	का०	क०	वे०	हा०	यो०
१	१	१	३	१	२	१=१०

उक्त प्रारूप मे जघन्य और उत्कृष्ट वधप्रत्ययो की सख्या गुणस्थानानुसार इस प्रकार समझना चाहिये कि मिथ्यात्वगुणस्थान मे जघन्य दस और उत्कृष्ट अठारह वधप्रत्यय होते है और इन दोनो की अन्तरालवर्ती सख्या ११ से १७ मध्यम वधप्रत्ययो रूप है। इसी प्रकार से दूसरे आदि आगे के गुणस्थानो के मध्यम वधप्रत्ययो के लिए जानना चाहिये।

गुणस्थानो मे वधप्रत्ययो के एकसयोगी, द्विसयोगी आदि सयोगी भगो का करणसूत्र इस प्रकार है—

जिस विवक्षित राशि के भग निकालना हो, उस विवक्षित राशि प्रमाण को लेकर एक-एक कम करते एक के अक तक अको को स्थापित करना चाहिए और उसके नीचे दूसरी पक्ति मे एक के अक से लेकर विवक्षित राशि के प्रमाण तक अक लिखना चाहिये। पहली पक्ति के अको को अश या भाज्य और दूसरी पक्ति के अको को हार (हर) या भागाहार कहते है।

ये भग भिन्नगणित के अनुसार निकाले जाते हैं, अत क्रम से स्थापित पहले भाज्यो के साथ अगले भाज्यो का और पहले भागाहारो के साथ अगले भागाहारो का गुणा करना चाहिये। पुन भाज्यो के गुणा करने से जो राशि प्राप्त हो, उसमे भागाहारो के गुणा करने से प्राप्त राशि का भाग देना चाहिये और इस प्रकार जो प्रमाण आये, तत्प्रमाण ही विवक्षित स्थान के भग जानना चाहिये।

इस नियम के अनुसार कायवध सम्वन्धी सयोगी भगो को स्पष्ट करते हैं—

आदि के चार गुणस्थानो मे षट्कायिक जीवो का वध सम्भव है। अतएव छह, पाच, चार, तीन, दो और एक इन भाज्य अको को क्रम से लिखकर पुन उनके नीचे एक, दो, तीन, चार, पाच और छह इन भागाहार अको को लिखना चाहिए। जिससे इनका प्रारूप इस प्रकार होगा—

भाज्यराशि	६	५	४	३	२	१
हारराशि	१	२	३	४	५	६

यहाँ पर पहली भाज्यराशि छह मे पहली हारराशि एक का भाग देने से छह आते हैं। जिसका अर्थ यह हुआ कि एकसयोगी भगो का प्रमाण छह होता है। पहली भाज्यराशि छह का अगली भाज्यराशि पाच से गुणा करने पर

गुणनफल तीस हुआ तथा पहली हारराशि एक का अगली हारराशि दो से गुणा करने पर हारराशि का प्रमाण दो हुआ। इस दो हारराशि का भाज्यराशि तीस मे भाग देने पर भजनफल पन्द्रह आया। जो द्विसयोगी भगो का प्रमाण है। इसी क्रम से त्रिसयोगी भगो का प्रमाण बीस चतु सयोगी भगो का पन्द्रह, पचसयोगी भगो का छह और षट्सयोगी भगो का प्रमाण एक होगा। इन सयोगी भगो की अकसदृष्टि इस प्रकार होगी—

१	२	३	४	५	६
६	१५	२०	१५	६	१

इसी करणसूत्र के अनुसार अन्य बधप्रत्ययो के भी भग प्राप्त कर लेना चाहिए।

अब मिथ्यात्व आदि गुणस्थानो के बधहेतु और उनके भगो का निर्देश करते हैं।

मिथ्यात्वगुणस्थान—इस गुणस्थान मे दस से लेकर अठारह तक बध-प्रत्यय होते हैं। यथाक्रम से बधप्रत्यय और उनके भग इस प्रकार हैं—

जो अनन्तानुबधी की विसयोजना करके सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व को छोडकर मिथ्यात्वगुणस्थान को प्राप्त होता है, उसके एक आवली मात्र काल तक अनन्तानुबधिकषायो का उदय नही होता है तथा सम्यक्त्व को छोडकर मिथ्यात्व को प्राप्त होने वाले जीव का अन्तर्मुहूर्त काल तक मरण नही होता है। अतएव इस नियम के अनुसार मिथ्यादृष्टि के एक समय मे पाच मिथ्यात्वो मे से एक मिथ्यात्व, पाच इन्द्रियो मे से एक इन्द्रिय, छह कायो मे से एक काय, अनन्तानुबधी के बिना शेष कषायो मे से क्रोधादि तीन कषाय, तीन वेदो मे से कोई एक वेद, हास्यादि दो युगलो मे से कोई एक युगल और आहारकद्विक तथा अपर्याप्तकालभावी तीन मिश्र योग, इन पाच योगो के बिना पन्द्रह योगो मे से शेष रहे दस योगो मे से कोई एक योग, इस प्रकार जघन्य से दस बधप्रत्यय होते हैं। जिनकी अकस्थापना का प्रारूप इस प्रकार है—

मि०	इ०	का०	क०	वे०	हा०	यो०
१	१	१	३	१	२	१=१०

इन दस वधप्रत्ययों के भग तेतालीस हजार दो सौ (४३२००) होते हैं। उनके निकालने का प्रकार यह है—

पाच मिथ्यात्व, छह इन्द्रियो, छह काय, चारो कपाय, तीन वेद, हास्यादि एक युगल और दस योग, इन्हे क्रम से स्थापित करके परस्पर मे गुणा करने पर जघन्य दस वधप्रत्ययो के भग सिद्ध होते हैं। जो इस प्रकार है—

५×६×६×४×३×२×१०=४३२००।

ग्यारह वधप्रत्यय बनने के तीन विकल्प हैं। यथाक्रम से वे इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कपाय तीन, वेद एक हास्यादि युगल एक और योग एक, कुल मिलाकर ११ ग्यारह वधप्रत्यय होते हैं। जिनका अकानुरूप प्रारूप इस प्रकार होगा—

१+१+२+३+१+२+१=११।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस तरह कुल ग्यारह वधप्रत्यय होते हैं। जिनकी अकसदृष्टि इस प्रकार होगी—

१+१+१+४+१+२+१=११।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भय-जुगुप्सा मे से एक और योग एक, ये कुल मिलाकर ग्यारह वघप्रत्यय होते हैं। जिनका अकन्यास का प्रारूप इस प्रकार जानना चाहिये—

१+१+१+३+१+२+१+१=११।

उपर्युक्त ग्यारह वधप्रत्ययो के तीनो विकल्पो के भग परस्पर मे गुणा करने पर इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) ५×६×१५×४×३×२×१०=१०८००० भग होते हैं।

(ख) ५×६×६×४×३×२×१३=५६१६० भग होते हैं।

(ग) ५×६×६×४×३×२×२×१०=८६४०० भग होते हैं।

इन तीनो विकल्पो के भगो के प्रमाण को जोडने पर (१०८०००+५६१६०+८६४००=२५०५६०) ग्यारह वधप्रत्ययो के सर्व भगो का प्रमाण दो लाख पचास हजार पाच सौ साठ होता है।

इस प्रकार से मिथ्यात्वगुणस्थान सम्बन्धी ग्यारह बंधप्रत्यय और उनके भंग हैं। अब बारह बंधप्रत्ययों और उनके भंगों को बतलाते हैं।

बारह बंधप्रत्यय बनने के पांच विकल्प हैं। यथाक्रम से वे इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार कुल मिलाकर बारह बंधप्रत्यय होते हैं। अंकन्यास का प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+३+३+१+२+१=१२।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, योग एक इस प्रकार कुल मिलाकर बारह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+४+१+२+१=१२।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक में से एक और योग एक, इस प्रकार बारह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकरचना का प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+२+३+१+२+१+१=१२।

(घ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक में से एक और योग एक, इस प्रकार बारह बंधप्रत्यय होते हैं। जो अंकन्यास से इस प्रकार हैं—

१+१+१+४+१+२+१+१=१२।

(ङ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल (भय, जुगुप्सा) एक और योग एक, इस प्रकार बारह बंधप्रत्यय होते हैं। जिनकी अंकदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+१+३+१+२+२+१=१२।

उपर्युक्त बारह बंधप्रत्ययों के पांचों विकल्पों के भंग इस प्रकार होते हैं—

(क) ५×६×२०×४×३×२×१०=१४४००० भंग होते हैं।

(ख) ५×६×१५×४×३×२×१३=१४०४०० भंग होते हैं।

(ग) ५×६×१५×४×३×२×२×१०=२१६००० भंग होते हैं।

(घ) ५×६×६×४×३×२×२×१३=११२३२० भंग होते हैं।

(ङ) ५×६×६×४×३×२×२×१०=४३२०० भंग होते हैं।

उक्त पाचो विकल्पो के भगो के प्रमाण को जोडने पर (१४४०००+१४०४००+२१६०००+११२३२०+४३२०८=६५५६२०) बारह बध-प्रत्यय सम्बन्धी सर्व भगो का प्रमाण छह लाख पचपन हजार नौ सौ वीस होता है।

अब तेरह बधप्रत्यय और उनके भगो को बतलाते है।

तेरह बधप्रत्यय बनने के छह विकल्प है। जिनका विवरण इस प्रकार है—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार तेरह बधप्रत्यय होते है। अकन्यास पूर्वक इनका प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+४+३+१+२+१=१३ ।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय चार वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार कुल मिलाकर तेरह बध-प्रत्यय होते हैं। अको मे उनका प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+३+४+१+२+१=१३ ।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादिक कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक, योग एक, इस प्रकार तेरह बध-प्रत्यय होते हैं। जो अको मे इस प्रकार से जानना चाहिये—

१+१+३+३+१+२+१+१=१३ ।

(घ) मिथ्यात्व एक इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार भी तेरह बधप्रत्यय होते हैं। जिनकी अकरचना इस प्रकार है—

१+१+२+४+१+२+१+१=१३ ।

(ङ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार तेरह बधप्रत्यय होते हैं। अको मे प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+२+३+१+२+२+१=१३ ।

(च) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक,

हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस तरह तेरह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+१+४+१+२+२+१=१३।

उपर्युक्त तेरह बंधप्रत्ययों के छह विकल्पों के भंग इस प्रकार हैं—

(क) ५×६×१५×४×३×२×१०=१०८००० भंग होते हैं।

(ख) ५×६×२०×४×३×२×१३=१८७२०० भंग होते हैं।

(ग) ५×६×२०×४×३×२×२×१०=२८८००० भंग होते हैं।

(घ) ५×६×१५×४×३×२×२×१३=२८०८०० भंग होते हैं।

(ङ) ५×६×१५×४×३×२×१०=१०८००० भंग होते हैं।

(च) ५×६×६×४×३×२×१३=५६१६० भंग होते हैं।

इन छहों विकल्पों के भंगों के प्रमाण को जोड़ देने पर तेरह बंधप्रत्ययों के कुल भंग (१०८०००+१८७२००+२८८०००+२८०८००+१०८०००+५६१६०=१०२८१६०) दस लाख अट्ठाईस हजार एक सौ साठ होते हैं।

अब चौदह बंधप्रत्ययों के विकल्पों और उनके भंगों को बतलाते हैं।

चौदह बंधप्रत्यय छह विकल्पों से बनते हैं, जो इस प्रकार हैं—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पांच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार मिलकर कुल चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+५+३+१+२+१=१४।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार से भी चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। अंकों में जिनका रूप इस प्रकार है—

१+१+४+४+१+२+१=१४।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादिक कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक में से एक और योग एक, इस प्रकार से चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+४+३+१+२+१+१=१४

(घ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि चार, वेद एक,

हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और एक योग, इस प्रकार चौदह बंध-प्रत्यय होते हैं। अको मे जिनका प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+३+४+१+२+१+१=१४।

(ङ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक भययुगल और योग एक, ये कुल मिलाकर चौदह बंधप्रत्यय होते है। अकन्यास इस प्रकार है—

१+१+३+३+१+२+२+१=१४।

(च) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार चौदह बंधप्रत्यय होते है। इनकी अकरचना इस प्रकार है—

१+१+२+४+१+२+२+१=१४।

उपर्युक्त छह विकल्पो के भग इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) ५×६×६×४×३×२×१०=४३२०० भग होते है।

(ख) ५×६×१५×४×३×२×१३=१४०४०० भग होते हैं।

(ग) ५×६×१५×४×३×२×२×१०=२१६००० भग होते हैं।

(घ) ५×६×२०×४×३×२×२×१३=३७४४०० भग होते हैं।

(ङ) ५×६×२०×४×३×२×१०=१४४००० भग होते हैं।

(च) ५×६×१५×४×३×२×१३=१४०४०० भग होते हैं।

इन चौदह बंधप्रत्यय के छह विकल्पो के कुल मिलाकर (४३२००+१४०४०० + २१६००० + ३७४४०० + १४४००० + १४०४००=१०५८४००) दस लाख अट्ठावन हजार चार सौ भग होते है।

अब पन्द्रह बंधप्रत्ययो के विकल्प और उनके भगो को बतलाते हैं।

पन्द्रह बंधप्रत्यय के छह विकल्प हैं। जो इस प्रकार हैं—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार पन्द्रह बंधप्रत्यय होते हैं। जिनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+६+३+१+२+१=१५।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, कुल मिलाकर ये पन्द्रह बंधप्रत्यय होते हैं। अंकदृष्टि इस प्रकार जानना चाहिए—

१+१+५+४+१+२+१=१५।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार पन्द्रह बंधप्रत्यय होते हैं। अंकदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+५+३+१+२+१+१=१५।

(घ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार ये पन्द्रह बंधहेतु होते हैं। अंको मे जिनका रूप इस प्रकार है—

१+१+४+४+१+२+१+१=१५।

(ङ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, कुल मिलाकर ये पन्द्रह बंधप्रत्यय होते हैं। अंकदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+४+३+१+२+२+१=१५।

(च) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये पन्द्रह बंधप्रत्यय हैं। इनकी अंको मे रचना इस प्रकार है—

१+१+३+४+१+२+२+१=१५।

उपर्युक्त पन्द्रह बंधप्रत्ययो के कुल विकल्पों के भंग इस प्रकार हैं—

(क) ५ × ६ × १ × ४ × ३ × २ × १० = ७२०० भंग होते हैं।

(ख) ५ × ६ × ६ × ४ × ३ × २ × १३ = ५६१६० भंग होते हैं।

(ग) ५ × ६ × ६ × ४ × ३ × २ × २ × १० = ८६४०० भंग होते हैं।

(घ) ५ × ६ × १५ × ४ × ३ × २ × २ × १३ = २८०८०० भंग होते हैं।

(ङ) ५ × ६ × १५ × ४ × ३ × २ × १० = १०८००० भंग होते हैं।

(च) ५ × ६ × २० × ४ × ३ × २ × १३ = १८७२०० भंग होते हैं।

इन पन्द्रह वधप्रत्यय के छह विकल्पो के कुल मिलाकर (७२००+ ५६१६०+८६४००+२८०८००+१०८००० + १८७२००=७२५७६०) सात लाख पच्चीस हजार सात सौ साठ भग होते है।

अब सोलह वधप्रत्ययो के विकल्प और उनके भगो को बतलाते हैं।

सोलह वधप्रत्ययो के पाच विकल्प हैं। जो इस प्रकार वनते हैं—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार सोलह वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+६+४+१+२+१=१६।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल मे से एक और योग एक, इस प्रकार सोलह वधहेतु होते हैं। इनकी अको मे सदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+६+३+१+२+१+१=१६।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यदि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार सोलह बंधप्रत्यय होते हैं। अको मे इनका रूप इस प्रकार है—

१+१+५+४+१+२+१+१=१६।

(घ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार सोलह वध-प्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+५+३+१+२+२+१=१६।

(ङ) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार सोलह बधप्रत्यय होते हैं। अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+४+४+१+२+२+१=१६।

इन सोलह वधप्रत्ययो के पाचो विकल्पो के भग इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) ५×६×१×४×३×२×१३=९३६० भग होते हैं।

(ख) ५×६×१×४×३×२×२×१०=१४४०० भग होते हैं।

(ग) ५×६×६×४×३×२×२×१३=११२३२० भग होते हैं।

(घ) ५×६×६×४×३×२×१०=४३२०० भग होते हैं।

(ङ) ५×६×१५×४×३×२×१३=१४०४०० भग होते है।

इन पाचो विकल्पो के सर्व भगो का जोड (९३६०+१४४००+११२३२०+४३२००+१४०४००=३१९६८०) तीन लाख उन्नीस हजार छह सौ अस्सी होता है।

अब आगे सत्रह बधप्रत्ययो के विकल्प और उनके भगो को बतलाते है।

सत्रह बधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार सत्रह बधप्रत्यय होते हैं। अकसदृष्टि के अनुसार उनका रूप इस प्रकार है—

१+१+६+४+१+२+१+१=१७।

(ख) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार ये सत्रह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+६+३+१+२+२+१=१७।

(ग) मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय पाच क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इन प्रकार सत्रह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+५+४+१+२+२+१=१७।

इन सत्रह बधप्रत्ययो के तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार जानना चाहिए—

(क) ५×६×१×४×३×२×२×१३=१८७२० भग होते हैं।

(ख) ५×६×१×४×३×२×१०=७२०० भग होते हैं।

(ग) ५×६×६×४×३×२×१३=५६१६० भंग होते हैं।

इन तीनो विकल्पो के सर्व भगो का जोड (१८७२०+७२००+५६१६०=८२०८०) बयासी हजार अस्सी होता है ।

अब अठारह बधप्रत्यय और उनके भग बतलाते है ।

अठारह बधप्रत्ययो का कोई विकल्प नही हैं। अत यह एक ही प्रकार का है। इसमे गर्भित प्रत्ययो के नाम इस प्रकार हैं—

मिथ्यात्व एक, इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, इस प्रकार अठारह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अको मे रचना इस प्रकार है—

१+१+६+४+१+२+२+१=१८।

इसके भग इस प्रकार जानना चाहिए—

५×६×१×४×३×२×१३=९३६० भग होते है ।

उपर्युक्त प्रकार से मिथ्यादृष्टिगुणस्थान मे दस से लेकर अठारह तक बधप्रत्यय और उनके विकल्पो का विवरण है। इनके सर्व भगो का विवरण इस प्रकार है—

१ दस बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—४३२००
२ ग्यारह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—२५०५६०
३ बारह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—६५५९२०
४ तेरह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—१०२८१६०
५ चौदह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—१०५८४००
६ पन्द्रह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—७२५७६०
७ सोलह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—३१९६८०
८ सत्रह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—८२०८०
९ अठारह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग—९३६०

मिथ्यादृष्टिगुणस्थान के इन सब बधप्रत्ययो के भंगो का कुल जोड ४१७३१२० है।

इस प्रकार से मिथ्यात्वगुणस्थान के बधप्रत्यय-सम्बन्धी सर्व भग जानना चाहिए। यहाँ और आगे भी बधप्रत्ययो के भगो को जानने सम्बन्धी करणसूत्र इस प्रकार जानना चाहिए—

उत्तरप्रत्ययो की अपेक्षा जो भग-विकल्प ऊपर बताये है और आगे के गुणस्थानो मे भी बताये जायेंगे, उनके लाने के लिए केवल काय-अविरति के भेदो की अपेक्षा गुणाकार रूप से सख्या-निर्देश करना पर्याप्त नही है, किन्तु उन काय-अविरति के भेदो के जो एकसयोगी, द्विसयोगी आदि भगहोते है, गुणाकार रूप से उन भगों की सख्या-निर्देश करना आवश्यक है। तभी सर्व भग-विकल्प प्राप्त होते हैं। इसी दृष्टि से ऊपर भग निकालने के प्रसग मे काय-विराधना सम्बन्धी एकसयोगी, द्विसयोगी आदि के बनने वाले भगो की सख्या का उल्लेख किया है। इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना चाहिए।

कायविराधना सम्बन्धी एकसयोगी आदि षटसंयोगी भगो के गुणाकार त्रेसठ होते हैं। जो इस प्रकार से जानना चाहिए—जब कोई जीव क्रोधादि कषायो के वश होकर षट्कायिक जीवो मे से एक-एक कायिक जीवो की विराधना करता है, तब एकसयोगी छह भग होते हैं। जब छह कायिको मे से किन्ही दो-दो कायिक जीवो की विराधना करता है तब द्विसयोगी पन्द्रह भग होते है। इसी प्रकार किन्ही तीन-तीन कायिक जीवो की विराधना करने पर त्रिसयोगी भग बीस, चार-चार की विराधना करने पर चतु सयोगी भग पन्द्रह, पाच-पाच की विराधना करने पर पचसयोगी भग छह होते हैं तथा एक साथ छहो कायिक जीवो की विराधना करने पर षट्सयोगी भग एक होता है। इस प्रकार से उत्पन्न हुये एकसयोगी आदि भगो का योग त्रेसठ होता है। जिनका कायविराधना के प्रसग मे यथास्थान उल्लेख किया है और वैसा करने पर उन बधप्रत्ययो के भगो की पूरी सख्या प्राप्त होती है।

यद्यपि इन्द्रिय और वेद आदि का सामान्य से उन-उन बंधप्रत्ययो की सख्या मे एक से उल्लेख किया है। लेकिन भगो की पूरी सख्या लाने के लिए इन्द्रिय, वेद आदि की पूरी सख्या रखने पर ही सर्व भग-विकल्प प्राप्त किये जाते है। अत भगो के प्रसग मे उनका उस रूप से निर्देश किया है।

इस प्रकार से मिथ्यात्वगुणस्थान के बधप्रत्ययो और उनके भगो तथा भग प्राप्त करने की प्रक्रिया का निर्देश करने के अनन्तर अब दूसरे आदि शेष गुणस्थानो के बधप्रत्ययो और उनके भगो को बतलाते हैं।

सासादनगुणस्थान—इस गुणस्थान मे दस से लेकर सत्रह तक वधप्रत्यय होते हैं। इस गुणस्थान की यह विशेषता है कि सासादनसम्यग्दृष्टि जीव नरकगति मे उत्पन्न नही होता है। इसलिए इस गुणस्थान वाले के यदि वैक्रियमिश्रकाययोग होगा तो देवगति की अपेक्षा से होगा। वहाँ नपुंसक वेद नहीं होता है, किन्तु स्त्रीवेद और पुरुषवेद होता है। अतएव बारह योगो के साथ तीन वेदो को जोडकर भगो की रचना होगी, किन्तु वैक्रियमिश्रकाययोग के साथ नपुसकवेद को छोडकर शेष दो वेदो की अपेक्षा भगो की रचना होगी। इस विशेषता को बतलाने के बाद अब बधप्रत्ययो और उनसे भगो को बतलाते हैं।

सासादनगुणस्थान मे जघन्य से दस बधप्रत्यय होते है। परन्तु इस गुणस्थान वाले नरकगति मे न जाने से यहाँ वैक्रियमिश्रकाययोग की अपेक्षा नपुसकवेद सम्भव न होने से इसके भगो के दो विकल्प इस प्रकार हैं—

इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार दस बधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+४+१+२+१=१०।

इनके भगो के लिए रचना दो प्रकार से होगी—

(क) ६×६×४×३×२×१२=१०३६८ भग होते हैं। बारह योगो के साथ तीन वेदो को जोडने की अपेक्षा।

(ख) ६×६×४×२×२×१=५७६ भग होते है। वैक्रियमिश्रकाययोग के साथ नपुंसकवेद छोडकर।

इन दोनो का योग (१०३६८+५७६=१०९४४) दस हजार नौ सौ चवालीस है।

अब ग्यारह बधप्रत्यय और उनके विकल्प तथा भगो को बतलाते है।

ग्यारह बधप्रत्ययो के दो विकल्प इस प्रकार जानना चाहिए—

(क) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार ग्यारह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+२+४+१+२+१=११।

(ख) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार ग्यारह बधप्रत्यय होते हैं। इनका अको मे प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+४+१+२+१+१=११ ।

इन दोनो विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१५×४×३×२×१२=२५९२० भग होते है।

६×१५×४×२×२×१=१४४० भग होते है।

(ख) ६×६×४×३×२×२×१२=२०७३६ भग होते है।

६×६×४×२×२×२×१=११५२ भग होते है?

इन ग्यारह बधप्रत्ययो सम्बन्धी भगो का कुल जोड (२५९२०+१४४०+२०७३६+११५२=४९२४८) उनचास हजार दो सौ अडतालीस होता है। इन दोनो विकल्पो के भग ऊपर बताई गई विवक्षाओ की अपेक्षा है। इसी प्रकार आगे के बधप्रत्ययो के विकल्पो के भगो के लिये समझना चाहिये।

अब बारह बधप्रत्ययो के विकल्पो और उनके भगो को बतलाते है।

बारह बधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार है—

(क) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, इस प्रकार बारह बधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+४+१+२+१=१२।

(ख) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार बारह बधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+२+४+१+२+१+१=१२ ।

(ग) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भय युगल और योग एक ये बारह बधप्रत्यय होते है। अकरचनानुसार इनका प्रारूप इस प्रकार है—

१+१+४+१+२+२+१=१२।

इन तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×२०×४×३×२×१२=३४५६० भग होते हैं।

६×२०×४×२×२×१=१९२० भग होते हैं।

(ख) ६×१५×४×३×२×२×१२=५१८४० भग होते हैं।

६×१५×४×२×२×२×१=२८८० भग होते हैं।

(ग) ६×६×४×३×२×१२=१०३६८ भग होते हैं।

६×६×४×२×२×१=५७६ भग होते हैं।

इन बारह बधप्रत्ययो के भगो का कुल जोड (३४५६०+१९२०+५१८४०+२८८०+१०३६८+५७६=१०२११४) एक लाख दो हजार एक चौदह होता है।

अब तेरह बधप्रत्यय के विकल्पो और भगो को बतलाते हैं।

तेरह बधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये तेरह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+४+१+२+१=१३।

(ख) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये तेरह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+४+१+२+१+१=१३

(ग) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल, और योग एक, इस प्रकार तेरह बधप्रत्यय होते है। इनका अको मे प्रारूप इस प्रकार है—

१+२+४+१+२+२+१=१३

इन तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार हैं—

(क) ६×१५×४×३×२×१२=२५९२० भग होते है।

६×१५×४×२×२×१=१४४० भग होते हैं।

(ख) ६×२०×४×३×२×२×१२=६६१२० भंग होते हैं।
६×२०×४×२×२×२×१=३८४० भग होते हैं।
(ग) ६×१५×४×३×२×१२=२५६२० भग होते हैं।
६×१५×४×२×२×१=१४४० भग होते है।

इन सब विकल्पो के भगो का कुल योग (२५६२०+१४४०+६६१२० +३८४०+२५६२०+१४४०=१२७६८०) एक लाख सत्ताईस हजार छह सौ अस्सी होता है।

अब चौदह बंधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को बतलाते हैं।

चौदह बंधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+५+४+१+२+१=१४।

(ख) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकरचना इस प्रकार जानना चाहिए।

१+४+४+१+२+१+१=१४।

(ग) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकरचना का प्रारूप इस प्रकार है—

१+३+४+१+२+२+१=१४।

इन चौदह बंधप्रत्ययो के विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×६×४×३×२×१२=१०३६८ भग होते हैं।
६×६×४×२×२×१=५७६ भग होते हैं।
(ख) ६×१५×४×३×२×२×१२=५१८४० भग होते हैं।
६×१५×४×२×२×२×१=२८८० भग होते हैं।
(ग) ६×२०×४×३×२×१२=३४५६० भग होते हैं।
६×२०×४×२×२×१=१६२० भग होते हैं।

इन भगो का कुल योग (१०३६८+५७६+५१८४०+२८८०+३४-५६०+१९२०=१०२१४४) एक लाख दो हजार एक सौ चवालीस होता है।

अब पन्द्रह बधहेतु के विकल्पो और भगो को बतलाते हैं।

पन्द्रह बधहेतु के तीन विकल्प इस प्रकार जानना चाहिए—

(क) इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय चार वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये पन्द्रह बधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+६+४+१+२+१=१५।

(ख) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस तरह पन्द्रह बधप्रत्यय होते हैं। इनका अको मे रूप इस प्रकार है—

१+५+४+१+२+१+१=१५।

(ग) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये पन्द्रह बधहेतु होते हैं। अको मे इनको इस प्रकार जानना चाहिए—

१+४+४+१+२+२+१=१५।

इन त्रिकल्पो के भग इस प्रकार जानना चाहिए—

(क) ६×१×४×३×२×१२=१७२८ भग होते हैं।

६×१×४×२×२×१=९६ भग होते है।

(ख) ६×६×४×३×२×२×१२=२०७३६ भग होते हैं।

६×६×४×२×२×२×१=११५२ भग होते हैं।

(ग) ६×१५×४×३×२×१२=२५९२० भग होते है।

६×१५×४×२×२×१=१४४० भग होते हैं।

इन भगो का कुल जोड (१७२८+९६+२०७३६+११५२+२५९२०+१४४०=५१०७२) इक्यावन हजार बहत्तर होता है।

अब सोलह बधहेतु के विकल्पो और भगो को बतलाते हैं।

सोलह बधप्रत्यय के दो विकल्प इस प्रकार है—

(क) इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये सोलह बधप्रत्यय होते हैं। इनके अको का प्रारूप इस प्रकार है—

१+६+४+१+२+१+१=१६।

(ख) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये सोलह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अक-सदृष्टि इस प्रकार है—

१+५+४+१+२+२+१=१६।

इन दोनो विकल्पो के भग इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) ६×१×४×३×२×२×१२=३४५६ भग होते हैं।

६×१×४×२×२×२×१=१९२ भग होते है।

(ख) ६×६×४×३×२×१२=१०३६८ भग होते हैं।

६×६×४×२×२×१=५७६ भग होते हैं।

इन विकल्पो के भगो का कुल योग (३४५६+१९२+१०३६८+५७६=१४५९२) चौदह हजार पाच सौ बानवै है।

अब सत्रह बधहेतु बतलाते हैं। इनमे कोई विकल्प नही है।

सत्रह बधहेतु इस प्रकार हैं—

इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कपाय चार, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये सत्रह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अक-सदृष्टि इस प्रकार है—

१+६+४+१+२+२+१=१७।

इसके भग इस प्रकार जानना चाहिये—

६×१×४×३×२×१२=१७२८ भग होते हैं।

६×१×४×२×२×१=९६ भग होते हैं।

इनका कुल योग (१७२८+९६=१८२४) अठारह सौ चौबीस होता है।

इस प्रकार से सासादनगुणस्थान सम्बन्धी दस से लेकर सत्रह तक के वध प्रत्ययो के कुल भग और उनके जोड का प्रमाण इस प्रकार है—

१ दस वधप्रत्यय सम्बन्धी भग=१०६४४
२ ग्यारह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग=४६२४८
३ वारह वधप्रत्यय सम्बन्धी भंग=१०२१४४
४ तेरह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग=१२७६८०
५ चौदह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग=१०२१४४
६ पन्द्रह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग=५१०७२
७ सोलह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग=१४४६२
८ सत्रह वँधप्रत्यय सम्बन्धी भग=१८२४
इन सब भगो का कुल जोड ४५६६४८ होता है।

मिश्रगुणस्थान—इस गुणस्थान मे नौ से लेकर सोलह तक वधप्रत्यय होते हैं। इस गुणस्थान मे अपर्याप्त काल सम्बन्धी औदारिकमिश्र, वैक्रिय-मिश्र और कार्मण काययोग, ये तीन योग न होने से तथा आहारद्विक योग यहाँ होते ही नही, इसलिये केवल दस योग प्रत्ययो के रूप मे ग्रहण किये जायेंगे।

जघन्य से मिश्रगुणस्थान मे इन्द्रिय एक, काय एक, अनन्तानुवधी के बिना अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन सम्बन्धी क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये नौ वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+३+१+२+१=९।

इनके भग ६×६×४×३×२×१०=८६४० होते हैं।

दस वधप्रत्यय के दो विकल्प हैं। जो इस प्रकार जानना चाहिये—

(क) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये दस वधप्रत्यय होते हैं। इनका अको मे रूप इस प्रकार है—

१+२+३+१+२+१=१०।

(ख) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस तरह दस बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+३+१+२+१+१=१०।

इन दोने विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१५×४×३×२×१०=२१६०० भग होते हैं।

(ख) ६×६×४×३×२×२×१०=१७२८० भग होते है।

इन दोनो का कुल जोड (२१६००+१७२८०=३८८८०) अडतीस हजार आठ सौ अस्सी है।

ग्यारह बंधप्रत्यय के तीन विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये ग्यारह बंध प्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+३+१+२+१=११।

(ख) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये ग्यारह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार जानना चाहिये—

१+२+३+१+२+१+१=११।

(ग) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक और योग एक, ये ग्यारह बंधप्रत्यय होते है। इनका अको मे रूप इस प्रकार है—

१+१+३+१+२+२+१=११।

इन ग्यारह बंध प्रत्ययो सम्बन्धी तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार हैं—

(क) ६×२०×४×३×२×१०=२८८०० होते हैं।

(ख) ६×१५×४×३×२×२×१०=४३२०० होते हैं।

(ग) ६×६×४×३×२×१०=८६४० होते हैं।

इनका कुल योग (२८८००+४३२००+८६४०=८०६४०) अस्सी हजार छह सौ चालीस है।

अब बारह बधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को बतलाते हैं।

बारह बधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार है—

(क) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+३+१+२+१=१२।

(ख) इन्द्रिय एक काय तीन क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+३+१+२+१+१=१२।

(ग) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कपाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+२+३+१+२+२+१=१२।

इन तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार हैं—

(क) ६×१५×४×३×२×१०=२१६०० होते है।

(ख) ६×२०×४×३×२×२×१०=५७६०० होते हैं।

(ग) ६×१५×४×३×२×१०=२१६०० होते हैं।

इन तीनो विकल्पो के भगो का कुल योग (२१६००+५७६००+२१६०० =१००८००) एक लाख आठ सौ होता है।

तेरह बधप्रत्यय के तीन विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये तेरह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+५+३+१+२+१=१३।

(ख) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये तेरह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+३+१+२+१+१=१३ ।

(ग) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल, योग एक, ये तेरह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंक-सदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+३+१+२+२+१=१३ ।

इन तीनों विकल्पों के भंग इस प्रकार हैं—

(क) ६×६×४×३×२×१०=८६४० भंग होते हैं।

(ख) ६×१५×४×३×२×२×१०=४३२०० भंग होते हैं।

(ग) ६×२०×४×३×२×१०=२८८०० भंग होते हैं।

इन तीनों विकल्पों के कुल भंगों का जोड़ (८६४०+४३२००+२८८०० =८०६४०) अस्सी हजार छह सौ चालीस होता है।

अब चौदह बंधप्रत्यय, उनके विकल्प और भंगों को बतलाते हैं।

(क) इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+६+३+१+२+१=१४ ।

(ख) इन्द्रिय एक, काय पांच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक में से एक और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय हैं। इनका अंकों में रूप इस प्रकार जानना चाहिए—

१+५+३+१+२+१+१=१४ ।

(ग) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंक-सदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+३+१+२+२+१=१४ ।

इन तीनों विकल्पों के भंग इस प्रकार हैं—

(क) ६×१×४×३×२×१०=१४४० भंग होते हैं।

(ख) ६×६×४×३×२×१×१०=१७२८० भंग होते हैं।

(ग) ६×१५×४×३×२×१०=२१६०० भंग होते हैं।

इन तीनो विकल्पो के कुल भगो का जोड (१४४०+१७२८०+२१६०० =४०३२०) चालीस हजार तीन सौ वीस है।

अव पन्द्रह वधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को वतलाते हैं।

पन्द्रह वधप्रत्ययो के दो विकल्प इस प्रकार है—

(क) इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कपाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक, और योग एक ये पन्द्रह वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार जानना चाहिए—

१+६+३+१+२+१+१=१५।

(ख) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये पन्द्रह वधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि का रूप इस प्रकार है—

१+५+३+१+२+२+१=१५।

इन दोनो विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१×४×३×२×२×१०=२८८० भग होते हैं।

(ख) ६×६×४×३×१×१०=८६४० भग होते है।

इन दोनो विकल्पो के कुल भगो का कुल जोड (२८८०+८६४०=११५२०) ग्यारह हजार पाच सौ बीस है।

अव सोलह वधप्रत्यय बतलाते हैं।

मिश्र गुणस्थान मे इन्द्रिय एक, काय छह, क्रोधादि कषाय तीन, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये सोलह वधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+६+३+१+२+२+१=१६।

इनके भग इस प्रकार है—

६×१×४×३×२×१०=१४४० भग होते हैं।

मिश्रगुणस्थान मे नौ से सोलह तक के वधप्रत्ययो के सर्व भगो का प्रमाण का विवरण और जोड इस प्रकार है—

१ नौ वधप्रत्यय सम्वन्धी भग ८६४० हैं।

२ दस वंधप्रत्यय सम्बन्धी भग ३८८८० है ।
३ ग्यारह ववप्रत्यय मम्बन्धी भग ८०६४० हैं ।
४ वारह ववप्रत्यय मम्बन्धी भग १००८०० है ।
५ तेरह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग ८०६४० हैं ।
६ चौदह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग ४०३२० है ।
७ पन्द्रह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग ११५२० हैं ।
८ सोलह वधप्रत्यय सम्बन्धी भग १४४० हैं ।

इन सर्व वधप्रत्ययो के भगो का जोड (३६२८८०) तीन लाख बासठ हजार आठ सौ अस्सी है ।

४ अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान—इस गुणस्थान मे नौ से सोलह तक वधप्रत्यय होते हैं । इस गुणस्थान के ववप्रत्ययो और उनके भगो के विषय मे यह विशेषता जानना चाहिए कि मिश्रगुणस्थान मे दस योगो की अपेक्षा जो वधप्रत्यय और उनके भग कहे हैं, अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे अपर्याप्त काल सम्बन्धी औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र और कार्मण काययोग से अधिक वे ही प्रत्यय और भग जानना चाहिये । इसका कारण यह है कि इस गुणस्थान मे अपर्याप्तकाल मे देव और नारको की अपेक्षा वैक्रियमिश्र और कार्मण काययोग तथा वद्धायुष्क तिर्यंचो और मनुष्यो की अपेक्षा औदारिकमिश्र काययोग सम्भव है । अतएव दस के स्थान पर तेरह योगो से वध होता है । जिससे भगसख्या भी योग गुणाकार के वढ जाने से वढ जाती है ।

इसके सिवाय दूमरी विशेगता यह है कि अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानवर्ती जीव यदि वद्धायुष्क नही है तो उसके वैक्रियमिश्र और कार्मण काययोग देवो मे ही मिलेंगे तथा उनके केवल पुरुपवेद ही सम्भव है । यदि वद्धायुष्क है तो वह नरकगति मे भी जायेगा और उसके वैक्रियमिश्रकाययोग के साथ नपु सकवेद भी रहेगा । इसलिये इस गुणस्थान के भगो को उत्पन्न करने के लिये तीन वेदो से, दो वेदो से और एक वेद से गुणा करना चाहिए तथा पर्याप्त काल मे सम्भव दस योगो से और अपर्याप्त काल मे सम्भव दो योगो से और एक योग से भी गुणा करना चाहिये ।

इन सब विशेपताओ को ध्यान मे रखकर अब अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान के बधप्रत्यय, उनके विकल्पो और भगो को बतलाते हैं।

अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे जघन्य से नौ बधप्रत्यय होते हैं। उनके ये भग हैं—

इन्द्रिय एक, काय एक, कषाय एक, वेद तीन, हास्ययुगल एक, योग एक ये नौ बधप्रत्यय हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार जानना चाहिये—

१+१+१+३+२+१=९। अथवा

इन्द्रिय एक, काय एक, कषाय तीन, वेद एक, हास्ययुगल एक और योग एक, ये नौ बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+३+१+२+१=९।

इन नौ प्रत्ययो के भग इस प्रकार उत्पन्न होते है। नपुसक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४=(१४४)×१×२×१=२८८।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×६×४=(१४४)×२×२×२ =११५२।

तीन वेद और दस योगो की अपेक्षा ६×६×४=(१४४)३×२× १०=८६४०।

इन सब भगो का जोड (२८८+११५२+८६४०=१००८०) दस हजार अस्सी है।

अब दस आदि बधप्रत्ययो के भग बतलाते हैं। मिश्र गुणस्थान के समान ही दस आदि बधप्रत्ययो मे प्रत्ययो की सख्या और उनके विकल्पो को जानना चाहिए। किन्तु ऊपर बताई गई विशेपता के अनुसार इस अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान मे बधप्रत्ययो के भगो मे अन्तर पड जाता है। अत उसी विशेषता के अनुसार दस से सोलह तक के बधप्रत्ययो के भगो को बतलाते हैं।

दस बधप्रत्यय सम्बन्धी भग इस प्रकार उत्पन्न होते हैं—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१× २×१=७२०।

दो वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×२×२×२=२८८० ।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×१×२×२×१=५७६ ।

दो वेद और दा योगो की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×२×२×२×२=२३०४ ।

(ग) तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा दोनो प्रकार के उत्पन्न भग—२१६००+१७२८०=३८८८० ।

दस बधप्रत्यय सम्बन्धी इन सर्व भगो का जोड (७२०+२८८०+५७६+२३०४+३८८८०=४५३६०) पैंतालीस हजार तीन सौ साठ है ।

ग्यारह बधप्रत्यय सम्बन्धी भग इस प्रकार उत्पन्न होते है—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×२०×४(=४८०)×१×२×१=९६० ।

दो वेद और दो योग की अपेक्षा ६×२०×४(=४८०)×२×२×२=३८४० ।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१×२×२×१=१४४० ।

दो वेद और दो योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×२×२×२×२=५७६० ।

(ग) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×१×२×१=२८८ ।

दो वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×२×२×१=११५२ ।

तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा तीनो प्रकार से उत्पन्न भग २८८००+४३२००+८६४०=८०६४० ।

ग्यारह बंधप्रत्ययो के सर्व भगो का कुल जोड (९६०+३८४०+१४४०+५७६०+२८८+११५२+८०६४०=९४०८०) चौरानवै हजार अस्सी होता है।

अब बारह बधप्रत्ययो सम्बन्धी भग बतलाते हैं—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१×२×१=७२०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×२×२×२=२८८०।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×२०×४(=४८०)×१×२×२×१=१९२०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×२०×४(=४८०)×२×२×२×२=७६८०।

(ग) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१×२×१=७२०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१५×४ (=३६०)×२×२×२=२८८०।

तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा से उत्पन्न भग २१६००+५७६००+२१६००=१०८०००।

बारह बधप्रत्ययो के सर्व भगो का कुल जोड (७२०+२८८०+१९२०+७६८०+७२०+२८८०+१०८०००=११७६००) एक लाख सत्रह हजार छह सौ होता है।

अब तेरह बंधप्रत्ययो सम्बन्धी भग बतलाते हैं—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×१×२×१=२८८।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×२×२×२ =११५२।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१× २×२×१=१४४०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×२×२×२ ×२=५७६०।

(ग) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×२०×४ (=४८०)×१ ×२×१=९६०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×२०×४(=४८०)×२×२× २=३८४०।

तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा तीनो प्रकार से उत्पन्न भग ८६४०+ ४३२००+२८८००=८०६४०।

तेरह बधप्रत्ययो के सर्व भगो का कुल जोड (२८८+११५२+१४४० +५७६०+९६०+३८४०+८०६४=९४०८०) चौरानवै हजार अस्सी है।

अब चौदह बधप्रत्ययो के भगो को बतलाते हैं—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१×०(=२४)×१×२ ×१=४८।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१×४(=२४)×२×२×२ =१९२।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×१×२ ×२×१=५७६।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×२×२×२ ×२=२३०४।

(ग) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×१× २×१=७२०।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१५×४(=३६०)×२×२×२=२८८० ।

तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा तीनो प्रकार से उत्पन्न भग १४४०+१७२८०+२१६००=४०३२० ।

चौदह वधप्रत्ययो के कुल भगो का जोड ४८+१९२+५७६+२३०४+७२०+२८८०+४०३२०=४७०४०) सैतालीस हजार चालीस होता है ।

अब पन्द्रह वधप्रत्ययो के भगो को वतलाते हैं—

(क) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×१×४(=२४)×१×२×२×१=९६ ।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा ६×१×४(=२४)×२×२×२×२=३८४ ।

(ख) एक वेद और एक योग की अपेक्षा ६×६×४(=१४४)×१×२×१=२८८ ।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा—६×६×४(=१४४)×२×२×२=११५२ ।

तीनो वेद और दस योगो की अपेक्षा दोनो प्रकारो से उत्पन्न भग—२८८०+८६४०=११५२० ।

पन्द्रह वधहेतुओ के कुल भगो का जोड (९६+३८४+२८८+११५२+११५२०=१३४४०) तेरह हजार चार सौ चालीस होता है ।

अब सोलह वधप्रत्ययो के भगो को बतलाते है—

एक वेद और एक योग की अपेक्षा=६×१×४(=२४)×१×२×१=४८ ।

दो वेद और दो योगो की अपेक्षा—६×१×४(=२४)×२×२×२=१९२ ।

तीन वेद और दस योगो की अपेक्षा=६×१×४(=२४)×३×२×१०=१४४० ।

सोलह वधप्रत्ययो के सर्व भगो का जोड (४८+१९२+१४४०=१६८०) सोलह सौ अस्सी है।

इस प्रकार अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान मे नौ से लेकर सोलह तक के वधप्रत्ययो के सर्व भगो का विवरण और कुल योग इस प्रकार जानना चाहिये—

१	नौ वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	१००८०
२	दस वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	४५३६०
३	ग्यारह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	९४०८०
४	वारह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	११७६००
५	तेरह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	९४०८०
६.	चौदह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	४७०४०
७	पन्द्रह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	१३४४०
८	सोलह वधप्रत्ययो सम्वन्धी भग	१६८०

इन सर्व भगो का कुल जोड (४२३३६०) चार लाख तेईस हजार तीन सौ साठ है।

(५) **देशविरतगुणस्थान**—इस गुणस्थान मे आठ से चौदह तक वंध-प्रत्यय होते हैं तथा त्रसकाय का वध यहाँ नही होने से पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यन्त पाच स्थावरकाय अविरति होती है। अतएव पूर्व मे वताये गये सयोगी भगो के करणसूत्र क अनुसार एक सयोगी पाच, द्विसयोगी दस, त्रिसयोगी दस, चतु सयोगी पाच और पचसयोगी एक भग होता है। जिनका उल्लेख काय के प्रसग मे एक दो आदि करके सम्भव भग बनाना चाहिये।

देशविरतगुणस्थान मे आठ वधप्रत्यय इस प्रकार हैं—

इन्द्रिय एक, काय एक, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये आठ वधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१+२+१=८।

इनके भग ६×५×४×३×२×९=६४८० होते हैं।

अव नौ वधप्रत्ययो सम्बन्धी भगो को बतलाते हैं—

नौ वधप्रत्यय के दो विकल्प हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कपाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये नौ वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+२+२+१+२+१=९।

(ख) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कपाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, इस प्रकार नौ वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१+२+१+१=६।

इन विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१०×४×३×२×९=१२९६० भग होते हैं।

(ख) ६×५×४×३×२×२×९=१२९६० भग होते हैं।

इन दोनो विकल्पो के कुल भगो का जोड (१२९६०+१२९६०=२५९२०) पच्चीस हजार नौ सौ वीस होता है।

अव दस बधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को बतलाते हैं।

दस वधप्रत्यय के तीन विकल्प हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कपाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये दस बधप्रत्यय होते हैं। इनका अको मे रूप इस प्रकार है—

१+३+२+१+२+१=१०।

(ख) इन्द्रिय एक, काय दो, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये दस वधप्रत्यय होते है। इनकी अको मे रचना इस प्रकार है—

१+२+२+१+२+१+१=१०।

(ग) इन्द्रिय एक, काय एक, क्रोधादि कपाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक और योग एक, ये दस वधप्रत्यय होते है। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१+२+२+१=१० ।

उक्त तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१०×४×३×२×९=१२९६० भग होते है ।

(ख) ६×१०×४×३×२×२×९=२५९२० भग होते हैं ।

(ग) ६×५×४×३×२×९=६४८० भग होते हैं ।

इन तीनो विकल्पो के कुल भगो का जोड (१२९६०+२५९२०+६४८०=४५३६०) पैंतालीस हजार तीन सौ साठ है ।

अब ग्यारह बधप्रत्यय, उनके विकल्पो व भगो को बतलाते हैं ।

ग्यारह बधप्रत्यय के तीन विकल्प इस प्रकार है—

(क) इन्द्रिय एक, काय चार क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये ग्यारह बधप्रत्यय होते हैं । इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+२+१+२+१=११ ।

(ख) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये ग्यारह बधप्रत्यय होते हैं । इनका अको मे रूप इस प्रकार है—

१+३+२+१+२+१+१=११ ।

(ग) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक और योग एक, इस प्रकार ग्यारह बधप्रत्यय होते है । इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+२+२+१+२+२+१=११ ।

उपर्युक्त ग्यारह बधप्रत्यय सम्बन्धी विकल्पो के भग इस प्रकार हैं—

(क) ६×५×४×३×२×९=६४८० भग होते हैं ।

(ख) ६×१०×४×३×२×९=२५९२० भग होते है ।

(ग) ६×१०×४×३×२×९=१२९६० भग होते हैं ।

इन सब भगो का कुल जोड (६४८०+२५९२०+१२९६०=४५३६०) पैंतालीस हजार तीन सौ साठ होता है ।

अब बारह बधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को बतलाते हैं।

बारह बधप्रत्ययो के तीन विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकरचना इस प्रकार है—

१+५+२+१+२+१=१२।

(ख) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+२+१+२+१+१=१२।

(ग) इन्द्रिय एक, काय तीन, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये बारह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+३+२+१+२+२+१=१२।

इन तीनो विकल्पो के भग इस प्रकार हैं—

(क) ६×१×४×३×२×६=१२९६ भग होते हैं।

(ख) ६×५×४×३×२×२×६=१२९६० भग होते हैं।

(ग) ६×१०×४×३×२×६=१२९६० भग होते हैं।

इन तीनो विकल्पो के कुल भगो का जोड (१२९६+१२९६०+१२९६०=२७२१६) सत्ताईस हजार दो सौ सोलह होता है।

अब तेरह बधप्रत्यय, उनके विकल्प और भगो को बतलाते हैं।

तेरह बधप्रत्ययो के दो विकल्प इस प्रकार हैं—

(क) इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भयद्विक मे से एक और योग एक, ये तेरह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+५+२+१+२+१+१=१३।

(ख) इन्द्रिय एक, काय चार, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये तेरह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंक-सदृष्टि इस प्रकार है—

१+४+२+१+२+२+१=१३।

उक्त दोनो विकल्पो के भग इस प्रकार है—

(क) ६×१×४×३×२×२×६=२५६२ भग होते हैं।

(ख) ६×५×४×३×२×६=६४८० भग होते है।

इन दोनो विकल्पो के भगो का कुल जोड (२५६२+६४८०=६०७२) नौ हजार बहत्तर होता है।

अब चौदह बंधप्रत्यय और उनके भंग बतलाते हैं।

इन्द्रिय एक, काय पाच, क्रोधादि कषाय दो, वेद एक, हास्यादि युगल एक, भययुगल और योग एक, ये चौदह बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+५+२+१+२+२+१=१४।

इनके भग इस प्रकार हैं—६×१×४×३×२×६=१२६६।

देशविरतगुणस्थान के आठ से चौदह तक के बंधप्रत्ययो के भग इस प्रकार हैं—

१ आठ बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग ६४८० होते हैं।

२ नौ बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग २५६२० होते हैं।

३ दस बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग ४५३६० होते है।

४ ग्यारह बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग ४५३६० होते हैं।

५ बारह बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग २७२१६ होते हैं।

६ तेरह बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग ६०७२ होते हैं।

७ चौदह बंधप्रत्यय सम्बन्धी भग १२६६ होते है।

इन सर्व भगो का जोड (१६०७०४) एक लाख साठ हजार सात सौ चार है।

इस प्रकार से देशविरतगुणस्थान के वधप्रत्ययो और उनके भगो का विवरण जानना चाहिये। अव प्रमत्तसयतगुणस्थान के वधप्रत्ययो का विचार करते हैं।

६ **प्रमत्तसयतगुणस्थान**—इस गुणस्थान मे पाच, छह और सात ये तीन वधप्रत्यय होते है। इस गुणस्थान की यह विशेपता है कि अप्रशस्त वेद के उदय मे आहारकऋद्धि उत्पन्न नही होने से आहारककाययोगद्विक की अपेक्षा केवल एक पुरुपवेद होता है, इतर दोनो वेद (स्त्रीवेद, नपु सकवेद) नही होते हैं। इस सूत्र के अनुसार यहाँ वधप्रत्यय जानना चाहिये।

प्रमत्तसयतगुणस्थान मे कोई एक सज्वलन कपाय, तीन वेदो मे से कोई एक वेद, हास्यादि एक युगल और (मनोयोगचतुष्क, वचनयोगचतुष्क, औदारिककाययोग इन नौ योगो मे से) एक योग, ये पाच वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१=५।

इनके भग ४×३×२×६=२१६ होते हैं। किन्तु आहारकद्विक की अपेक्षा इनके भग ४×१×२×२=१६ होते है। इन दोनो को मिलाने पर कुल भग (२१६+१६=२३२) दो सौ बत्तीस जानना चाहिए।

अव छह वधप्रत्ययो के भगो को वतलाते हैं—

कोई एक सज्वलन कपाय, तीन वेदो मे से कोई एक वेद, हास्यादि एकयुगल, भयद्विक मे से कोई एक और योग एक, ये छह वधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१+१=६।

इनके भग ४×३×२×२×६=४३२ होते हैं तथा आहारकद्विक की अपेक्षा इनके भग ४×१×२×२×२=३२ होते हैं। इन दोनो का कुल जोड (४३२+३२=४६४) चार सौ चौंसठ है।

अव सात वधप्रत्यय और उनके भगो को बतलाते हैं—

कोई एक संज्वलन कषाय, तीन वेदों में से कोई एक वेद, हास्यादि एक युगल, भययुगल और एक योग, इस तरह सात बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंक संदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+२+१=७।

इनके भंग=४×३×२×९=२१६ होते हैं तथा आहारकद्विक योग की अपेक्षा इनके भंग ४×१×२×२=१६ होते हैं।

इन दोनों का जोड़ (२१६+१६=२३२) दो सौ बत्तीस है।

इन तीनों प्रकार के बंधप्रत्ययों के भंगों का कुल जोड़ इस प्रकार जानना चाहिए—

१ पांच बंधप्रत्यय सम्बन्धी भंग २३२ होते हैं।
२ छह बंधप्रत्यय सम्बन्धी भंग ४६४ होते हैं।
३ सात बंधप्रत्यय सम्बन्धी भंग २३२ होते हैं।

इन सब भंगों का कुल जोड़ (९२८) नौ सौ अट्ठाईस है।

अब अप्रमत्तसंयत और अपूर्वकरण गुणस्थान सम्बन्धी बंधप्रत्ययों और उनके भंगों को बतलाते हैं।

७-८ अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरण गुणस्थान—इन दोनों गुणस्थानों में भी प्रमत्तसंयत गुणस्थान के समान ही पांच, छह और सात ये तीन प्रकार के बंधप्रत्यय हैं। किन्तु ये तीनों आहारकद्विक के बिना समझना चाहिए। अतएव उनके भंग इस प्रकार है—

कोई एक संज्वलन कषाय, तीन वेदों में से कोई एक वेद, हास्यादि एक-युगल और एक योग, ये पांच बंधप्रत्यय होते हैं। इनकी अंकसंदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१=५।

इनके भंग ४×३×२×९=२१६ होते हैं।

कोई एक संज्वलन कषाय, तीन वेदों में से कोई एक वेद, हास्यादि एक

युगल, भयद्विक मे से कोई एक और योग एक, ये छह बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+१+१=६।

इनके भग ४×३×२×२×९=४३२ होते हैं।

कोई एक सज्वलन कषाय, तीन वेदो मे से कोई एक वेद, हास्यादि युगल, भययुगल और एक योग, ये सात बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+२+२+१=७।

इनके भग ४×३×२×९=२१६ होते है।

इन तीनो बधप्रत्ययो के कुल भगो का जोड (२१६+४३२+२१६=८६४) आठ सौ चौंसठ है।

अब अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान के बधप्रत्यय और उनके भगो को बतलाते हैं।

९ अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान—इस गुणस्थान मे तीन और दो बधप्रत्यय होते हैं। इसका कारण यह है कि इस गुणस्थान के सवेद और अवेद ये दो विभाग हैं। अतएव सवेदभाग की अपेक्षा तीन और अवेदभाग की अपेक्षा दो बधप्रत्यय जानना चाहिए।

सवेदभाग मे चारो सज्वलन कषाय, तीनो वेद और नौ योगो मे से कोई एक-एक होने से तीन बधप्रत्यय होते है। अथवा नपुसकवेद को छोडकर शेष दो वेदो मे से कोई एक वेद अथवा केवल पुरुषवेद होता है।

इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१+१=३।

इनके भग इस प्रकार हैं—

४+३+९=१०८ भग होते हैं।

४+२+९=७२ भग होते हैं।

४+१+९=३६ भग होते है।

इन सर्व भगो का कुल जोड (१०८+७२+३६=२१६) दो सौ सोलह है।

अवेदभाग की अपेक्षा नौवें गुणस्थान मे चारो सज्वलनो मे से कोई एक कपाय तथा नौ योगो मे से कोई एक योग, ये दो बधप्रत्यय होते है। अथवा क्रोध को छोडकर शेप तीन मे से एक, मान को छोडकर शेप दो मे से एक और माया को छोडकर केवल सज्वलन लोभ यह एक कपाय होती है। इस प्रकार एक सज्वलन कपाय और एक योग ये दो जघन्य बधप्रत्यय होते हैं। इनकी अकसदृष्टि इस प्रकार है—

१+१=२।

इनके भग इस प्रकार जानना चाहिए—

४×६=३६ भग होते हैं।

३×६=२७ भग होते हैं।

२×६=१८ भग होते हैं।

१×६=६ भग होते हैं।

इस प्रकार दो बधप्रत्यय सम्बन्धी सर्वभगो का कुल जोड (३६+२७+१८+६=६०) नव्वै होता है।

तीन प्रत्यय सम्बन्धी २१६ और दो प्रत्यय सम्बन्धी ६० भगो को मिलाने पर अनिवृत्तिबादरसपरायगुणस्थान मे (२१६+६०=३०६) तीन सौ छह भग होते हैं।

अब सूक्ष्मसपराय आदि सयोगि केवलीगुणस्थान पर्यन्त के बधप्रत्यय और उनके भग बतलाते है।

१० सूक्ष्मसपरायगुणस्थान—इस गुणस्थान मे सूक्ष्म लोभ और नौ योगो मे से कोई एक योग, ये दो बधप्रत्यय होते हैं।

११, १२ उपशातमोह एव क्षीणमोह गुणस्थान—इन दोनो गुणस्थानो मे योग रूप बधप्रत्यय होने से उत्तर प्रत्यय के रूप मे नौ योगो मे से कोई एक योग रूप एक ही बधप्रत्यय होता है।

१३ **सयोगिकेवली गुणस्थान**—यहाँ भी योग रूप वधप्रत्यय होने से यहाँ पाये जाने वाले सात योगो मे से कोई एक योगरूप एक ही वधप्रत्यय होता है तथा योग का भी अभाव हो जाने से अयोगि केवली गुणस्थान मे कोई भी वध-प्रत्यय नही होता है।

सूक्ष्मसपराय आदि सयोगिकेवली पर्यन्त गुणस्थानो के वधप्रत्ययो के भग इस प्रकार है—

सूक्ष्मसपरायगुणस्थान मे २ × १ × ६ = १८ भग होते है।

उपशात, क्षीण मोह गुणस्थान मे १ × ६ = ६ भग होते हैं।

सयोगिकेवलीगुणस्थान मे १ × ७ = ७ भग होते है।

इस प्रकार तेरह गुणस्थानो मे वधप्रत्यय, विकल्प और उनके भगो को जानना चाहिए।

□□

बंधहेतु-प्ररूपणा अधिकार की
गाथा–अकाराद्यनुक्रमणिका

गाथांश	गा सं/पृ सं	गाथांश	गा सं/पृ सं
अणउदयरहिय मिच्छे	१०।४१	दो रूवाणि पमत्ते	१३।७३
अभिग्गहियमणाभिग्गह	२।६	निमेज्जा जायणाकोसो	२३।११८
इच्चेसिमेगगहणे	८।२४	पणपन्न पन्न तियछहिय	५।१४
उरलेण तिन्नि छण्ह	१८।८९	बन्धस्स मिच्छ अविरइ	१।३
एवं च अपज्जाणं	१७।८७	मिच्छत्त एक्कायादिघाय	७।२०
खुपिपासुण्हसीयाणि	२१।११४	मिच्छत्त एग चिय	१६।८३
चउ पच्चइओ मिच्छे	४।११	वेयणीयभवा एए	२२।११८
चत्तारि अविरए चय	१२।५७	सव्वगुणठाणगेसु	१४।८१
छक्कायवहो मणइंदियाण	३।९	सासायणम्मि रूवं चय	११।४७
जा बादरो ता घाओ	९।२६	सोलसट्ठारस हेऊ	१५।८२
तित्थयराहाराणं	२०।१०९	सोलस मिच्छ निमित्ता	१९।१०७
दस-दस नव-नव अड पंच	६।१८		

□□

महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

१-६ **कर्मग्रन्थ [भाग १—६] सम्पूर्ण सेट** मूल्य ७५)

जैनदर्शन की मूल कुञ्जी है—कर्म सिद्धान्त। कर्म सिद्धान्त को सम्यक्रूप मे समझने पर ही जैनदर्शन का हार्द समझा जा सकता है। कर्म-सिद्धान्त का सुन्दर व अत्यन्त प्रामाणिक विवेचन पढिए।

कर्मग्रन्थ—

मूल रचयिता श्रीमद् देवेन्द्रसूरि

व्याख्याकार श्री मरुधरकेसरी मिश्रीमलजी महाराज

सम्पादक श्रीचन्द सुराना देवकुमार जैन

७ **जैनधर्म मे तप स्वरूप और विश्लेषण :** मूल्य . १०)

(तप के सर्वांगीण स्वरूप पर शास्त्रीय विवेचन। तप सम्बन्धी अनेक चित्र)

८-१६ **प्रवचन साहित्य—**

१ प्रवचन प्रभा ५)
२ धवल ज्ञान धारा ५)
३ जीवन ज्योति ५)
४ प्रवचन सुधा ५)
५ साधना के पथ पर ५)
६ मिश्री की डलियाँ १२)
७ मित्रता की मणियाँ १५)
८ मिश्री विचार वाटिका २०)
९ पर्युषण पर्व सदेश १५)

१७-२६ **उपदेश साहित्य—**

सप्त व्यसन पर आठ महत्वपूर्ण लघु पुस्तिकाएँ

१८ सात्विक और व्यसन मुक्त जीवन १)

१९-१ विपत्तियो की जड · जुआ १)
२०-२ मासाहार . अनर्थो का कारण १)
२१-३. मानव का शत्रु मद्यपान १)
२२-४ वेश्यागमन . मानव जीवन का कोढ १)
२३-५ शिकार पापो का स्रोत १)
२४-६ चोरी अनैतिकता की जननी १)
२५-७ परस्त्री-सेवन · सर्वनाश का मार्ग १)
२६ जीवन सुधार (सयुक्त जिल्द) ८)
२७-३६ सुधर्म प्रवचन माला (दस धर्म पर १० पुस्तकें) प्रत्येक ६)
३७-३९ काव्य साहित्य ·
३७ जैन राम-यशोरसायन १५)
३८ जैन पाडव-यशोरसायन ३०)
(नवीन परिवर्द्धित तुलनात्मक भूमिका व परिशिष्ट युक्त)
३९ तकदीर की तस्वीर (काव्य)

उपन्यास व कहानी-साहित्य—

४० साझ सवेरा ४)
४१ भाग्य क्रीडा ४)
४२ धनुप और वाण ५)
४३ एक म्यान दो तलवार ४)
४४ किस्मत का खिलाडी ४)
४५ बीज और वृक्ष ४)
४६ फूल और पाषाण ५)
४७ तकदीर की तस्वीर ४)
४८ शील सौरभ ५)
४९, भविष्य का भानु ५)

अन्य साहित्य—

५० विश्व बन्धु महावीर १)

५१ तीर्थंकर महावीर १०)
५२ सकल्प और साधना के धनी श्री मरुधर केसरी मिश्रीमल जी महाराज २५)
५३. दशवैकालिक सूत्र (पद्यानुवाद) १५)
५४ श्रमणकुलतिलक आचार्य श्री रघुनाथजी महाराज २५)
५५ मिश्री काव्य कल्लोल (कविता-भजन सग्रह) २५)
प्रथम तरग १५)
द्वितीय तरग १०)
तृतीय तरग १०)

सम्पर्क करे

श्री मरुधर केसरी साहित्य प्रकाशन समिति
पीपलिया बाजार
पो० ब्यावर (राजस्थान)

स्मृति-संकेत

स्मृति-साकेत